कलकत्ता

नं० २०१ हरिसन रोडके नरसिंहप्रेसमें बाबू रामप्रताप भार्गव द्वारा

मुद्रित ।

सूचीपत्र।

१। उपक्रमणिका।

होमियोपेथी।

विषय। पृष्ठ।

औषध-प्रस्तुत-प्रकरण।

विषय। पृष्ठ।

औषधि-प्रयोग-प्रकरण।

प्लेग या महामारी।

ज्वर।

११। मूत्रयन्त्रकी पीड़ा।

१२। चर्मरोग।

१३। स्त्रीरोग।

औषधियोंके नाम	क्रम मा: ड्रा	औषधियोंके नाम	क्रम मा: ड्रा
केन्थरिस	३	लाकेसिस	३०
स्पञ्जिया	६	सेबिना	३
स्पाइजिलिया	६	डिजिटेलिस	६
वेराट्राम विर	३	कष्टिकम	३
एसिड नाइट्रिक	३०	कफिया	३
ऐण्टिम क्रूड	६	कोनायम	६
एमोनिया	३	कल्चिकम	३
केनाबिस स्येट	३	ग्रेफाइटिस	३०
थुजा	३	रुटा	३
हैमोमेलिस	३	नेट्रम मिउर	३०
ककिउलस	६	प्लेटिना	३०
डालकेमेरा	६	सिड्रन	३
इग्नेशिया	३०	नक्समस्केटा	६
सिक्यूटा	३	ग्राम्बाम	६
साइलिसिया	३०	डायस्कोरिया	६
ड्रसेरा	३	कॅक्टस	३
केल्केरिया कार्ब	३०	टॅरिफिसेथिया	६
सिमिसिफिउगा	३	स्याबाडिला	६
पोडोफाइलम	६	गोस्व का रस	६
सिपिया	३०	एपिस	३
केलिबाइक्रम	६	यूपेटोरियम पार्फ	३

भूमिका।

इस पुस्तकका प्रथम और द्वितीय संस्करण हो चुका। यह तृतीय संस्करण है। द्वितीय संस्करणकी दो हजार प्रतियां गत सन् १९१८ ई० की २५ वीं जुलाईको छपकर तय्यार हुई थीं। अब सन् १९२० ई० के इस अक्तोबर मासमें इस पुस्तकके इस तृतीय संस्करणकी दो हजार प्रतियां छपकर तय्यार हुई हैं। इसप्रकार दो वर्ष तीन मासमें इस पुस्तककी द्वितीय संस्करणकी पूरी दो हजार प्रतियां समाप्त हुई हैं। यह घटना इस पुस्तकके आदर और प्रचारका स्पष्ट प्रमाण है।

[illegible] प्रचारका बहुत बड़ा [illegible]

चिकित्सा प्रणालीमें प्रमुख अचूक औषधियोंका व्यवहारकर अभीष्ट लाभसे लाभान्वित हो सकते हैं। जो लोग इस चिकित्सा-प्रणालीका आदर करते हैं या भविष्यत्‌में करेंगे; उनके साहाय्य और सुविधाके लिये ही इस पुस्तककी रचना हुई और बारबार इसके नवीन संस्करण हो रहे हैं।

इस पुस्तकके प्रथम संस्करणकी अपेक्षा द्वितीय संस्करणमें और द्वितीय संस्करणकी अपेक्षा इस तृतीय संस्करणमें बहुतेरे नये नये रोगों और उनकी चिकित्साका वर्णन किया गया है। इस तृतीय संस्करणमें 'सन्नुपात्,' 'धारा, कुइनाइन प्रभृतिके अपव्यवहारके रोग,' 'बेरी-बेरी' आदि, कितने ही नवीन रोगों और उनकी चिकित्साकी अवतारणा की गई है। इसके फलमें इस पुस्तकके द्वितीय संस्करणकी पृष्ठ संख्याकी अपेक्षा इसके इस तृतीय संस्करणकी पृष्ठ संख्या अधिक हो गई है। वर्त्तमान यूरोपीय युद्ध जनित कागजकी महार्घतामें इस पुस्तकका यह तृतीय संस्करण निकालना ही कठिन था। तिसपर इसके पूर्व-संस्करणकी अपेक्षा इस संस्करणकी पृष्ठसंख्या वृद्धि करना और भी कठिन था। किन्तु देशके हित और होमियोपैथीके प्रचारार्थ इस दुस्समयमें भी यह प्रचुर अर्थव्यय स्वीकारकर यह कठिन [illegible]

[illegible]

इस पुस्तककी एक प्रतिका रखना एक सुदक्ष डाक्टरके रखनेके समान है। जिस मकानमें यह पुस्तक रहेगी ; उस मकानके मनुष्य थोड़े आयास और व्ययसे हर तरहकी व्याधिसे आत्मरक्षा कर सकेंगे। इसी उद्देश्यसे इस पुस्तककी रचना हुई और इसके प्रचारका यत्न किया जाता है। इस उद्देश्यकी सिद्धि होनेसे हम अपना आयास सफल समझेंगे।

कलकत्ता,
११ वीं अक्टोबर १८१० ई०। } श्रीनरेन्द्रचन्द्र भट्टाचार्य्य एल० बी०

उपक्रमणिका।

होमियोपेथी।

चिकित्साकार्य्यमें प्रवृत्त होनेसे पहले होमियोपेथीके सम्बन्धकी कितनी ही स्थूल बातोंका ज्ञान लेना आवश्यक है। इसीलिये पाठक महाशयोंसे अनुरोध है, कि वह इस 'उपक्रमणिका' विभागको मन लगा पढ़ें।

होमियोपेथी क्या है?—जो पदार्थ स्वस्थ शरीरको विकृत और विकृत शरीरको स्वस्थ कर सकता है उसे औषधि कहते हैं। स्वस्थ अवस्थामें कोई औषधि सेवन करनेसे शरीरमें जो सब लक्षण प्रकट होते हैं, वैसे ही लक्षणवाले

दिग्विजय या होमियोपेथीका विस्तार।—धन्य मोकाहिनेमा हेनिमेन! रोगोंके दूर करनेका अमोघ उपाय उद्भावितकर समग्र मानव-जातिका जो अशेष कल्याण तुमने साधन किया है, उसके स्मरणसे किसके हृदयका उच्छ्वास तुम्हारे चरणोंकी ओर प्रधावित न होगा? आज जर्मनी, फ्रान्स, अष्ट्रिया, इङ्गलैण्ड, अमेरिका, अष्ट्रेलिया प्रभृति सभी आधुनिक सभ्य देशोंने तुम्हारी बताई चिकित्साप्रणाली शिर झुका स्वीकार कर ली है। एक अमेरिका युक्तराज्य हीमें एक सो दो अस्पताल अन्यून साढ़े छः सहस्र आतुरोंको आश्रय दे बीसनादसे तुम्हारी जय-घोषणा कर रहे हैं। राजेन्द्रलालदत्त, विलायतमें बैठे भारतीय स्टेट-सिक्रेटरीकी सभाके सदस्य सय्यद हुसेन बिलग्रामी, डाक्टर बेरिनी, बङ्गालियोंके गौरव महेन्द्रलाल सरकार, मुहाम्मद ए० सुमर, बाबा ईशान्दशी प्रभृति महोदयोंके असाधारण अध्यवसायगुणसे आज बहुदेशके प्रत्येक ग्राम और नगरमें और भारतके विविध स्थानोंमें तुम्हारी जयपताका उड़ने लगी है। * औषधि-निर्वाचनका भी सरल और सुगम पथ तुम दिखा गये हो;

---

* [illegible]

पदार्थोंमें रोगनाशिनी शक्ति नहीं, इन सब वस्तुओंके साहाय्यसे औषधि प्रस्तुत और सेवित होती है, इसलिये यह सब पदार्थ 'सेवनवह' कहलाते हैं।

दो प्रकारकी औषधियाँ।—औषधिका सारभाग या रोगनाशिनी शक्ति दो तरहसे सुरक्षित की जाती है:— विचूर्ण और अरिष्ट आकारमें।

विचूर्ण।—लोहादि जो सब कठिन पदार्थ आसानीसे नहीं गलते, वह दुग्धशर्कराके मिलनेसे खलमें सूक्ष्मरूपसे चूर्ण किये जाते हैं। लोहादिका ऐसा चूर्ण ही 'विचूर्ण' (ट्रिटि-उरेसन) कहलाता है। किन्तु चूर्ण होनेसे पहले लोहादिका नाम है,— मूल औषधि' (crude drugs)।

अरिष्ट।—जड़ी बूटियोंका रस निचोड़ सुरासारके साथ मिलानेसे इस मिश्रित पदार्थको 'अरिष्ट' (टिंचर) कहते हैं। इस मिश्रणमें हुए रसमें मूल पदार्थके सभी गुण मौजूद रहते हैं। सुरासारमें मिल जानेके कारण यह रस सिर्फ बहुत समयतक स्थिर रहता है। इसीलिये अरिष्टको 'मूल अरिष्ट' (मदर टिंचर) भी कहते हैं।

क्रम। मूल औषध या मूल अरिष्ट' दुग्धशर्करा या सुरासारके मिलनेसे सूक्ष्मसे भी सूक्ष्मतर बनाने विभाजित हो [illegible] इस क्रम [illegible] (…ation)

कहते हैं। जैसे,—एक भाग मूल भरिष्टको नौ भाग सुरासारके साथ मिलानेसे प्रथम दशमिक क्रम (१x) प्रस्तुत होता है। फिर ; एक भाग मूल भरिष्टको निन्नानवे भाग सुरासारके साथ मिलानेसे प्रथम शततमिक क्रम बनता है। इसीतरह पूर्ववर्त्ती क्रमका भरिष्ट एक भाग, नौ भाग या निन्नानवे भाग सुरासारके साथ मिलानेसे बादका दशमिक या शततमिक क्रम बनता है। भरिष्टके क्रमको 'डाइलिउशन' कहते हैं। औषधि प्रस्तुत करनेके सम्बन्धका विस्तृत विवरण जाननेके लिये 'भेषज-विधान' ग्रन्थ पढ़ना चाहिये।

निम्न, मध्यम और उच्च क्रम।—१x, ३x, ३, ६ यह निम्नक्रम हैं ; १२ और १८ मध्यम क्रम हैं और ३०, १००, २०० प्रभृति उच्चक्रम हैं।

अमेरिकन होमियोपैथिक फार्माकोपियाके मतसे १x से ३० तक निम्नक्रम हैं ; इससे ऊपर उच्चक्रम हैं।

एक विन्दु औषधि फलद क्यों होती है ?—

सूक्ष्मतम अंशमें बंट जानेपर औषधिकी रोगनाशिनी शक्ति बढ़ जाती है। वैद्योंका स्वर्ण सूक्ष्मानुसूक्ष्म रूपमें बंटा हुआ है ; इसीलिये स्वर्ण आयुर्वेद मतसे एक श्रेष्ठ औषधि है। लवण, गन्धक, स्वर्ण, मृगनाभि, धतूरा प्रभृति जड़, जीव और उद्भिद्-राज्यके ढेरके ढेर पदार्थ होमियोपैथीकी क्रम-पद्धतिके अनुसार सूक्ष्मतम अंशमें बंट जानेपर अपना रोगनाशिनी शक्तिका

विनाश ऐसा रोगोंको स्तम्भित किया करते हैं। यही शक्ति रोगियोंकी देहमें सूक्ष्मरूपसे प्रवेशकर बिजलीजैसा प्रभाव दिखाया करती है। इसीलिये केवल एक विन्दु औषधि मरणोन्मुख मनुष्यको तरह मरते हुए रोगियोंको नवजीवन प्रदान किया करती है। इसीलिये एक शताब्दीमें ही समस्त सभ्यजगत्‌में सदृशविधानका इतना आदर हो गया है।

'शक्ति' या 'क्रम' ?—क्रम पद्धतिके अनुसार बनी हुई होमियोपैथिक औषधकी रोगनाशिनी शक्ति बढ़ जाती है, इसलिये 'क्रम' शब्दकी जगह 'शक्ति' (Potency) शब्दका प्रयोग होता है। जैसे ३० शक्तिका चायना' कहनेसे 'चायना ३०क्रम' समझना होगा। विद्यानुसार डाक्टर एलेन प्रभृति सर्वोत्कृष्ट होमियोपैथोंने 'डाइल्यूशन' या 'क्रम' शब्द हटा कर उसकी जगह 'पोटेन्सी' या 'शक्ति' शब्द प्रचलित करनेका परामर्श दिया है। (Vide The North Western Journal of Homœopathy for July 1890 page 107)

औषधि-प्रयोग-प्रकरण।

औषधि कितनी मात्रामें खानी चाहिये ?—औषधि

[illegible]

जाती हैं। बिना जानकारीके क्रम निरूपित करना कठिन है। फिर, खुला हुआ दस्तूर यह है, कि नये रोगमें निम्न और मध्यम शक्तिकी औषधि और पुराने रोगमें उच्च शक्तिकी औषधि व्यवहार की जाती है। किन्तु हैजा आदि नये रोगोंमें अवस्था भेदसे उच्च शक्तिकी औषधि भी व्यवहार की जाती है। इस पुस्तकमें लिखे प्रत्येक रोगके विवरण-के चिकित्सा-स्थानमें यह लिख दिया गया है, कि कौनसी औषधि किस क्रमसे व्यवहार करना चाहिये।

औषधिकी मात्रा ।—पूर्णवयस्क मनुष्यको एक बिन्दु अरिष्ट सवाभर जलके साथ सेवन कराना चाहिये; वटिका दो, अणुवटिका चार और विचूर्ण एक ग्रेन देना उचित है। बालकोंको एक बिन्दु अरिष्ट सवाभर जलके साथ दो खुराकमें; वटिका एक और अणुवटिका दो देनेका नियम है। शिशुको एक बिन्दु अरिष्ट दो तोले जलके साथ चार खुराकमें देना चाहिये। बड़ी वटिका देना उचित नहीं; छोटी वटिका एक देना चाहिये।

कितनी-कितनी देर बाद औषधि देना चाहिये।—नये रोगमें एक, दो, तीन या चार घण्टे बाद औषधि देनेका दस्तूर है। आशुप्राणनाशक रोगमें दश, पन्द्रह या बीस मिनट बाद औषधि देना उचित है। पुराने रोगमें प्रति दिन या सप्ताहमें एक या दो बार औषधि देनेकी व्यवस्था है। नये

फोड़ा होनेपर वह तीसी या राखकी पुलटिससे पकाया और चीरा जाता है। औषधि द्वारा दस्त न आनेसे अल्प गर्म जलमें साबुन घुला पिचकारी दी जाती है। विकारसे माथा गर्म होनेपर, तीव्र शिरोवेदनामें और नाक-मुखसे रक्त निकलनेमें बरफ या शीतल जल प्रयोग कराया जाता है। गर्म जल या फ्लानेलकी सेंक भी समय समयपर आवश्यक होती है। पथ्यापथ्यके प्रति विशेष दृष्टि रखना चिकित्सकका कर्त्तव्य है।

रोग-लक्षण और औषधि-निर्व्वाचन।

रोग-लक्षण क्या है ?—रोग होनेपर शरीर और मनमें जो विकार उत्पन्न होता है, उस विकार-समष्टिका नाम रोग लक्षण (Symptoms) है। जैसे,—शरीरकी ताप-वृद्धि नाड़ीकी द्रुत गति, बार-बार निश्वासपतन, कमरमें वेदना भूख घटना प्रभृति ज्वरके लक्षण हैं। इनमें प्रथम तीनों बाहरी लक्षण [illegible] Symptoms) कहलाते हैं। कारण यह सब बाहर रोगीको देहमें दिखाई देते हैं। [illegible] नाना लक्षण [illegible] Symptoms)

कहलाते हैं; कारण, इन्हें रोगी आप ही अपने भीतर अनुभव करते हैं; इनका ज्ञान रोगियोंके बतानेसे ही प्रकट होता है।

औषधि-लक्षण क्या है?—स्वस्थ देहमें कोई औषधि सेवन करनेसे शरीर और मनमें जो लक्षण प्रकट होता है; उस लक्षण-समष्टिको उस औषधि का 'लक्षण' कहते हैं। जैसे, स्वस्थदेहमें एकोनाइटका मूल अरिष्ट अधिक मात्रासे खानेपर प्यास, नाड़ीकी द्रुत गति, बार-बार निश्वासपतन आदि लक्षण प्रकट होनेपर यह सब एकोनाइटके लक्षण कहलाते हैं। औषधिका लक्षणसमूह होमियोपैथिक 'भेषज लक्षण-संग्रह' में विस्तारके साथ लिखा गया है।

औषधि-निर्व्वाचन।—(Selection of Medicines) जिस रोगके लक्षण किसी औषधिके समस्त या अधिकांश लक्षणसे मिलते हों; उस रोगके लिये उस औषधिको होमियोपैथी औषधि समझना चाहिये। जैसे;—ऊपर लिखे ज्वरके लक्षण एकोनाइटके लक्षणसे मिलते हैं, इसलिये एकोनाइट प्रादाहिक ज्वरकी औषधि चुना जाता है। इस-ग्रन्थके प्रत्येक रोगा चिकित्सा-प्रकरणमें जो सब औषधियां लिखी गई हैं वह सब इसी ढङ्गसे चुनी जाकर लिखी गई हैं इसलिये [illegible]

बैठ पड़ते उसके अनन्तर शीतबोध, सिर घूमना, पैरमें दर्द, निद्रानाश, छातीकी जलन, भय, उद्वेग इत्यादि; रोगके कारण: ठण्डा लगना, दृष्टिमें भीगना, गुरु द्रव्य आहार, वजनी चीज उठाना इत्यादि, किस समय या किस अवस्थामें रोगकी ह्रास-वृद्धि होती है; जैसे, प्रातःकाल वृद्धि—रात्रि ग्यारह बजे ह्रास, बदन दबानेसे आराम, हिलकर चलनेसे वेदना-वृद्धि, बायें करवट सोनेसे आराम इत्यादि इन सब बातोंको धीरे धीरे पूछकर जान लेना चाहिये। इसके बाद बाह्यलक्षण जैसे—शरीरका ताप, नाड़ी, जिह्वा, चर्म्म, वक्षःस्थल, मल, मूत्र प्रभृतिका हाल परीक्षा द्वारा आप ही जान लेना चाहिये। जिस ढङ्गसे तापादिकी परीक्षा होती है; उसका हाल नीचे यथाक्रम लिखा जाता है।

शरीरका ताप।—शरीरका ताप क्लिनिकेल थर्मामिटर या तापमान यन्त्र द्वारा जाना जाता है।

यह पारेसे परिपूर्ण छोटे-छोटे दागोंवाला शीशेकी एक नल होती है। सबके नीचे पारेका एक कुण्ड होता है। उससे कुछ ही ऊपर कितनी ही छोटी बड़ी लकीरें और अङ्क चिह्नित होते हैं। पहली बड़ी लकीर ८० या ८५ डिगरी, इसके बाद की चार छोटी लकीरोंमें प्रत्येक एक डिगरीका पञ्चमांश प्रकट करती है। प्रत्येक बड़ा लकीर एक डिगरी है। ९८ डिगरीके ऊपर द्वितीय छोटी लकीरमें तीरका एक चिह्न है। यही

मनुष्यका स्वाभाविक ताप निर्देश करता है। तापमान यन्त्रका पारेवाला भाग रोगीकी बगलमें, जिह्वाके नीचे या गुह्यद्वारमें प्रवेश करानेसे शरीरके तापकी परीक्षा होती है। इस समय इस यन्त्रके इस पारेवाले भागको बाहरी वायुसे बचाना चाहिये। पांचसे दस मिनटतक इस यन्त्रको बगल आदि किसी एक स्थानमें रख इसके बाद बाहर निकाल देखना चाहिये। पारेके कुण्डसे पारा सूक्ष्म सूतकेसी नलीमें ऊपर चढ़ जिस लकीरपर ठहर जाता है, उसी लकीरके अनुसार शरीरका तापांश या डिगरी समझना चाहिये।

स्वस्थावस्थामें शरीरका ताप ९८·४ डिगरी; मुख-गह्वरका ताप ९८·५ डिगरी तक रहता है। बालकोंका गात्रताप युवकोंके गात्रतापकी अपेक्षा कुछ अधिक होता है। फिर; युवकोंके गात्रतापकी अपेक्षा चालीस वर्षसे ऊपरके वयस्क मनुष्योंका गात्र-ताप डेढ़ डिगरी कम होता है। निद्रा और विश्रामके समय शरीरका ताप डेढ़ डिगरी घट जाता है। गात्रतापकी ढाई डिगरी वृद्धि होनेकी अपेक्षा एक डिगरी कम हो जाना अधिक खतरनाक है। सम्पूर्ण टैक्सिडामें मिर्गीके दौरे, पेचिश, ज्वर, पाक्षा-ज्वर, मोतीज्वर और [illegible]-रोगमें गात्रताप १०६ या १०८ डिगरीतक चढ़ जाता है [illegible] १०३ [illegible] या १०४ डिगरी [illegible] है [illegible] १०० डिगरी [illegible] या ९९ डिगरी [illegible] [illegible] है [illegible] १०० से १०१ डिगरीतक [illegible]

ज्वर और १०५ डिगरी होनेपर प्रबल ज्वर समझना चाहिये। १०७ सांघातिक ज्वर और १०८ या ११०° डिगरी शीघ्र ही मृत्युका परिचय देती है। टाइफ़ेड या आन्त्रिक ज्वरमें द्वितीय सप्ताह सन्ध्या समय गात्रताप १०२° या १०३° डिगरी होनेसे सामान्य ज्वर किन्तु १०५° डिगरी होनेसे भयङ्कर ज्वर समझना चाहिये। सूतिका ज्वर साधारणतः १०५ डिगरीतक पहुँच जाता है। ८७° से ८०° डिगरीतक पतनावस्थाका परिचय मिलता है। हैजेमें कभी-कभी हिमाङ्ग होनेसे गात्रताप ८० डिगरीतक उतर जाता है। नये या सविराम ज्वरमें या पुराने क्षयकर रोगमें गात्रतापका एकाएक खूब घट जाना आशङ्काजनक है।

नाड़ी-स्पन्दन।—जन्मसे एक वर्ष उम्रतक नाड़ी मिनट पीछे १५०।१४० बार चलती है। दोसे पांच वर्षतक ११०। १००, छः से पन्द्रहतक ८०, सोलहसे पचास वर्षतक ७५ बार और वृद्ध वयसमें ७० बार मिनट पीछे चलती है। स्वाभाविक स्पन्दनकी अपेक्षा बीस बार स्पन्दन घटनेसे जीवनी शक्तिका ह्रास समझना चाहिये।

श्वास-प्रश्वास।—स्वस्थ शरीरमें पूर्णवयस्क मनुष्य मिनट पीछे बीस बार श्वास लेते हैं। श्वास प्रश्वासकी गति धीर होनेसे शुभलक्षण, गालन या द्रुत होनेसे मृत्यु लक्षण समझना चाहिये। कास या फेफड़ेमें रोग होनेसे श्वासकी गति बढ़, दुर्बल अवस्थामें घट जाता है।

मुखमण्डल।—मुख शरीरका दर्पण है। इसलिये मुख देख शरीरकी अवस्थाका हाल बहुत कुछ जाना जा सकता है। प्रसन्न वदन स्वास्थ्यका परिचायक है। किन्तु छातीकी पीड़ाकी यन्त्रणा भोगनेपर रोगीका प्रशान्त या प्रसन्न वदन शुभलक्षण नहीं। फेफड़ेकी नई जलनमें मुखमण्डल चिन्ताकुलित, सङ्कुचित और श्वासकष्ट प्रभृति लक्षण प्रकट होते हैं। मलान्न मुखमण्डल धातुदौर्ब्बल्यका परिचायक है। ज्वरके साथ मन्द मन्द होनेसे मुखमण्डलकी मलिनता, चारक्ताराग, ह्रायवर्ण होंठ प्रभृति लक्षण प्रकट होते हैं।

गात्रचर्म्म।—गात्रचर्म्मके कर्कश, शुष्क, खुरखुरा और उत्तप्त हो जानेसे ज्वरका पता चलता है। शरीरका ताप घटनेपर यदि अन्यान्य लक्षण घट जायें और पसीना हो, तो शुभ लक्षण समझना चाहिये। सारे शरीरमें न होकर यदि एक ही स्थानमें पसीना हो, तो इसे स्वाभाविक दौर्ब्बल्य और उस स्थानके नीचे प्रदाहका लक्षण समझना चाहिये। विषम और प्रादाहिक ज्वरमें पसीना होनेपर, अन्यान्य उपसर्गोंका ह्रास न होनेसे अशुभ लक्षण समझना चाहिये। विषमज्वर, मलेरिया ज्वर सूतिका ज्वर और अन्यान्य प्रबल ज्वरमें शीत और कम्प उपस्थित होता है।

वमन और हिचकी।—पाकस्थलीकी बीमारी, मस्तिष्क सम्बन्धी पीड़ा तथा हैजा, फेफड़े और जरायु प्रभृति यन्त्रके

क्रिया-वैलक्षण्यसे वमन होता है। क्रिमि, आमाशय और यकृतके प्रदाहकी वजह हिचकी आती है।

वेदना।–यदि एक स्थानमें लगातार वेदना हो, वेदना स्थान उत्तप्त हो और दबाव देनेसे वेदना बढ़े, तो उसे प्रदाहजनित वेदना समझना चाहिये। जो वेदना हिलनेसे बढ़े; वह पेशीकी वेदना है। स्नायुशूलकी वेदना दबाव देने या घूम-फिरकर टहलनेसे घटती या बढ़ती है। यकृतके प्रदाहमें दक्षिण स्कन्धमें और प्लीहाकी पीड़ामें बायें बाहुमें वेदना होती है। अश्मरी रोगमें पुरुषाङ्गके अग्रभागमें दर्द होता है।

वक्षस्थल।–छातीकी परीक्षा प्रधानतः तीन प्रकारसे होती है,—(१) दर्शन, (२) स्पर्शन और (३) श्रवण द्वारा। (१) 'दर्शन' रोगीको स्थिरभावसे बैठाकर स्थिर नेत्रसे देखना चाहिये। देखना चाहिये, कि छाती सम्पूर्ण विकासप्राप्त, सङ्कुचित और प्रत्येक बार श्वास-प्रश्वास ग्रहण करनेमें ऊँची या नीची होती है और छातीका कोई अंग फूला है या नहीं। (२) 'स्पर्शन' या प्रतिघात द्वारा। बायें हाथकी हथेली रोगीकी छातीपर रख उसपर दाहिने हाथकी तर्जनी उंगलीसे आघात करना चाहिये। यदि ठन-ठन शब्द हो, तो स्वाभाविक अवस्था. यदि टप-टप शब्द हो, तो फेफड़ेका प्रदाह, छातीका शोथ प्रभृति समझना चाहिये इसके

बीमारीमें छातीमें अधिक परिमाणसे वायु प्रवेश करती है; इसलिये छातीमें टन टन शब्द होता है। (२) 'श्रवण'— यह कार्य्य ष्टेथोस्कोप नामक यन्त्रके साहाय्यसे सम्पन्न होता है। ष्टेथोस्कोप कई तरहके होते हैं; जैसे,—काठका, सीसेका, जर्मनसिलवरका और रबरके नलका। रोगीको चित सुला या स्थिर भावसे खड़ा करा उसकी छातीपर फुसफुस या उसके समीपके स्थानमें ष्टेथोस्कोपका क्षुद्र मुख लगा, दूसरा प्रशस्त मुख कानमें लगा परीक्षा करना चाहिये। रबरके ष्टेथोस्कोपका प्रशस्त मुख छातीपर लगा और क्षुद्र मुख कानमें रख परीक्षा करना चाहिये। स्वाभाविक अवस्थामें सों-सों शब्द सुनाई देता है। श्वासनालीके प्रदाह, दमा, यक्ष्मा प्रभृति रोगोंमें तरह तरहकी शब्दध्वनि सुनाई देती है [illegible] अधिक रहनेसे घड़-घड़ शब्द होता है। फेफड़ेकी [illegible] में केशघर्षणवत् और फेफड़ेको ढंकनेवाली झिल्लीके प्रदाह में खस खस शब्द होता है।

मन्द।—[illegible]

[illegible]

पेशाब करते; उसमें तलछट भी होती है। ज्वरकालीन नाड़ीका वेग होनेसे पेशाब कम और तरल होता है। पेशाब अधिक अथच साफ होनेसे स्नायविक पीड़ा; पेशाब होनेके कुछ देर बाद दुग्धवत् हो जानेसे क्रिमि-दोष और पेशाबमें शर्करा रहनेसे मधुमेह समझना चाहिये।

२। शोणित-रोग।

हैजा, ज्वर, शीतला, प्रभृति रोगोंमें शरीरका समस्त रक्त दूषित हो जानेकी वजह इनका साधारण नाम शोणित-रोग है। इनकी बातें यथाक्रम आगे लिखी जाती हैं।

हैजा। (CHOLERA.)

'हैजा' शब्दसे 'दस्त और कै' समझने आता है। चावल-के धोवनजैसा दस्त और कै इस रोगका प्रथम लक्षण है। इसके बाद अवसन्नता, आंखोंका बैठ जाना, स्वरभङ्ग, पेशाबका बन्द होना, मरोड़ खिंचाव, ठण्ढा पसीना, नाड़ी लोप, प्रबल प्यास आदि लक्षण प्रकट होते हैं

हैजेके रोगीके दस्त और कैमें एक तरहके [illegible] [illegible] दिखाई देते हैं [illegible] सब सड़ चिउड़ेसे होते हैं।

इसका विष स्वस्थ शरीरमें घुसनेपर हैजा होता है। जिस तालाब या गड़हियामें हैजेके रोगीका मलादि फेंका जाता या उसके वस्त्रादि धोये जाते हैं ; उसका जल पीकर गांवका गांव बीमार होता देखा गया है। (Vide Macnamara's Treatise on Asiatic Cholera.)

गत सन् १८१७ ई० में बङ्गाल—यशोहर जिलेके अन्तर्गत ममडांगा नामक ग्राममें एक मेलेके उपलक्ष्यमें बहुतेरे लोगोंका समागम हुआ। इस मेलेमें एकाएक हैजा फूटा। यह रोग क्रमशः ग्राम-ग्रामके गांवोंमें फैला। आष्ट्रेलिया, चच्छमन द्वीपपुञ्ज प्रभृति कुछ स्थानोंको छोड़ इस रोगने सारे भूमण्डलमें अपना आधिपत्य विस्तार किया है।

हैजा असलतः दो तरहका है:—सामान्य और सांघातिक। सामान्य हैजेको प्रबल बदहजमी कह सकते हैं। सांघातिक हैजा को असल हैजा या एशियाटिक कालेरा कहलाता है। समय समयपर सामान्य हैजा सांघातिक हैजेमें परिणत हो सकता है। चिकित्सकोंकी सुविधाके लिये दोनो तरहके हैजोंका पार्थक्य नीचे दिखाया जाता है :—

सांघातिक हैजा।	सामान्य हैजा।
(१) यह सिर्फ खाने-पीने हीके दोषसे हुआ नहीं करता।	(१) यह प्रायः ही खाने-पीनेके दोषसे हुआ करता है।
(२) इसमें पहले निम्नाङ्गमें; विशेषतः जांघमें वेदना होती है।	(२) इसमें नाभिकी चारो ओर खिंचावजैसी वेदना होती है।
(३) इसमें के-दस्त कम हो या अधिक; रोगी शीघ्र ही निर्ब्बल हो जाता है।	(३) इसमें के-दस्त अधिक होनेपर भी रोगी वैसा निर्ब्बल नहीं होता।
(४) इसमें देहकी गर्मी एकाएक घट जाती है।	(४) इसमें देहकी गर्मी धीरे-धीरे घटती है।
(५) इसमें पहलेसे हीसे चावलके धोवनजैसा दस्त होता है।	(५) इसमें पहले आमाशयमें ज्वाला होती और दर्दके साथ पित्तसंयुक्त मल निकलता पीछे पित्त नहीं रहता।
(६) इसमें पहले हाथ-पैरकी उंगलियां पीछे समूचा हाथ पैर अकड़ने लगता है।	(६) इसमें पहले पेटमें मरोड़ उठता है, किन्तु इसके सिवा कोई कष्ट नहीं होता।
(७) इसमें पहले नाखून-सह पीछे सारा शरीर नीलवर्ण हो जाता है।	(७) इसमें रोगी सिर्फ विवर्ण हो जाता है।

ऊपर लिखे दो तरहके हैज़ोंको छोड़ और एक तरहका हैजा है। उसमें कै, दस्त, या हाथ पैरका पकड़ना नहीं; किन्तु मूत्ररोध, अवसन्नता, प्यास, दाह प्रभृति हैजेके अन्यान्य लक्षण प्रकट होते हैं। ऐसे लक्षणवाले हैजेको 'सूखा' हैजा (Dry Cholera) कहते हैं। यह सांघातिक हैजेका रूपान्तर मात्र है। रोगीपर यह रोग एकाएक आक्रमण करता है। इसके आक्रमणसे शरीर शीघ्र नीलवर्ण और शीतल, नाड़ी प्रायः विलुप्त, स्वरभङ्ग या चीणस्वर और मूत्रस्तम्भ प्रभृति सांघातिक लक्षण प्रकट होते हैं।

पहलेके कारण ।—अपक्व फल-मूल, सड़ा या सड़े द्रव्यका भोजन, दूषित वायु-सेवन, मैले या अस्वास्थ्यकर जलका पीना, अपरिमित आहार; मादक द्रव्य सेवन; रात्रिजागरण, ऋतु-परिवर्त्तनादि हैजेके पहलेके कारण होते हैं।

उत्तेजक कारण ।—उत्तेजक कारण पूर्व्वोल्लिखित जीवाणु (Bacilli) है। प्रधानत: हैजेके रोगीके मल-मूत्र और वमनमें दिखलाई देते हैं। किन्तु इस विषयमें अभीतक कोई बात स्थिर नहीं हुई है, कि यह सब कैसे उत्पन्न होते हैं और इनका प्रकृति कैसा है।

प्रतिषेधक उपाय ।—हैजेके समय मैले और दुर्गन्धपूर्ण स्थानमें रहना, अनियमित भोजन, अपरिष्कृत जल पान और अतिरिक्त परिश्रम तथा सड़े मालका आहार बिल्कुल

(४) प्रतिक्रियावस्था—इसमें शरीर फिर गर्म होने लगता और मणिबन्धमें नाड़ी पाई जाती है।

(५) परिणामावस्था—विशेष विवरण आगे देखना चाहिये।

हैजेकी स्थूल चिकित्सा।

हैजेकी पांचों तरहकी अवस्थाओंका विस्तृत विवरण और चिकित्सा यथाक्रम आगे लिखी गई है। किन्तु सब-साधारणके लिये सब समय समूचा ग्रन्थ पढ़कर लक्षणोपयोगी औषधि निर्वाचन करना कठिन हो जाता है। कारण, उस समय समूचा ग्रन्थ पढ़नेसे चिकित्साका समय नहीं मिलता। फिर, उस विषयमें सुदक्ष अभिभावकोंके मौजूद न रहने और सुचिकित्सकके अभावमें घरकी स्त्रियों हीको लाचार हो चिकित्साका भार अपने ऊपर लेना होता है। इसकी सुविधाके लिये कितनी ही प्रधान औषधियोंके साहाय्यसे इस रोगकी स्थूल चिकित्सा आगे लिख दी जाती है।

अधिक [illegible] होने लगे और दस्त होते समय कपालमें ठण्डा पसीना [illegible] देना चाहिये। हैजेमें [illegible] अधिकता दिखाई

नाड़ी लुप्त मुखमण्डल मुर्देजैसा विवर्ण और विकृत, शरीर बर्फ़जैसा शीतल, नासिश्वास प्रभृतिसे अन्तिमकालके लक्षण प्रकट होनेसे कोब्रा या स्याजा ३ विचूर्णका प्रयोग अनेक स्थलमें सुफल उत्पन्न करता है।

और सफ़ाईका बड़ा ख़याल रखना चाहिये। रोगीके पहनने और शय्याका वस्त्र, शय्या गृह और मकान साफ़ रखना सर्व्वतोभावसे कर्त्तव्य है। मल, मूत्र और वमन तथा इन सब दूषित पदार्थों से भीगे वस्त्रादिको वासस्थानसे दूर या तो गाड़ या जला देना चाहिये। पासके जलाशयादिमें इन सब वस्त्रादिको धोना और मल मूत्रादिको पायख़ाने या किसी भी प्रकाश्य स्थानमें फेंकना न चाहिये। ऐसा न होगा, तो समूचे ग्राम या मुहल्लेमें यह रोग फैल जायेगा।

और यह बात अच्छी तरह याद रखना चाहिये, कि रोगारम्भसे रोगारोग्य अवस्थातक, पेशाब होनेके तीन-चार घण्टे बादतक भी, रोगीको आवश्यकतानुसार केवल जल या बर्फ़का टुकड़ा चूसनेको देना चाहिये, ऐसा न होगा, तो रोगीको मृत्युतक हो जानेकी आशङ्का है। प्रतिक्रिया अवस्था आरम्भ होनेके अन्ततः तीन-चार घण्टे बाद पथ्यकी व्यवस्था की जा सकती है। पेशाबके बाद या जिस समय स्पष्ट समझमें आ जाये, कि मूत्राधारमें मूत्र जमा है, फिर भी निकलता नहीं, अलसाबू थोड़ी चीनी या नमक मिला खानेके लिये देना चाहिये। मलमें पित्तका भाग दिखाई देनेसे जल बारली, दालका

इच्छा, दुर्निवार प्यास, मुखमण्डल मलिन; आंखोंका धंस जाना, शरीर विवर्ण, सर्व्व शरीरमें, विशेषतः मस्तकमें ठण्डा पसीना, क्रमश: पेशाब मन्द होकर नाड़ी क्षीण; नील-वर्ण रेखासे चक्षुका घिर जाना, स्वरभङ्ग; पेटमें वेदना; पाकस्थलीमें ज्वाला, पेटमें तरह-तरहकी गड़गड़ाहट; शरीरके स्थान-स्थानका, विशेषतः हाथ पैरकी उँगलियोंका अकड़ना; शरीरकी अवसन्नता तथा अस्थिरता आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। स्थल विशेषमें किसी किसी उपसर्गका अभाव या आधिक्य दिखाई देता है, जैसे,—किसी किसी रोगीको दस्त अधिक होता, किन्तु कै कम होता है। किसी-किसी रोगीको दस्त कम, किन्तु कै या कैका इच्छा अधिक होती है। इस विकसित अवस्थाके लक्षण यदि आठसे बारह घण्टे तक रहें तो मलके साथ पित्त आने या पीले तथा हरे मलके निकलने और इस सब लक्षणोंके घटनेपर रोगी क्रमश: आरोग्य लाभ करता है। किन्तु इसके बदले यदि सारा शरीर शीतल, मुखाकृति कुञ्चित और नाड़ी लुप्तप्राय प्रभृति लक्षण प्रकट हों, तो जानना चाहिये, कि विकसितावस्था पतनावस्थामें परिणत हुई है। इस अवस्थामें बहुतेरे रोगियोंकी मृत्यु हो जाती है। बारह घण्टे तक बच जानेसे रोगीकी रक्षा हो सकती है।

(३) हिमांग अवस्था।—उक्त अवस्था हैजेकी प्रथम अवस्था है, यह अवस्था बड़ी ही भयङ्कर होती है इस

तन्द्रा ; हिचकी ; वमन और वमनेच्छा ; उदरामय ; पेट फूलना ; स्फोटक और कर्णमूल प्रदाह ; फेफड़ेका प्रदाह प्रभृति।

चिकित्सा।—पूर्व्वोक्त पांचों अवस्थाओंका चिकित्सा-प्रकरण लिखनेसे पहले इस रोगमें केम्फर प्रयोग होनेके सम्बन्धमें कुछ लिखा जायेगा। इटलीके डाक्टर रुबिनी कर्पूरारिष्ट या अर्क कपूर तय्यार करते हैं। आपने इस औषधिके प्रयोगसे हैजेके सैकड़ो रोगियोंको आरोग्य किया है। अवस्थाविशेषमें सिर्फ केम्फर प्रयोग करनेसे हैजेके रोगी आरोग्य हो जाया करते हैं। पेटकी ज्वाला या वेदनाके साथ दस्त और उसीके साथ शीत-बोध और आक्षेप ; केम्फर प्रयोगके लक्षण हैं। महात्मा हेमिमेनका कहना है, कि हैजेकी पहली अवस्थामें यानी जब-तक दस्तमें मल दिखाई देता है ; रोगी एकाएक निस्तेज हो जाता है ; मुखमण्डल परिवर्त्तित ; स्वरभङ्ग या विकृत स्वर ; आंखोंका धँस जाना ; सर्व्व शरीर शीतल ; पाकस्थलीमें ज्वाला प्रभृति लक्षणोंमें केम्फर प्रयोग करना उचित है। डाक्टर फेरिङ्गटनका कहना है, कि दस्त कम ; कै अधिक ; सर्व्वाङ्ग शीतल और स्वरका वैलक्षण्य इन सब लक्षणोंमें केम्फर व्यवस्थेय है। ओस या ठण्डक लगने ; अजीर्ण या उदरामयके हैजेमें परिणत होनेसे केम्फर उपकार करता है। इस रोगकी आक्रम-णावस्थामें जब थोड़ा-थोड़ा शीतबोध , दुर्व्वलता अनुभव ; श्वास-प्रश्वासमें कष्ट ; पाकस्थलीमें ज्वाला , सिर घूमना प्रभृति

इस अवस्थामें के-दस्त बन्द होनेके बाद ही रोगीकी मृत्यु हो जाती है या दो तीन घण्टे निस्तब्धभावसे पड़े रहनेके बाद मृत्यु हो जाती है। यदि के-दस्त बन्द होनेके बाद चार पांच घण्टे तक रोगीकी मृत्यु न हो, तो समझना चाहिये, कि प्रतिक्रियावस्था आरम्भ हुई है।

(४) प्रतिक्रियावस्था।—तृतीयावस्थाके अन्तमें के-दस्त बन्द और नाडी लोप होनेके बाद यदि मृत्यु न हो, तो मणिबन्धमें फिर नाडी मिलेगी। इसीके साथ-साथ तृतीय या पूर्ण विकसितावस्थाके लक्षण क्रम-क्रमसे फिर प्रकट होंगे। यदि स्वस्थ या स्वाभाविक प्रतिक्रिया आरम्भ होती है, तो गात्र उत्तप्त होता और फिर पित्तमिश्रित थोड़ा-थोड़ा के और दस्त होनेपर जीवनी शक्ति बढ़ने लगती है। क्रमशः पेशाब होता या मूत्राशयमें पेशाब एकत्र होता है। शरीरका रङ्ग और आँखोंकी ज्योति स्वाभाविक हो जाती है। कभी-कभी अस्वाभाविक प्रतिक्रिया आरम्भ होती और इससे रोगकी पांचवीं परिणामावस्था प्रकट होती है।

(५) परिणामावस्था।—हैजेकी परिणामावस्थामें शरीरके विविध यन्त्रोंमें रक्तसञ्चय होता और रोगीके जो यन्त्र अधिक निर्बल हो जाते हैं, वह यन्त्र विशिष्टरूपसे आक्रान्त होते हैं। इस अवस्थामें निम्नलिखित लक्षण सदा दिखाई देते हैं:—रोगका पुनराक्रमण, ज्वराधिकार मतनाश और

तन्द्रा ; हिचकी ; वमन और वमनेच्छा ; उदरामय ; पेट फूलना ; स्फोटक और सर्पमूत्र प्रदाह ; फेफड़ेका प्रदाह प्रभृति।

चिकित्सा।—पूर्वोक्त पांचों अवस्थाओंका चिकित्सा-प्रकरण लिखनेसे पहले इस रोगमें केम्फर प्रयोग होनेके सम्बन्धमें कुछ लिखा जावेगा। इटलीके डाक्टर रुबिनी कर्पूरारिष्ट या अर्क कपूर तय्यार करते हैं। आपने इस औषधिके प्रयोगसे हैजेके सैकड़ो रोगियोंको आरोग्य किया है। अवस्थाविशेषमें सिर्फ केम्फर प्रयोग करनेसे हैजेके रोगी आरोग्य हो जाया करते हैं। पेटकी ज्वाला या वेदनाके साथ दस्त और उसीके साथ शीत-बोध और आक्षेप ; केम्फर प्रयोगके लक्षण हैं। महात्मा हैनिमैनका कहना है, कि हैजेकी पहली अवस्थामें यानी जब-तक इसमें मल दिखाई देता है ; रोगी एकाएक निस्तेज हो जाता है ; मुखमण्डल परिवर्त्तित ; स्वरभङ्ग या विकृत स्वर ; आंखोंका धंस जाना ; सर्व्व शरीर शीतल ; पाकस्थलीमें ज्वाला प्रभृति लक्षणोंमें केम्फर प्रयोग करना उचित है। डाक्टर फेरिङ्गटनका कहना है, कि दस्त कम ; कै अधिक ; सर्व्वाङ्ग शीतल और स्वरभङ्ग वैलक्षण्य इन सब लक्षणोंमें केम्फर व्यवस्थेय है। ओस या ठण्डक लगने ; अजीर्ण या उदरामयके हैजेमें परिणत होनेसे केम्फर उपकार करता है। इस रोगकी आक्रम-णावस्थामें जब थोड़ा-थोड़ा शीतबोध ; दुर्ब्बलता अनुभव ; श्वास-प्रश्वासमें कष्ट ; पाकस्थलीमें ज्वाला ; सिर घूमना प्रभृति

लक्षण प्रकट होते हैं ; तब केम्फर प्रयोग किया जाता है। के-दस्त शून्य सूखे हैजेमें केम्फर ही एकमात्र औषधि है। अत्यन्त आयविक अवसन्नता, सर्व्वाङ्ग बरफजैसा शीतल ; पसीनेका न होना या शीतल चिकना पसीना; हाथ-पैरकी अवशता; श्वासकष्ट, स्थिरचक्षु, क्षीण नाड़ी ; सर्व्वाङ्ग नीलवर्ण प्रभृति लक्षणमें केम्फर उपयोगी है। हिमाङ्ग अवस्थामें जब के-दस्त बन्द होनेपर प्रतिक्रिया नहीं होती; तब दो-एक बार केम्फर दिया जाता है। इस अवस्थामें हृहदन्त्र, हृत्पिण्ड और पेशीका पक्षाघात होने और कारबोवेज, फासफोरस इत्यादि औषधियोंके देनेका कोई फल न होनेसे केम्फर देना चाहिये। भावेगविहीन हैजे या भावेगिक हैजेकी विकसित अवस्थामें केम्फरका कोई फल नहीं होता। अधिक मात्रामें बारंबार केम्फर प्रयोग करनेसे यदि आमाशयमें ज्वाला, मानसिक अस्वच्छन्दता प्रभृति कष्टकर लक्षण प्रकट हों, तो दो-एक बार फासफोरस प्रयोग करना चाहिये। इससे यह दोष नष्ट हो जायेंगे।

कविराजी, हकीमी या एलोपैथिक चिकित्साके बाद होमियोपैथिक चिकित्सा करनेसे पहले दो-एक बार केम्फर देनेके बाद दूसरी दवा देना चाहिये।

केम्फर-प्रयोगकी मात्रा।—दस-पन्द्रह मिनटके बाद एक एक मात्रा रूबिनीका केम्फर शक्कर, चीनी या बताशेमें

मात्र देना चाहिये। शिशुको तीन-चार बूँद और युवक या वृद्धको पीड़ाके उग्रतानुसार पाँचसे बीस बूँदतक देना चाहिये। दो घण्टेमें आठ-दश बार कैम्फर देनेपर यदि कोई उपकार न हो, तो किसी दूसरी दवाकी व्यवस्था करना उचित है।

(१) आक्रमणावस्थाकी चिकित्सा।— उदरामय चिकित्साकी तरह। इस ग्रन्थका 'उदरामय-चिकित्सा-प्रकरण' देखना चाहिये।

(२) पूर्णविकसितावस्थाकी चिकित्सा।— चावलके धोवनजैसा दस्त-कै होनेपर वेराट्राम या आरसेनिक* प्रयोग करना चाहिये।

---

*वेराट्राम और आर्सेनिकके व्यवहारमें पार्थक्य है :—दस्त-कै जिस परिमाणसे होता है ; उसी परिमाणसे या उसकी अपेक्षा कम परिमाणसे शरीरमें अवसन्नता प्रकट होनेपर वेराट्राम और कै-दस्त जिस परिमाणसे होता है, उसकी अपेक्षा अधिक परिमाणसे शरीर अवसन्न होनेपर आर्सेनिक देना चाहिये। जिस स्थलमें बहुत ही होनेवाला कै-दस्त अधिक है, उस स्थलमें वेराट्राम और जिस स्थलमें बहुत अस्थिरता और मल-त्यागके बाद अल्प परिमाणसे कै-दस्त होता है ; उस स्थलमें आर्सेनिक प्रयोज्य है। जहाँ प्यास अधिक है, फिर भी, अधिक जलपान न करनेसे रोगीकी तृप्ति नहीं होती, वहाँ वेराट्राम और जहाँ प्यास अधिक होनेपर भी वह थोड़ा-थोड़ा जलपान करनेसे बुझ जाती हो, वहाँ आर्सेनिक प्रयोग करना चाहिये। जिस जगह कै-दस्तकी निवृत्तता और अवसन्नता रहनेपर भी मानसिक चञ्चलता नहीं रहती, वहाँ वेराट्राम और जहाँ मानसिक चञ्चलता अत्यन्त बेचैनी [illegible] होते हैं वहाँ आर्सेनिकका व्यवहार उपयोगी है।

वेराट्रम एल्बम ६, १२, ३० ।—अधिक परिमाणमें चावलके धोवनजैसा के-दस्त, तारजैसी सूक्ष्म नाड़ी; मूत्रावरोध, अतिशय प्यास, अधिक परिमाणमें पानी पीनेपर भी प्यासकी निवृत्ति न होना; मलत्यागसे पहले पेटमें वेदना; ठण्डा पसीना; अस्वाभाविक लुट्ट, हाथ-पैरका अकड़ना; सुप्त-प्राय नाड़ी; छाती और जांघमें आक्षेप; हृत्पिण्डकी क्रिया क्षीण, शारीरिक अवसन्नता, सर्व्वशरीर शीतल और नीलवर्ण; मुखमण्डल मलिन और शीर्ण, श्वास प्रश्वास तथा जिह्वा शीतल प्रभृति लक्षणोंमें बीस पचीस मिनटके अन्तरपर वेराट्रम प्रयोग करना चाहिये।

आरसेनिक ६, १२, ३० ।—के-दस्तका परिमाण [illegible] कम; दुर्निवार प्यास, विशेषतः शीतल जल पीनेकी इच्छा [illegible] किन्तु अल्प जल पीने होमे तृप्ति, जल पेटके भीतर जाते ही [illegible] वमन; मूत्रलय या मूत्रावरोध, अतिशय अवसन्नता और [illegible] अस्थिरता; शीघ्र-शीघ्र बलक्षय, पेटकी नलीमें दस्त पाकस्थलीमें [illegible] ज्वाला, सर्व्वाङ्ग शीतल, सहसा शरीर विवर्ण, सूक्ष्मप्राय [illegible] क्षीण नाड़ी, हाथ-पैरकी उंगलियोंके अग्रभागका मांस [illegible] सिकुड़ जाना, वमनेच्छा, वमनके बाद पाकाशयमें अग्नि [illegible] दग्धवत् ज्वाला, मृतवत मुख श्री, बारबार करवट [illegible] प्रयास, छातीपर दबाव औ दस्तके बाद हृत्पिण्डकी क्रिया [illegible] [illegible] अवसन्न या [illegible] शरीरका अकड़ना अङ्गस्पन्दन [illegible]

जिह्वा शुष्क और खरस्पर्श अथच शीतल, जल या जलीय पदार्थ पान करते समय ठक-ठक शब्द, दुग्धवत् दस्त-के प्रभृति लक्षणमें हर बीस-पचीस मिनट बाद आर्सेनिक देना चाहिये। उल्लिखित लक्षण वर्त्तमान रहते हुए भी चावलके धोवन-जैसा पायखाना न हो, पित्तमिश्रित पीला तरल मल या कुछ श्वेतवर्ण श्लेष्मामय मलस्राव हो, तो भी आर्सेनिक देना चाहिये। डाक्टर रसेलका कहना है, कि केम्फर प्रयोगका समय बीतते ही आर्सेनिक प्रयोग करना चाहिये। अन्यान्य चिकित्सकोंने भी इस मतका समर्थन किया है। डाक्टर हिउजने हैजेको सांघातिक मलेरिया ज्वर मान आर्सेनिककी बड़ी प्रशंसा की है। अतिशय अस्थिरता, व्याकुलता, अवसन्नता और अत्यन्त प्यास तथा मृतवत् मुखाकृति आर्सेनिक प्रयोगका प्रधान लक्षण है। हैजेकी सभी अवस्थाओंमें आर्सेनिक प्रयोग किया जा सकता है।

किउप्राम मेट ६, १२, ३०।—हैजेके अन्यान्य उपसर्गके साथ जब आक्षेप उपस्थित होता है; तब किउप्रामका व्यवहार किया जाता है। सर्व्वाङ्ग शीतल या नीलवर्ण हाथ-पैरका विशेषतः हाथ-पैरकी उंगलियोंका और पैरकी मांसपेशीका अकड़ना, अस्थिरता या छटपटाना, तारजैसी क्षीण नाड़ी या विलुप्तप्राय नाड़ी, आंखोंका टंग या धंस जाना, कानोंसे कम सुनाई देना या सुनाई ही न देना, पानीय द्रव्यके

गलेमे नीचे उतरते समय कल-कल या घट-घट शब्द होना, ठण्डी चीज खानेकी अपेक्षा गर्म्म चीज खानेकी अभिलाषा, वमन या वमनेच्छा और उसके साथ अतिशय पेटका दर्द, शीतल जल पीनेसे वमनकी निवृत्ति, वमन करते समय आँखोंसे जल निकलना, गुह्यद्वारमें खुजली, जुबान ऐंठ जानेसे अस्पष्ट बात, जलवत् गोटा-गोटा दस्त-के, मूत्रत्यागकी प्रवृत्ति, किन्तु पेशाब न होना, खूब श्वास-प्रश्वास, प्रलाप, चीत्कार करना, हाथ-पैरका ऐंठना, दाँत पीसना आदि लक्षणमें यह औषधि प्रयोज्य है।

आक्षेपयुक्त सांघातिक हैजेमें जब खाद्यकी नलीमें उपता होनेसे औषधि या खाद्यद्रव्य उदरस्थ होते ही निकल जाता है, तब किउप्राम देनेसे पी या खाई चीजके धारणकी क्षमता आ जाती है। डाक्तर प्रकरका कहना है, कि शरीरकी ऐंठन मिटानेके लिये किउप्राम बहुत ही अच्छी दवा है।

रिसिनास ३, ६।—वेदनाहीन के-दस्त, प्रचुर परिमाणमें चावलके धोवनजैसा मल, पेशाब बन्द।

सिकेलीकर ३, ६।—किउप्रामके प्रयोगसे आक्षेपादिकी निवृत्ति न होने; तिसपर निम्नलिखित लक्षणोंके प्रकट होनेपर सिकेली प्रयोग करना उचित है। मृत्युभय, आँखोंका बैठ जाना, कानोंसे कम सुनाई देना, मुखमण्डल मलिन शुष्क और रक्तहीन, साफ और सफेद जिह्वा और रह रहकर काँप उठे, अतिशय प्यास तथा क्षुधा वमन या

वमनेच्छा, पाकस्थलीमें ज्वाला, मूत्ररोध, छातीके बायें एंठन-जैसा दर्द, गात्रदाह और उसकी वजह शरीरका वस्त्र बरदाश्त न होना, हाथ-पैरका कांपते या हिलते रहना, मुंहका टेढ़ा हो जाना, गुदामें खुजली और बेखबरीमें पायखाना हो जाना आदि लक्षणमें सिकेली विशेष उपयोगी है। हैजेकी पतनावस्थामें यह फलप्रद औषधि है। हाथ-पैरका अकड़ना, सर्वाङ्ग विशेषतः मुखमण्डलका नीलवर्ण हो जाना, धनुष्टङ्कारकी तरह पीछे झुक जाना, क्रिमि या श्लेष्मा वमन और वमनके बाद आराम आदि इस औषधिके प्रधान लक्षण हैं।

एकोनाइट रेडिक्स 0, १X।—कै-दस्तके साथ ही सर्व्वाङ्गका शीतल होना, सारे शरीरका नीलवर्ण होना, श्वास-प्रश्वासका दारुण कष्ट। पेटमें अत्यन्त वेदना, मुखमण्डल मलिन, जलजैसा तरल दस्त, जलजैसा काला या पित्त वमन, मूत्रावरोध; सिर घूमना. श्वास-प्रश्वास शीतल; लुप्तप्राय क्षीण नाड़ी और कभी-कभी पेटमें मरोड़ होना आदि लक्षणमें।

हिमाङ्ग अवस्था और प्रतिक्रिया अवस्थामें यदि गात्रताप न हो, तो एकोनाइट रेडिक्स १x देना चाहिये।

पतनावस्थामें हृत्पिण्डकी क्रियाकी क्षीणता, फिर भी, हृद्-स्पन्दनकी सबलता व्याकुलता और मृत्युभय, पतनावस्थामें श्लेष्मामय लसदार दस्त होते रहनेमें एकोनाइट रेडिक्स १x देना चाहिये हैजेके परिणामावस्थामें ज्वर होनेपर

गलेसे नीचे उतरते समय कल-कल या घट-घट शब्द होना, ठण्डी चीज खानेकी अपेक्षा गर्म्म चीज खानेकी अभिलाषा, वमन या वमनेच्छा और उसीके साथ अतिशय पेटका दर्द, शीतल जल पीनेसे वमनकी निवृत्ति, वमन करते समय आँखोंसे जल निकलना, गुह्यद्वारमें खुजली, जुबान ऐंठ जानेसे अस्पष्ट बात, जलवत् गोटा-गोटा दस्त-के, मूत्रत्यागकी प्रवृत्ति, किन्तु पेशाब न होना, खूब श्वास प्रश्वास, प्रलाप, चीत्कार करना, हाथ-पैरका एंठना, दाँत पीसना आदि लक्षणमें यह औषधि प्रयोज्य है।

आक्षेपयुक्त सांघातिक हैजेमें जब खाद्यकी नलीमें उग्रता होनेसे औषधि या खाद्यद्रव्य उदरस्थ होते ही निकल जाता है, तब किउप्राम देनेसे पी या खाई चीजके धारणकी क्षमता आ जाती है। डाक्तर प्रकृरका कहना है, कि शरीरकी एंठन मिटानेके लिये किउप्राम बहुत ही अच्छी दवा है।

रिसिनास ३, ६।—वेदनाहीन के-दस्त, प्रचुर परिमाणमें चावलके धोवनजैसा मल, पेशाब बन्द।

सिकेलीकर ३, ६।—किउप्रामके प्रयोगसे आक्षेपादिकी निवृत्ति न होने; निम्नलिखित लक्षणोंके प्रकट होनेपर सिकेली प्रयोग करना उचित है। मृत्युभय; आँखोंका बैठ जाना, कानोंसे कम सुनाई देना, मुखमण्डल मलिन शुष्क और रक्तहीन, साफ और सफेद जिह्वा और वह रह-रहकर काँप उठे, अतिशय प्यास तथा क्षुधा, वमन या

अतिनिद्रा, पाकस्थलीमें ज्वाला, मूत्ररोध, हाथोंके बायें एँठन-जैसा दर्द, गात्रदाह और उसकी वजह शरीरका वस्त्र बरदाश्त न होना। हाथ-पैरका कांपते या हिलते रहना, मुंहका टेढ़ा हो जाना, कुथनसे खुलकी और बेखबरीमें पाखाना हो जाना आदि लक्षणोंमें सिकेली विशेष उपयोगी है। हैजेकी पतना-वस्थामें यह फलप्रद औषधि है। हाथ-पैरका अकड़ना, सर्वाङ्ग विशेषतः मुखमण्डलका नीलवर्ण हो जाना, धनुष्टङ्कारकी तरह पीछे झुक जाना, क्रिमि या ढेला वमन और वमनके बाद आराम आदि इस औषधिके प्रधान लक्षण हैं।

एकोनाइट रेडिक्स 0, १X।—कै-दस्तके साथ ही सर्वाङ्गका शीतल होना, सारे शरीरका नीलवर्ण होना, श्वास-प्रश्वासका दारुण कष्ट। पेटमें अत्यन्त वेदना, मुखमण्डल मलिन, जलजैसा तरल दस्त, जलजैसा काला या पित्त वमन, मूत्रावरोध, सिर घूमना, श्वास प्रश्वास शीतल, लुप्तप्राय लोप नाड़ी और कभी-कभी पेटमें मरोड़ होना आदि लक्षणोंमें।

हिमाङ्ग अवस्था और प्रतिक्रिया अवस्थामें यदि गात्रताप न हो तो एकोनाइट रेडिक्स देना चाहिये।

पतनावस्थामें हृत्पिण्डकी क्रिया बन्द होनेपर भी हृद-स्पन्दनकी मन्दता, व्याकुलता और मृत्युभय पतनावस्थामें हैजामय लगातार दस्त होते रहनेमें एकोनाइट रेडिक्स देना चाहिये। हैजेकी प्रतिक्रियावस्थामें ज्वर होनेपर

बेलेडोना ३ x और एकोनाइट रेडिक्स १ x पर्यायक्रमसे प्रयोज्य है।

एण्टिमटार्ट ६, ३०।—पूर्ण विकसितावस्थाके अन्तिम भागमें जब वमनके बाद ही मूर्च्छा या मूर्च्छावेश हो और फिर वमनके समय चैतन्य हो, तो एण्टिमटार्ट देना चाहिये। उल्लिखित लक्षणके साथ छातीमें ज्वाला या वेदना, तन्द्राभिभूत होना या निश्चेष्ट भावसे पड़े रहना, किसी बातका जवाब देनेमें अनिच्छा, वारंवार कातरोक्ति, श्वास अधिक,—प्रश्वास कम; क्षीण और मृदु नाड़ी, जलवत् या फेनदार हरे रङ्गका मल; बेखबरीमें पायखाना होना, कष्टकर वमनेच्छा बहुत कष्टसे सामान्य वमन, आँखोंका कोटरोंमें जा घुसना और दृष्टिक्षीणता प्रभृति लक्षणोंमें एण्टिमटार्ट देना चाहिये।

पतनावस्थामें हृत्पिण्डकी क्रिया लोप होनेकी आशङ्का होनेपर एण्टिमटार्ट देना चाहिये। वेराट्राम और एण्टिमटार्टके लक्षण प्राय: एक प्रकारके हैं। फिर भी, मांसपेशीका कम्पन और अभिभूतका आधिक्य होनेसे एण्टिमटार्ट देना चाहिये। हृत्पिण्डकी दुर्बलता या पक्षाघातमें वेराट्रामसे कोई लाभ न होनेपर इस औषधिकी व्यवस्था करना चाहिये।

आइरिस वर्स ३X।—नाभिकी चारो ओर और तलपेटमें वेदनाके साथ अम्लगन्धविशिष्ट के-दस्त, सादा या पित्तयुक्त जलीय दस्त, अम्ल वमन और पित्तयुक्त पतला दस्त

पिछली रात्रिको रोगका आक्रमण, मुक्त द्रव्यका कणविशिष्ट वमन इसके बाद पित्तवमन और गात्रदाह, पसीना और मुखमें ज्वाला प्रभृति लक्षणमें। उल्लिखित लक्षणोंके साथ सारे शरीरमें शीतलता रहनेसे इससे कोई उपकार नहीं होता।

इपिकाक ३X, ६।—हैजेके अन्यान्य लक्षणके साथ उज्ज्वल लालवर्ण रक्तका दस्त। इस दस्तमें श्लेष्मा नहीं रहता।

मारकिउरियस कर ३।—हैजेके अन्यान्य लक्षणके साथ चावलके धोवनजैसे दस्तके बदले रक्तमिश्रित श्लेष्मा-स्राव होने और उदरामयके उपरान्त हैजा होनेपर मार्क-कर विशेष उपयोगी है।

क्रोटन टिग ३, ६।—चावलके धोवनजैसे दस्तके बदले पटपटा श्लेतवर्णका तरल दस्त; पहले वमन, फिर दस्त; सर्व्वाङ्गीन शीतलता, शीतल पसीना; हाथ-पैरमें ऐंठन; पेटमें गड़गड़ाहट आदि लक्षणोंमें इसे देना चाहिये।

मात्रा।—पीड़ाकी प्रबलताके अनुसार दस, पन्द्रह या बीस मिनटके बाद या आध घण्टेके अन्तर एक-एक मात्रा औषधि देना चाहिये।

आनुषंगिक उपाय।—बीमारीके आरम्भ होते रोगी-

नाड़ी प्रभृति लक्षण दिखाई दें, तो अवस्थाका विचारकर २।३ मात्रा कैम्फर देते ही उपकार होता है।

पतनावस्थासे पहले यदि आरसेनिक, वेराट्राम, किउप्राम सिकेलीकर और एकोनाइट प्रभृति औषधियोंका प्रयोग हुआ न हो, तो हिमाङ्ग अवस्थामें इन सब औषधियोंका प्रयोग लक्षणके अनुसार करना चाहिये।

कारबोवेज ६, १२, ३०।—हिमांगमें कारबोविज बड़े कामकी औषधि है। सर्व्वाङ्ग बरफजैसा शीतल; जिह्वा शीतल और नीलवर्ण; लुप्तप्राय नाड़ी. कोटरमें घुसी आंखें; कपोल और गलेमें विन्दु-विन्दु पसीना; स्वरभङ्ग या अस्पष्ट वाक्य; दस्त-के बन्द हो जानेसे छाती फूल जाना, अतिशय श्वासकष्ट; अत्यन्त दाह, सर्व्व शरीर नीलवर्ण प्रभृति लक्षणमें कारबो-वेज प्रयोग किया जाता है। यदि इस अवस्थासे पहले वेराट्राम या आरसेनिक प्रयोग न किया गया हो, तो इसके साथ पर्य्यायक्रमसे प्रयोग करनेसे यथेष्ट उपकार होनेकी सम्भावना है। पेट फूलनेके साथ दुर्गन्ध मल कारबोविज प्रयोगका निर्द्दिष्ट लक्षण है।

एसिड हाइड्रो ३, ६।—मृतवत् आकार; धीरे-धीरे श्वास-प्रश्वास ठण्डा पसीना नाड़ी लोप भारी देह—विशेषत: जिह्वा शीतल अक्ष नेत्र या पूर्ण विस्फारित चक्षु, हाथ पैरके

नख नीलवर्ण और अग्रभाग कुञ्चित; अचैतन्यावस्थामें पड़े रहना और बकना-झकना आदि लक्षणमें यह दवा देना चाहिये।

आक्षेपिक हैजेकी प्रथमावस्थामें हाथ-पैर अकड़ना; छाती से गलेतकका जकड़ जाना और यन्त्रणा; पेटका धंस जाना तथा वेदना, हाथ पैरका शिथिल हो जाना तथा सारे शरीर का नीलवर्ण हो जाना आदि लक्षणमें एसिड हाइड्रो देना उचित है।

एकोनाइट नेपेलास 0, १X ।—हृत्पिण्डकी दौर्बल्य, किन्तु हृद्स्पन्दनमें समता, अत्यन्त अस्थिरता, मृत्युभय, सारा शरीर शीतल और मृतवत् आकृति प्रभृति लक्षणमें यह औषधि व्यवस्थेय है। एकोनाइट प्रयोगसे नाड़ी उन्नित और जीवनी शक्ति उत्तेजित होती है। डाक्टर सामन्नर कहते हैं, कि एक बिन्दु मदर टिंक्चर तीन आउन्स जलमें मिला पांचसे तीस मिनटके अन्तरपर एक ड्राम परिमाणसे एक एक बार सेवन करना उचित है।

कोप्रा ६ ।—बारंबार श्वासरोध होनेका उपक्रम; पेट फूलना, सारा शरीर नीलवर्ण और रक्तपूर्ण शिराओंका फूलना प्रभृति लक्षणमें।

मात्रा ।—अवस्थानुसार दश पन्द्रह या बीस मिनट के बाद

एक एक मात्रा औषधि देना चाहिये। कैम्फर, वेराट्रम, किउप्रम आर्सेनिक या सिकेली इत्यादि लक्षणानुसार आवश्यक हो सकते हैं। लक्षणादिका ज्ञान पीछे लिखा गया है।

प्रतिक्रियावस्थाकी चिकित्सा।—स्वाभाविक प्रतिक्रिया आरम्भ होनेपर किसी प्रकारकी औषधि प्रयोग करना उचित नहीं। उस समय पथ्यादिकी सुव्यवस्था करना ही कर्त्तव्य है। प्रतिक्रिया आरम्भ होनेपर दो-एक बार सामान्य दस्त होनेपर भी औषधि देनेकी आवश्यकता नहीं होती। यदि अवस्था कठकर हो जावे, तो लक्षण विशेषमें रोगकी प्रबल अवस्थामें जो सब औषधियाँ प्रयोग की जाती हैं; वही सब औषधियाँ कम मात्रा और कुछ देरसे प्रयोग करना उचित हैं।

(५) परिणामावस्थाकी चिकित्सा।—[क] रोगके पुनराक्रमणमें।—अनेक स्थलमें प्रतिक्रिया आरम्भ होनेके बाद फिर रोगका पुनराक्रमण होता है साधारणतः क्रिमिकी वजह से ऐसा होता है लक्षण विशेषमें पूर्वोल्लिखित औषधियोंका प्रयोग करना चाहिये

[ख] ज्वर और विकारके लक्षणमें।—प्रतिक्रिया अवस्थामें और कोई उपसर्ग नहीं केवल ज्वर ही हो ...

एकमात्र एकोनाइट प्रयोगसे लाभ होगा। किन्तु ज्वरके साथ यदि माथेमें रक्त एकत्र होनेसे चाहिं लाल हो जायें और कपाल आदिकी शिराओंमें धमक हो; मस्तकमें गर्मी प्रभृति लक्षण दिखाई दें, तो बेलडोना ६ या ३० देना चाहिये। रोगीके शय्यासे उठ भागनेकी चेष्टा करने या शय्यावस्त्र खींचने तथा कुछ कुछ प्रलाप बकनेसे हाइयोसायेमास ६ देना चाहिये। पेटमें क्रमि रहनेसे दांत पीसने, नासिकाग्रभाग खुजलाने; मुखसे जल निकलने और शिव-नेत्र प्रभृति लक्षणके साथ प्रलाप रहनेसे सिना ३० या २०० देना चाहिये। उन्मत्तकेसे लक्षण और पासके लोगोंको काटनेके लिये लपकने आदि लक्षणमें ष्ट्रामोनियम ६ देना चाहिये। घोर निद्राजैसी यचैतन्यावस्थामें पडे रहने; घर्द्ध निमीलित चक्षु आदि लक्षणमें ओपियम ६ या ३० देना चाहिये। ज्वरके साथ फेफड़ेकी जलन हो, तो ब्राइयोनिया ६ और फासफोरस ६ देना उचित है। पाकस्थलीमें ज्वाला या प्रदाह हो, तो आरसेनिक ६, नक्स-वमिका ३० या २०० और ब्राइयोनिया ३० देना उचित है। यकृत आक्रान्त होकर यदि प्रदाहयुक्त हो, तो ब्राइयोनिया ६ नक्सवमिका ३० और मार्क-सल ३० देना चाहिये। ज्वरके साथ अतिसार हो, तो मार्क कर, नक्सवमिका, इपिकाक, कारबोवेज और एसिड फस देना उचित है। मूत्रनाश और मूत्रस्तम्भ होनेपर एकोनाइटके साथ कान्थारिस ६ या टेरिबिन्थिना ६ पर्यायक्रमसे देना चाहिये।

[ग] मूत्रनाश और तन्द्रादोष ।—प्रतिक्रिया आरम्भ होनेके बाद मूत्रनाश या मूत्रस्तम्भके कारण उदर स्फीत और प्रलाप तथा आक्षेप उत्पन्न होनेसे क्यान्थारिस विशेष उपयोगी होता है । क्यान्थारिस ६, मूत्रक्षय और मूत्रनाशकी महौषधि है । मूत्रक्षयजनित तन्द्रादोष रहनेसे आरसेनिक देना चाहिये। क्यान्थारिसके प्रयोगसे उपकार दिखाई न दे ; साथ-साथ नाड़ी क्षीण हो जावे, तो टेरिबिन्थिना ६ देना चाहिये । डाक्टर सरकारका कहना है, कि दो-तीन बार क्यान्थारिस देनेपर यदि उपकार न हो, तो टेरिबिन्थिना देना चाहिये । मूत्रनाश और उसीके साथ नाड़ी पुष्ट रहनेपर क्यालिबाइक्रम ६ देना चाहिये । एक पाव शीतल जलमें एक छटांक शोरा मिला उस जलमें कपड़ा तरकर नाभिके ऊपर जलपट्टी रखनेसे उपकार होनेकी सम्भावना है ।

उल्लिखित औषधियोंका प्रयोग करनेपर भी पेशाब न होने और इसलिये सिरका विकार दूर न होनेसे हेलिबोरस ; ष्ट्रामोनियम, हाइयोसायमस, माइकिरटा, ओपियम; क्यानाबिस-इण्डिका प्रभृति लक्षणानुसार देना चाहिये ।

[घ] हिचकी ।—पतनावस्थाके बाद प्रतिक्रिया आरम्भ होनेपर [illegible] हिचकी आती दिखाई देती है । वेराट्राम ३x और आरसेनिक ३x के प्रयोगसे हिचकी न मिटे तो [illegible] ओपियम [illegible] बार बार हिचकी और [illegible]

चाहिये। इन सब दवाओंमें भी यदि उपकार न हो, तो निम्नलिखित दवाओंको देना चाहिये।

पेशाब होनेके बाद उदरामय और स्नायविक दुर्बलताके लक्षणमें एसिडफस ६ या ३०। यकृतमें वेदना और पित्तयुक्त थोड़ा-थोड़ा पतला दस्त होनेपर पडोफाइलम ६। पेटके कुछ फूल आने और उसमें गड़गड़ाहट होनेके साथ-साथ पीले रङ्गका थोड़ा दुर्गन्धमय मलस्राव होनेसे चायना ६, ३०। फिरम और चायनाका प्रयोग पर्य्यायक्रमसे होनेसे उदरामय और दुर्बलताका उपशम होता है। लगदार श्लेष्मामय, कभी-कभी रक्तान्त्र सह; यकृतमें वेदना, कुछ श्वेतवर्णकी आभावाली पीले रङ्गकी आंवें और मुखमें दुर्गन्धके लक्षणमें मार्क-सल ६। मलिनहरिद्राभ तरल दस्त होनेपर रसटक्स या रिसिनास ६। रक्तका दस्त होनेपर कारबोवेज ६ और उज्ज्वल लाल रङ्गका दस्त होनेपर इपिकाक ६ या ३०।

[छ] पेट फूलना।—प्रतिक्रिया आरम्भ होने अथवा प्रतिक्रियाके बाद कभी-कभी पेट फूलना दिखाई देता है। एलोपेथिक मतसे दवा होनेपर अफीमसे मिली औषधि व्यवहार करनेसे पेट फूल सकता है। उदरामयके साथ पेट फूलनेपर कारबोवेज ३०, कोठबद्धताके साथ पेट फूलनेपर लाइकोपडियम ३०, ओपियम ३० या मार्क-सल ६ देना चाहिये।

[ज] दुर्बलता।—हैजेका परिणामावस्थाके बाद रोगी-

के शरीरमें रक्त बिलकुल ही नहीं रहता। कुछ पीले रङ्गसे मिला हुआ श्वेत वर्णका गात्र; कोटरमें घुसी हुई आँखें; स्वर-भङ्ग प्रभृति लक्षण दिखाई देते हैं। रोगी इतना दुर्ब्बल हो जाता है, कि उसमें उठनेकी भी शक्ति नहीं रहती। इस अवस्थामें चायना ३० या एसिड-फस् ३० उपकारी होता है।

[झ] स्फोटक और कर्णमूलप्रदाह।— प्रतिक्रियाके बाद शरीरके किसी स्थानमें फोड़ा फुन्सी होने और उसमें मवाद आ जानेसे हिपर सलफर ६ और फोड़ेके फूटने या उसमें नश्तर दिलवा देनेसे पीब निकलनेपर साइलिसिया ३० देना चाहिये। कर्णमूल-ग्रन्थिके फूलकर लाल, उत्तप्त और कठिन वेदनायुक्त हो जानेपर बेलेडोना ३x; पीब उत्पन्न होनेपर ल्याकेसिस ६ और साइलिसिया ३०; शय्याक्षत होने और उससे रस निकलनेपर ल्याकेसिस ६, आर्सेनिक ६ या कारबोवेज ६ देना चाहिये। मुख या मसूढ़ोंमें ज़ख्म होनेपर एसिड नाइट्रिक ६, हिपार-सल्फ ६, या कारबोवेज ६; आँखमें क्षत होनेपर चायना ६, सलफर ३० या पलसेटिला ६ देना चाहिये।

[ञ] फेफड़ेमें जलन।—एकोनाइट ३ और फसफोरस ६ इस रोगकी प्रधान औषधि है। इस ग्रन्थका 'फेफड़ेकी जलन' प्रकरण भी देखना चाहिये।

प्लेग या महामारी ।

मिश्र-देश महामारीका सूतिका गृह है। अबसे कोई चौबीस सौ वर्ष पहले उस देशमें यह रोग प्रादुर्भूत हुआ था। खृष्टीय ६ ठीं शताब्दीसे १८ वीं शताब्दीतक इसका पराक्रम प्रकाशित हुआ।

सन् १८१५ ई० में भारतवर्षमें इसके पहले-पहल आनेका जिक्र है। वर्त्तमान महामारी सन् १८९६ ई० में हाङ्गकाङ्ग-से लाई गई। यह स्पर्शाक्रामक रोग है। किसीके मतसे जीवाणु (Bacillus), फिर किसी किसीके मतसे भूद्गत वाष्प विशेष (effluvium) का एक तरहका विष स्पर्श या निश्वास द्वारा शरीरस्थ होनेपर यह रोग उत्पन्न होता है। रोगकी अङ्कुरावस्थामें यानी शरीरमें विष घुसनेके मुहूर्तसे ज्वर आरम्भ होनेतक सिवा शरीरकी दुर्बलता और मनकी अप्रसन्नताके और कोई विशेष लक्षण दिखाई नहीं देता। यह अवस्था ५।७ घण्टेमें ५।७ दिनतक रहनेके बाद दारुण शीत और कम्प, शरीरके तापका १०७ डिगरी हो जाना; मस्तिष्कमें वेदना, वमन, प्रलाप तथा चैतन्यलोप, बलक्षयकारी पसीना, शारीरिक किसी यन्त्रसे रक्त निकलनेसे नितान्त दुर्बलता आदि एकाएक सन्निपात ज्वरके लक्षण प्रकट होते हैं और २।४ दिनमें जांघ, बगल या गलेमें गिल्टी (Bubo) निकल आती है। कभी कभी रोगके ज्वराक्रान्त होनेके

४।५ घण्टे बाद ही यानी अन्यान्य लक्षणोंके प्रकट होनेसे पहले ही रोगी रक्त वमन करता हुआ प्राणत्याग करता है। उक्त होनेके उपरान्त ४।५ दिनके भीतर गिल्टीका पक जाना और ज्वरत्याग सुलक्षण है।

डाइमन और कलवर्ट नामक चिकित्सकोंने चिकित्सा-की सुविधाके लिये चार प्रकारके प्लेगका उल्लेख किया है,—

१। सेप्टिसेमिक (Septicæmic) प्लेग। इसमें देहके कुल यन्त्र आक्रान्त होते हैं।

२। बिउबोनिक (Bubonic) प्लेग। इसमें लिम्फेटिक ग्लाण्ड समूह विशेषरूपसे आक्रान्त होते हैं। यानी जांघ, बगल, गला आदिमें गिल्टी दिखाई देती है।

३। निउमानिक (Pneumonic) प्लेग। इसमें फेफड़ा विशेषरूपसे आक्रान्त होता है। यानी सूखी खांसी, छातीमें दर्द, श्वासकष्ट प्रभृति लक्षण प्रकट होते हैं।

४। इण्टेष्टाइनेल (Intestinal) प्लेग। इसमें आंतें विशेषरूपसे आक्रान्त होती हैं। यानी पीठ, तलपेट और कमरमें वेदना, पेट फूलना, कै-दस्त प्रभृति लक्षणका आधिक्य दिखाई देता है।

प्रतिषेधक।—एक इग्नेसिया बीन (Ignatia-Bean) ले उसके मध्यभागमें छिद्रकर उसमें धागा पिरो दाहने या बायें बाजू या कमरमें बांध देना चाहिये।

चिकित्सा :—

(१) अङ्गावस्था—इग्नेसिया ३।

(२) ज्वरावस्था—

(क) प्रारम्भमें प्रलाप रहनेसे—बेलेडोना ६।

(ख) पूर्ण विकारमें जब रक्त दूषित हो और सारे शरीरके यन्त्र आक्रान्त हों यानी सेप्टिसेमिक लक्षणमें—ल्याशा ३, ६।

(ग) गिल्टी निकलनेमें यानी बिउबोनिक लक्षणमें बेडियागा १x सेवन और बेडियागा १ x गिल्टीके ऊपर बाह्य प्रयोग करना चाहिये। इस औषधिसे प्रायः ही गिल्टी बैठ और रोग दूर हो जाता है।

(घ) फेफड़ेके आक्रान्त होनेपर यानी निउमानिक लक्षणमें फसफोरस ६, ३०।

(ङ) आँतोंके आक्रान्त होनेपर यानी इण्टेष्टाइनल लक्षणमें आरसेनिक ६, ३०।

(च) हिमाङ्ग (Collapse) होनेपर हाइड्रोसियानिक एसिड ६।

कोब्रा या ल्याशा ३ विचूर्ण इस रोगकी महौषधि है।—निम्नलिखित लक्षणोंमें यह विशेषरूपसे उपयोगी है:— सर्वाङ्गमें वेदना, अस्थिरता, श्वासकष्ट, अवसन्नता मानो रोगी मरते हो, नाड़ीशून्य; आँखों शक्तिका ह्रास रक्तनि:सरण, अमनाड़ी, सारा शरीर नीलवर्ण। जिगरमेंका शक्ति

ज्वर।

शरीरकी ताप-वृद्धिको लोग अकसरावर 'ज्वर' कहा करते हैं। शरीरके किसी अंश या यन्त्रमें प्रदाह या किसी तरहका विष रक्तमें पहुँचनेपर ज्वरकी उत्पत्ति होती है। ज्वर कई तरहके होते हैं। इनमें सामान्य ज्वर, एकज्वर, सविराम ज्वर और सान्निपातिक विकार ज्वर इस देशमें प्रबल है।

सामान्य ज्वर। (Simple Fever.)

हिम लगना, वृष्टिमें भीगना, तेज धूपमें घूमना, अपरिमित पान-भोजन या परिश्रम प्रभृति कारणसे यह ज्वर उत्पन्न होता है।

चिकित्सा।—एकोनाइट ३x, दो तीन घण्टे के अन्तरमें एक बिन्दु। शिरःपीड़ा, चक्षु रक्तवर्ण प्रभृति लक्षणमें बेलेडोना ६। सर्व्वाङ्गमें, विशेषतः कमरमें वेदना रहनेसे रूस-टक्स ६। अपरिमित पान-भोजनके बाद ज्वर आनेसे पल्सेटिला ६। जलमें भीगनेसे ज्वर आनेपर डालकेमारा ६।

एकज्वर। (Continued Fever)

कारण।—ऋतु परिवर्त्तन अत्यन्त गर्म या अत्यन्त ठण्डक लगना, आर्द्र वस्त्र पहनना सहसा पसीना बन्द

प्रलाप और शिरोवेदना रहे, तो बेलेडोना एकोनाइटके साथ पर्य्यायक्रमसे प्रयोग करना चाहिये।

आइग्नेशिया एमरा ६, १२, ३० । — सिर भारी; गलेकी शिरा, मस्तक, गर्दन, हाथ, पैर और पीठमें वेदना; हिलने-डोलनेमें वेदनाकी वृद्धि, श्वासकष्ट और सूखी खांसी; पाकस्थलीमें जलनदार वेदना, पीले रङ्गकी जिह्वा; खाया हुआ द्रव्य, श्लेष्मा और पित्त वमन; मुखमण्डल पीला; यकृत-प्रदेशमें वेदना। देहकी उत्ताप कभी कम, कभी अधिक; नाडी तेज, अरुचि, डकार होनेपर तिक्तस्वाद और मुख कसैला।

जेलसिमियम १X । — एकोनाइटसे ज्वर घटनेपर; विशेषकर बच्चोंके एकज्वरमें यह औषधि प्रयोग की जाती है।

बेराट्राम विरिडि १X । — नाडी पूर्ण, कठिन और तेज; जिह्वा पीली और मध्यभागमें लाल रेखाविशिष्ट, सिर घूमना और सिरमें दर्द विशेषकर माथेके अगले भागमें बहुत दर्द, वमनेच्छा, गात्रिक दुर्बलता।

इउपेटोरियम पार्फो ३ । — शिरोवेदना, वमनेच्छा या पित्तवमन, जलपान के बाद ही वमन, कम्प होनेके समय पित्तवमन, अस्थि वेदना।

बाल रोग का एकज्वर देखना चाहिये।

जाता है। कोई कोई ज्वर नित्य एक ही समय आरम्भ होता है। फिर; किसी किसी ज्वरके आनेका कोई समय ठीक नहीं रहता। कोई ज्वर आज एक समय, कल उस समयसे दो या एक घण्टा पहले ही आ जाता है। ऐसा ज्वर भयङ्कर होता है। ऐसा ज्वर यदि पहले दिनके समयको अपेक्षा दो एक घण्टा बाद आये, तो शुभलक्षण है।

प्रधानतः कुइनाइनके अव्यवहारसे प्लीहा और यकृत बढ़ता और शोथ तथा उदरी होती है।

मलेरिया एक तरहकी विषाक्त वायु है, यह विष शायद सड़े हुए उद्भिद्का निकला वाष्प है।

ऐसे ज्वरकी साधारणत. तीन अवस्थायें दिखाई देती हैं, शीतावस्था, उष्णावस्था और घर्म्मावस्था। शीतावस्थामें पहले शीत, बादको कम्प जान पड़ता है। समय-समयपर इतना कँपाके ज्वर आता है, कि तीन चार लिहाफ ओढ लेनेसे भी शीत नहीं जाती। इसीके साथ साथ शरीरमें वेदना, माथेमें धमक, प्यास, कभी-कभी धीरे-धीरे खांसी आदि लक्षण प्रकट होते हैं। उष्णावस्थामें प्राय ही माथेमें दर्द, मुखमण्डल रक्तवर्ण, गात्रत्वक् शुष्क, प्यास श्वास प्रश्वासमें कष्ट आदि लक्षण प्रकट होते और शरीरका ताप १०२ से १०७ डिगरीतक पहुँच जाता है। गात्रदाह उपस्थित होते ही शीत घट जाता है। कई घण्टे बाद घर्म्मावस्था उपस्थित होती है। इसमें खूब पसीना आता और ज्वर उतर जाता है।

वार आनेवाले ज्वरमें, कुइनाइनके अपव्यवहारजनित विषम ज्वरमें, धीरे-धीरे आनेवाले ज्वरमें, प्लीहा यकृतसंयुक्त पुराने ज्वरमें, शोथ होनेपर यह औषधि बड़ा उपकार करती है। हाथ पैरकी शीतलताके साथ ज्वर आरम्भ होना, कम्प होनेसे पहले गात्रतापकी वृद्धि और जलानेवाला उत्ताप, दुर्निवार प्यास किन्तु थोड़ा जल पीते ही प्यासकी शान्ति; श्वासकष्ट, अन्न या जलीय पदार्थके पान करते ही वमनोद्वेग, जिह्वाकी परिच्छन्नता; एकबार ज्वर आते ही रोगीका नितान्त निर्बल हो जाना प्रभृति लक्षणमें आरसेनिक अमोघ औषधि है।

आरनिका मण्टेना ६।—प्रातःकालीन विषम ज्वरमें। शीतसे पहले खूब जुम्हाई आना, अत्यन्त दुर्बलता; हड्डीके भीतर तीव्र वेदना, नर्म बिस्तरका भी कठोर जान पड़ना और इसलिये बारबार करवटें बदलना; मस्तक और मुखमण्डल उत्तप्त, किन्तु अन्य अङ्ग शीतल; पसीनेका अभाव प्रभृति लक्षणमें, और सामान्यज्वरमें; भीतर शीत बाहर उत्ताप, जलपान या बाह्य उत्तापमें शीत-वृद्धि प्रभृति लक्षणमें।

इपिकाक ६, १२, ३०।—पाकस्थलीकी क्रिया बिगड़ जानेकी वजह वमनोद्यम या वमन, पीले रङ्गकी जिह्वा;

इसीके साथ-साथ नाककी खरखराहट ; पसीना होनेके बाद अत्यन्त दाह। विषम ज्वरमें अत्यन्त शीत तथा कम्पके साथ ज्वरारम्भ ; प्रबल शीतावस्थामें निद्रा और अङ्गस्पन्दन ; प्यासका न रहना ; उत्तापावस्थामें अतिशय पसीना।

क्याकटस १।—विषमज्वरमें। ठीक एक ही समय ; विशेषत: दोपहरके समय शीतके साथ ज्वर आरम्भ ; इसके बाद ज्वालाकर दाह और खूब श्वास-प्रश्वास ; अन्तमें शीतावस्थामें विन्दु-विन्दु पसीना ; अत्यन्त प्यास ; पीठमें शीत ; हथेली बरफजैसी ठण्डी।

चायना ६, १२, ३०, २००।—नाड़ी क्षुद्र, द्रुत और अनियमित ; भोजनके उपरान्त नाड़ीका वेग कम और तन्द्रावेश ; प्लीहा और यकृतकी वृद्धि और वेदना ; जलवत् या गोंदजैसा लसीला या पित्तमिश्रित उदरामय ; शीत और उष्ण अवस्थाके मिटनेसे पहले तथा बादको प्यास ; ज्वर प्रारम्भ होते ही दिलका धड़कना ; अत्यन्त शिरोवेदना ; बाहरी नसोंका फूल जाना ; शीतावस्थामें शिरःपीड़ा ; सर्वाङ्गमें शीत, वमनोद्रेग और प्यासका अभाव, दाह अवस्थामें मुख-होठका सूख जाना तथा ज्वालाबोध, दाहावस्थाके बाद प्यास और बहुत पसीना। कुइनाइनके अपव्यवहारसे उत्पन्न

विषमज्वरमें चायनासे उपकार नहीं होगा। हां तो चायना

२०० से उपकार हो सकता है। सायमाके सत्तमर्दीना ज्वर रातको कभी नहीं आता।

जेलसिमियम १X,६ । — नाड़ी क्षीण, कोमल और द्रुत, पीठमें शीत लगनेपर ज्वर आरम्भ, पीठ या मस्तिष्कमें वेदना, प्रति दिन तीसरेपहर ज्वर आरम्भ; हतेली और तलवेका बरफकी तरह शीतल हो जाना; मस्तक उत्तप्त और मुख लालवर्ण, उत्तापावस्थामें रोगीका स्थिरभावसे पड़ा रहना, प्यासका प्रायः हो जाना न पड़ना।

नक्सवमिका ६, १२, ३० ।—प्रातःकालीन ज्वरमें; तीसरेपहर, सन्ध्या समय या रातको ज्वर आते ही हाथ-पैरकी ऐंठना, भीतर शीत और बाहर ताप या बाहर शीत भीतर ताप, अत्यन्त दाहावस्थामें शरीरका वस्त्र हटा देने-पर भी शीतानुभव, वमनेच्छा, सिर घूमना; कोष्ठबद्ध; हाथ पैरके नाखूनोंका नीलवर्ण हो जाना; बाह्य उत्तापसे भी शीतका न मिटना, शीतावस्थामें कंपाकर शीत; क्रम क्रमसे शीतकी वृद्धि, शीतमें पहले सा उत्ताप; बादको भी उत्ताप, प्रातःकाल और आधी रातको अत्यन्त पसीना।

नेट्रम-मिउरियेटिकम ३० ।—दिन १०।११ बजे अ-त्यन्त [illegible] और [illegible] मात्र ज्वरारम्भ, उत्तापावस्थामें और [illegible] [illegible] [illegible] गोर पनि शीर्ण, प्रीवा [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ज्वरको समाप्तिमें निस्तेज-

सान्निपातिक विकारज्वर ।

Remittent fever with Typhoid Symptoms.

यह ज्वर प्रधानतः आँतोंपर आक्रमण करता है ; इसलिये आन्त्रिक ज्वर कहलाता है। इसका दूसरा नाम आन्त्रश्लेष्मा-विकार है। सड़ा हुआ मल ; पयःप्रणाली या ड्रेन और सड़ी हुई लाशसे निकलनेवाली एक तरहकी विषाक्त वायु इस रोगकी उत्पत्तिका कारण है। इस विषके शरीरमें प्रवेश करनेके उपरान्त ५।७ दिनतक कोई विशेष उपसर्ग दिखाई नहीं देता। इसके उपरान्त रोग प्रकट होता है। उस समय रोगी चारपाई पकड़ लेता और उसकी देहमें निम्नलिखित उपसर्ग प्रकट होते हैं ;—पेट फूलना ; पेट दबानेसे दर्द जान पड़ना ; यकृतके निम्नभागको उंगलीसे दबानेपर एक तरहका शब्द अनुभव करना ; उदरामय और कभी-कभी आँतोंसे रक्तस्राव ; प्लीहाकी वृद्धि ; चावलके धोवन-जैसा या दालके शोरबेजैसा मलस्राव ; श्वास-प्रश्वाससे एमो-नियाकी गन्ध ; मस्तकके सामनेके भागमें वेदना ; सिर घूमना ; कानमें सां-सां शब्द होना ; सुनिद्राका अभाव ; समय-समयपर नाकसे रक्तस्राव ; अस्थिरता ; प्रलाप ; चौंक उठना या निश्चेष्टभावसे अधखुली आँखोंसे पड़े रहना। इस रोगके पूर्ण विकासके बादसे भोगके अन्ततक कभी-कभी पेट, छाती पीठ, हाथ, पैर और मुखपर लाल-लाल दाने दिखाई

भोग होता है। इसका विष शरीरमें प्रवेश करनेपर १०।१२ दिन बाद सर्दी, खांसी और छींक आती है। नाकसे जल बहने लगता है; आंखें रक्तवर्ण और सजल हो जाती हैं। कपालमें वेदना; स्वरभङ्गयुक्त खांसी, शिरःपीड़ाके साथ पीठ तथा हाथ-पैरके दर्दके साथ ज्वर आरम्भ होता है। इसके उपरान्त ३।४ दिन बाद दाम निकल आता है। यह ३।४ दिन रह आप ही मिट जाता, साथ साथ ज्वर दूर हो जाता है। एकाएक इस ज्वरके बढ़नेपर गात्रताप १०३ से १०६ डिगरीतक पहुँच जाता है। उस समय रोग कठिन आकार धारण करता है। रोगी प्रलाप बकने लगता और तन्द्राभिभूत हो जाता है। उस समय अरुचि, वमन और वमनोद्यम, कोठबद्ध या उदरामय, श्वासनली-प्रदाह, फेफड़ेका प्रदाह, श्वासकष्ट प्रभृति लक्षण प्रकट होते हैं। किसी-किसी रोगीको अतिसार या रक्तातिसार हो उसके जीवनमें संशय हो जाता है। हामका बैठ जाना या अति शय रक्तवर्ण या कृष्णवर्ण हो जाना अशुभ लक्षण है।

चिकित्सा।—सामान्य हामको चिकित्साका प्रयोजन नहीं।

एकोनाइट १, ३।—अत्यन्त ज्वर; पूर्ण, कठिन और द्रुत नाड़ी; बारंबार छींक, सजल चक्षु, कपालमें वेदना; शुष्क खांसी, गलेमें सुरसुराहट, कोठबद्ध, छातीमें वेदना, अस्थिरता।

पलसेटिला ३, ६ ।—(प्रतिषेधक) सन्ध्या समय और रात्रिको खाँसीकी वृद्धि और गलेमें खुरखुराहट ; नाकसे गाढ़ा श्लेष्मा या रक्त निकलना ; उदरामय ; पाकाशयका वैलक्षण्य ।

बेलेडोना ३, ६० ।—पूर्ण और कठिन नाड़ी, चक्षु और मुखमण्डल रक्तवर्ण ; खाँसते समय स्वरनालीमें वेदना ; स्वरभङ्ग ; मस्तक उत्तप्त ; तन्द्रामें रहना ; किन्तु निद्राका न आना ; एकाएक चौंक उठना ।

नाक-आँखसे जल निकलनेपर युफ्रेसिया ३ ; वमन या वमनोद्यमके साथ हरे रङ्गका आममय उदरामय और सूखी खाँसी रहनेसे इपिकाक ३ ; रोग मिटनेके बाद सूखी खाँसी रह जानेसे फासफोरस ६ ; खाँसीके सम्पूर्णरूपसे न मिटने या बढ़ जानेसे ब्राइओनिया ६ ।

आनुसंगिक उपाय ।—देहको पहले कुछ गर्म जलसे पोंछ सूखे वस्त्रसे पोंछ देना चाहिये । रोगीकी देहको ठण्डी हवासे बचाना चाहिये । ज्वरके समय शीतल जल, बारली, मिस्री और अरारूट सुपथ्य है ।

चेचक या शीतला । (Small Pox.)

चेचक बड़ा ही संक्रामक और स्पर्शाक्रामक रोग है । चेचक-का बीज या विष शरीरमें प्रवेश करते ही यह रोग होता है ।
[illegible] ...युक्त और असंयुक्त ।

संयुक्त चेचक।—दो, तीन चार या इससे अधिक दानोंके आपसमें मिले रहनेको संयुक्त चेचक कहते हैं। इन दानोंके पकनेसे पीब उत्पन्न होता है। मुखमण्डलमें; गलेके अन्दर, सिरमें और नाकमें इन दानोंके निकल आनेसे यह रोग सांघातिक हो सकता है। इस रोगके शरीरमें प्रवेश करनेके ११।१२ दिन बाद ज्वर आता है। इस ज्वरमें शीत, दाह, सर्वाङ्गमें वेदना, वमन प्रभृति उपसर्ग दिखाई देते हैं। ज्वर आनेके २।३ दिन बाद ही दाने दिखाई देते हैं। ५।६ दिनके अन्दर इन दानोंमें अच्छा मवाद हो पीब उत्पन्न होता है। ८।१० दिनके भीतर ही यह दाने सूखने लगते हैं। इस रोगमें ज्वर बढ़ जानेपर अनेक समयमें रोगीकी मृत्यु हो जाती है।

असंयुक्त चेचक।—दाने जब जुदा जुदा रहते हैं, तब यह रोग असंयुक्त चेचक कहलाता है। इसमें भी ज्वर आदि लक्षण प्रकट होते हैं; किन्तु ज्वर उतना प्रबल नहीं होता और मृत्युकी उतनी आशङ्का नहीं रहती।

चिकित्सा।—चेचककी प्रथमावस्थामें दानोंसे रक्षार्थ टीके और गिरनेके पश्चात् ही वारिओलिनम ३x सेवन करनेसे उपकार होता है। पीठ या कमरमें वेदना, तेज नाड़ी; प्रबल ज्वर और प्रलाप सन्निपात, वेरेट्राम विर १x। पीठमें या इनके आसपासमें वेदना, बदहज्मी या वमन ज्वर

प्रभृति लक्षणमें एण्टिमटार्ट ६ या १२ क्रमका विचूर्ण। इस रोगकी सभी अवस्थाओंमें यह दवा अन्यान्य औषधियोंके साथ पर्यायक्रमसे व्यवहार की जा सकती है। द्वितीय अवस्थामें : दानोंमें पीब, गलेमें दर्द; ब्रङ्काइटिस श्वासमय अतिसार प्रभृति लक्षणमें मार्क-सल ६। दानोंके अच्छी तरहसे न निकलने या एकाएक बैठ जानेसे रुबिनीका अर्क कपूर या ऐमोनियम १x प्रयोग किया जा सकता है। जो बालक टीका लेनेके बाद यदि चेचक निकल आवे और उसकी वजह अन्यान्य उपसर्ग प्रकट हों, तो थुजा मूल अरिष्ट देना चाहिये। दानोंके पकते समय यदि सान्निपातिक लक्षण प्रकट हों, तो क्रोटेलस ३० प्रयोग करना उचित है। दानोंके निकलनेके बाद मुखमण्डल और दानोंके पासके स्थानोंके फूल जानेपर और रातको खुजली बढ़नेपर एपिस-मेल ३x देना चाहिये। दानोंमें पीब आ जानेपर ज्वरातिसारके लक्षण प्रकट होनेसे आर्सेनिक ६ या ३० देना चाहिये।

आनुसंगिक उपाय।—रोगीको ऐसी कोठरीमें रखना चाहिये जो हवादार हो। रोगीका बिछौना बारंबार बदलना चाहिये और रोगीको कोमल शय्यापर देरतक एक ही करवटसे सुला रखना न चाहिये। दानोंमें पीब आ जानेके बाद वह जब सूखने लगे तब उन्हें गर्म जलमें भींगे साफ वस्त्र द्वारा धीरे-धीरे पोंछ देना चाहिये। रोगके समय साबू, बार्ली, अरारूट

उपरान्त चमड़ा प्रदाहयुक्त हो जाता और उसपर छोटी-छोटी फुन्सियां निकल आती हैं। फुन्सियोंके निकल आनेपर प्रदाह कम हो जाता है।

चिकित्सा। बेलेडोना १, ३।—शरीरके चमड़ेका प्रदाहयुक्त होकर उज्ज्वल लालवर्ण और शुष्क हो जाना ; मुख-मण्डल प्रदाहयुक्त ; प्रखर उत्ताप ; शिरःपीड़ा ; आंखोंकी पुतलियोंका विस्तृत हो जाना ; आक्रान्त स्थानका कुछ फूल आना ; विशेषतः मुखमण्डल और मस्तकके विसर्पमें यह दवा उपयोगी है।

ह्रासटक्स ६।—गले, मुखमण्डल और शरीरके अन्यान्य स्थानोंमें लाल रङ्गकी जलपूर्ण फुन्सियां ; उनकी बगलके स्थानका फूल आना ; सर्व्वाङ्गमें वेदना ; फुन्सियोंसे रस निकलना और ज्वाला।

एपिस-मेल ३, ६ —रसपूर्ण, उत्ताप और जलन उत्पन्न करनेवाली फुन्सियां ; फुन्सियोंका अतिशय फूल आना और उनमें खुजली ; हूलजैसी वेदना ; प्रदाहयुक्त स्थानमें आरक्त और रसपूर्ण न होकर ठुन स्फीत होनेपर।

आर्सेनिक ६, ३० ।—ज्वालाकर वेदना विशिष्ट काले रङ्गकी फुन्सियां या पीबसे भरी हुई फुन्सियां अस्थिरता और अत्यन्त प्यास।

कण्ठको घण्टी स्फीत हो उसपर कृत्रिम परदा था जाता है। कृत्रिम झिल्ली यदि निकाली नहीं जाती, तो उससे रोगीका दम रुक जाता और उसकी मृत्यु हो जाती है।

चिकित्सा।—आक्रान्त स्थल प्रदाहयुक्त और लाल; मुखमण्डल और आँखें लाल; शिरोवेदना; निगलनेमें वेदना; पूर्ण और कठिन नाड़ी; कोमल तालू; तालूकी घण्टी और स्वर-नालीमें प्रदाह इत्यादि लक्षण वर्त्तमान रहनेसे एकोनाइट ३ और बेलेडोना ३x पर्यायक्रमसे प्रयोग करना चाहिये। आक्रान्त स्थानमें वेदना; टप-टप दर्द; कृत्रिम परदा उत्पन्न; तालुमूल और गलकोषकी आरक्तता; पीले रङ्गकी जिह्वा; श्वास-प्रश्वाससे दुर्गन्ध; निगलनेमें कष्ट; अत्यन्त राल टपकना; गला दबानेसे दर्द आदि लक्षणमें मारक्युरियस बायोनिटास ६। गलेमें धूसरवर्णका क्षत; अवसन्नता; श्वास-प्रश्वासमें दुर्गन्ध आदि लक्षणमें एसिड मियुरियेटिक ३। पीड़ाकी अन्तिम अवस्थामें नाड़ी क्षीण: नाकसे पीब या रक्त निकलना इत्यादि अवस्थामें आरसेनिक ६।

बहुव्यापक सर्दी। (Influenza.)

वायु दूषित होनेसे यह रोग उत्पन्न होता है। सर्दीके लक्षणोंमेंसे बहुतेरे लक्षण इस रोगमें दिखाई देते हैं। गात-

अन्ततः फेनदार, रक्तमय या पीबकैसे श्लेष्मा आनेमें फास-फोरस ६। लगातार खांसीमें हाइड्रोसियानिक एसिड ३।

प्रतिषेधक।—व्याप्टेसिया ३x या इन्फ्लुएञ्जिनाम ३० एक मात्रा मात्र।

धातुरोग।

पिता-माताके वात, यक्ष्मारोग आदि रोग उनके सन्तानमें भी चले आते हैं; इसलिये यह रोग 'धातुगत' रोग कह-लाते हैं।

वात-व्याधि। (Acute Rheumatism.)

लक्षण।—शरीरके सन्धिस्थल या गांठोंमें यह रोग होता है। कभी-कभी दो-चार गांठें; कभी-कभी सभी गांठें आक्रान्त होती हैं। रोगके आरम्भमें ज्वर आता और गांठें स्फीत, आरक्त और दर्दयुक्त हो जाती हैं। इसके उपरान्त हिलनेसे गांठोंका दर्द बढ़ता है। गात्रदर्द्द उत्ताप; दुर्गन्धयुक्त पसीना; कम्प; कोष्ठबद्ध; शिरःपीड़ा; प्रलाप; प्यास; हृत्पिण्डकी क्रियावैषम्य; नाड़ी पूर्ण तथा कठिन; जिह्वा पीली; [illegible] लाल, कभी सफेद आदि लक्षण प्रकट होते हैं।

इस रोगमें गात्रका उत्ताप १०४ या १०५ डिगरीतक पहुँच जाता है। तरुण वातरोग २।३ सप्ताह बाद या तो मिट जाता या पुराने वातका आकार धारण करता है। इस रोगमें यदि हृत्पिण्ड आक्रान्त हो और वामपार्श्वमें वेदना ; वक्षस्थलमें यन्त्रणा ; श्वास प्रश्वासका कष्ट प्रभृति लक्षण उपस्थित हों, तो समझना चाहिये, कि रोग कठिन हो गया है।

कारण ।—हिम या शीत लगना, देरतक गीला वस्त्र पहन रखना ; वृष्टिमें भोगना, पसीनेको एकाएक रोक देना।

चिकित्सा । एकोनाइट राडिक्स १ ।—गांठों और पेशियोंमें कतरनीजैसी वेदना या चिनिक ; अत्यन्त ज्वर ; आक्रान्त स्थानका स्फीत या आरक्त हो जाना, क्षुधामान्द्य ; पेशाब लाल ; तरुण गांठोंके वातके आरम्भमें यह उत्तम औषधि है।

ब्राइश्रोनिया एल्बा ६, १२ या ३० ।—कतरनीजैसा या सुईके चुभनजैसा या दबाव पड़नेजैसा दर्द ; कुछ भी हिलने-डोलनेमें वेदना वृद्धि, गात्र उत्तप्त, कोष्ठबद्ध ; प्रचुर पसीना अतिशय कम्प।

बेलेडोना ३, या ६ । आक्रान्त स्थान अधिक परि·

और सूजनके साथ पैरमें वेदना ; अङ्ग-कम्पन; चलनेमें अक्षम ; सारे शरीरमें दबाकर पकड़ रखने या अस्त्रविद्धवत् वेदना ।

कलोफाइलम ३ ।—छोटी-छोटी गांठोंका वात ; विशेषत: हाथ-पैरके मणिबन्ध और उंगलियोंकी सन्धिमें प्रबल वेदना ; शिर:पीड़ा , वेदनाका एक स्थानमें अधिक समयतक न रहना ।

पथ्यादि ।—रोगकी प्रथमावस्थामें ज्वर रहनेसे साबू, बारली, अरारूट और थोड़ासा दूध दिया जा सकता है । हिम या शीत लगने देना न चाहिये । आक्रान्त स्थानको गर्म कपड़े या रुईमें बांध रखना चाहिये । रोगके मिट जानेपर रोटी या भात पथ्य है । गर्म जलमें स्नान करना चाहिये ।

पुराना वात । (CHRONIC RHEUMATISM)

इसमें नये गठिया वातके सभी लक्षण मौजूद रहते हैं। सिर्फ गांठें मन्द हो जाती हैं । दर्द खूब कम होता , किन्तु आक्रान्त स्थान रस सञ्चित होनेसे फूल उठता है ।

चिकित्सा । कोलिहाइड्रो ६, ३० ।—अत्यन्त तीव्र ... साथ बार बार अवस्था परिवर्त्तन ; आक्रान्त स्थानको

फूलना और कठिन हो जाना; रोगोमें चलनेकी शक्ति न रहना; तरुण वात रोगके बाद जोड़ोंको निर्ब्बलता। गर्म्मीकी पीड़ाकी गठिया।

रडोडेएड्रन ३० ।—हाथ, पैर और जांघमें तथा हाथके भीतर दर्द; स्थिर रहने या दृष्टिके बाद वेदनाकी वृद्धि; भोजनके समय और भोजनके अन्तमें दर्दकी कमी; रातको, विशेषतः पिछली रातको वेदनाकी वृद्धि; दृष्टिसे पहले और ग्रीष्मकालमें रोगका आक्रमण; सन्धिस्थलमें मोचजैसा दर्द।

डालकेमारा ६ ।—दृष्टिके बाद जलमें भीगने या तर स्थानमें रहनेकी वजह यह रोग होनेपर; विश्रामसे वेदनाकी वृद्धि, सञ्चालनसे उपशम; रह-रहकर काटनेजैसी वेदना; पीठ, बाहु और पैरकी सन्धिमें वेदनाका आधिक्य; पसीना और दुर्गन्धयुक्त मूत्र।

फाइटोलेका ३ ।—आक्रान्त स्थान भार और वेदनायुक्त तथा शीतल; ग्रीष्म और वर्षामें रोगकी वृद्धि; आक्रान्त स्थान स्फीत और आरक्त।

कष्टिकम ६, ३० ।—कन्धे, जांघ और घुटनेमें वेदना, वेदनाकी वजह अङ्ग हिलानेकी इच्छा, किन्तु अङ्ग हिलानेमे दर्दका न मिटना, कन्धेमें ऐसी वेदना, कि शिरकी ओर हाथ उठाया न जाये सन्ध्या समय वेदना-वृद्धि और प्रातःकाल

कमरके वातमें। एको, आरनिका, सिमिसि, मिडेन, एण्टिमटार्ट, आरसेनिक और ब्राय।

गठियामें।—एको, कलकि, केलकार्ब, मेडिना (रोगकी नयावस्थामें), एमनकम, केलफस, कष्टिकम, लाइको, सलफर (पुरानी अवस्थामें)।

पथ्यापथ्य।—अधिक परिमाणमें घृत और तेलाक्त पदार्थका सेवन; मछली मांस और मद्यपान निषिद्ध है। पुराना चावल, थोड़ा दूध, दाल, रोटी, परवलकी तरकारी, पूरी, हलवा प्रभृति पथ्य है।

उपदंश या गर्मी (Syphillis)

उपदंश संक्रामक व्याधि है। इस रोगके रोगीके साथ रहने या बैठने उठनेसे भी यह व्याधि हो जाती है। उपदंशका विष शरीरमें घुसनेके बाद दस दिनके भीतर भीतर यह रोग प्रकट होता है। पहले मसूरके दाना प्रकट होता है, यह दाना [illegible] बड़े फफोलेका आकार धारण करता है। इसके बाद इसके [illegible] [illegible]

[illegible]

व्यवहारसे रोगीके चीण, दुर्ब्बल और उसकी देहके नाना स्थानमें क्षत होनेपर २ ड्राम नाइट्रिक एसिड १ पाइण्ट जलके साथ मिला प्रति दिन २।३ बार जख्म धो देनेसे उपकार होता है।

केली हाइड्रो ३० ।—पुराने उपदंशका विष नाश करनेमें यह औषधि एक ही है। बहुत दिनतक उपदंशका क्षत रहने और उसीके साथ दाँतोंकी जड़में जख्म होने या उस जड़के फूल जाने ; तालुमें क्षत ; हड्डी-हड्डी और जोड़-जोड़में वेदना ; सर्व्वाङ्गमें दाने और उपदंशके जख्ममें सड़न उत्पन्न होनेपर।

सलफर ६, १२ या ३० ।—उपदंशकी सभी अवस्थामें समय-समयपर सलफर व्यवहार करना उचित है। विशेषतः क्षतके मध्यभागमें श्वेतवर्णका लेप दिखाई देनेपर सलफर ही उपयोगी है।

अरम मेटालिकम ३ विचूर्ण या ६ ।—मुखगह्वर और नाकमें क्षत निकलनेकी मांस-वृद्धि (पुराने उपदंशमें) ; विशेषतः रोगीके हमेशा ही उदास हो दुःख प्रकाशित करने या आत्महत्याकी चेष्टा करनेपर।

समय समयपर हिपर सलफर ६, आर्सेनिक ६, केलि क्लोरि-कम ६, एसिड फास्फोरिक ६ इत्यादि दवाओंकी आवश्यकता होती है।

साधारण नियम।— [illegible] रोग साफ ह

चाहिये। जबतक जख्म सूख न जाये, तबतक मक्खी और मीठी चीज खाना न चाहिये। ज्वर रहनेसे लघु पथ्य और ज्वर न रहनेसे लघुपाक पुष्टिकर द्रव्य ग्रहण करना चाहिये।

बाघी। (Bubo.)

बाघी उभरनेपर उसे बैठानेका यत्न न कर पुलटिस बांध और पका करवा देना उचित है। बाघीके जख्म, गोय प्रभृति निवारणके लिये मारक्युरियस ६, हिपर सलफर ६, चारसेनिक ६, नाइट्रिक ६ प्रयोग करना चाहिये।

गण्डमाला। (Scrofula.)

रक्त दूषित होनेसे शरीरके नाना स्थानको, जैसे—गले, गर्दन, बगल चादिको गाँठें फूल जाती हैं। साथ साथ सूजन, लालिमा, दर्द प्रभृति लक्षण प्रकट होते हैं। कभी-कभी छाती, आँखें, कान, नासिका प्रभृति स्थानोंमें जख्म होते और वह रोगीको निर्बल कर देते हैं।

पिता-माताको गण्डमाला या उपदंशका दोष, अस्वास्थ्यकर स्थानमें निवास, सुपथ्यका अभाव प्रभृति कारणसे यह रोग उत्पन्न होता है।

चाहिये। जबतक अम्ल सूख न जाये; तबतक मद्य और मीठी चीज़ खाना न चाहिये। ज्वर रहनेसे लघु पथ्य और ज्वर न रहनेसे लघुपाक पुष्टिकर द्रव्य ग्रहण करना चाहिये।

बाघी। (Bubo.)

बाघी उभरनेपर उसे बैठानेका यत्न न कर पुलटिस बांध और पका कटवा देना उचित है। बाघीके जख्म, शोथ प्रभृति निवारणके लिये मारकिउरियस ६, हिपर सलफर ६, आरसेनिक ६, नाइट्रिक एसिड ६ प्रयोग करना चाहिये।

गण्डमाला। (Scrofula.)

रक्त दूषित होनेसे शरीरके नाना स्थानकी; जैसे—गले, गर्दन, बगल आदिकी गाँठें फूल जाती हैं। साथ साथ सूजन, लालिमा, दर्द प्रभृति लक्षण प्रकट होते हैं। कभी-कभी आंखें, नाक, कान, नासिका प्रभृति स्थानोंमें जख्म होते और वह रोगीको निर्बल कर देते हैं।

पिता-माताकी गण्डमाला या उपदंशका दोष, अस्वास्थ्यकर स्थानमें निवास, सुपथ्यका अभाव प्रभृति कारणसे यह रोग उत्पन्न होता है।

चिकित्सा ।—बेसिलिनाम-टिउबराकिउलिनाम ३०, २०० ।—रोगकी सभी अवस्थाके लिये फलप्रद है। आशा की जाती है, कि समय उपस्थित होनेपर यही औषधि इस रोगकी एकमात्र दवा हो जायेगी। डाक्टर बारनेटका इसपर बड़ा विश्वास है।

कालकेरिया कार्ब ६, ३० ।—अग्निमान्द्य; अम्ल-उद्गार, विशेषतः तेल-घी या मिठाई खानेपर; रातको खांसीकी वृद्धि। खांसते-खांसते कठिन पीबजैसा श्लेष्मा निकलना। दुर्बलता, रक्तस्राव; छातीमें ऐसी वेदना, कि छुई न जाये।

बेलेडोना ३, ६ ।—सूखी खांसी; बाहर दबानेसे स्वरनालीमें वेदना; स्वरभङ्ग, तीसरेपहर गात्रतापकी वृद्धि; ज्यादा देरतक खांसनेपर रक्त-मिश्रित श्लेष्मा निकलना; छातीकी वेदना पहुंचानेवाली खांसी; शय्या या रातिको शयन करते समय खांसीकी वृद्धि।

आयोडियम ३, ६ ।—[illegible] खांसीके साथ [illegible]
[illegible]

फासफोरस ६ ।—मृदु और द्रुत नाड़ी, सूखा और गर्म चमड़ा। छातीमें वेदना उत्पन्न करनेवाली खांसी; फेफड़ेमें जख्म रहनेकी वजह कुछ हरे रङ्गका दुर्गन्धपूर्ण श्लेष्मा निकलना; प्रायः ही पसीना और उदरामय, क्षीण देह।

फेरम मेट ३ विचूर्ण ६ ।—फेफड़ेमें रक्तस्राव; प्रायः पैरका फूलना, उदरामय, शरीरमें रक्तकी कमी, खुर-खुर खांसी और छातीकी यन्त्रणाके साथ रक्त निकलना।

पल्सेटिला ६ ।—रोगकी पहली अवस्थामें, जिस समय अग्निमान्द्य होनेकी वजह तेल या चर्बीदार पदार्थ या कोई [illegible] नहीं पचता; रात्रिके समय खांसी और श्लेष्माकी वृद्धि, अधिक परिमाणमें गाढ़ा पीला और कड़वा श्लेष्मा।

लाइकोपडियम १२, ३० ।—आमाशय और उदरकी वेदना, पानीके फूलनेसे मलरोध, अग्निमान्द्य, रक्तमिश्रित [illegible] खुर खुर खांसी [illegible]। [illegible] दुर्गन्ध [illegible] सामान्य भोजनसे भी पेट फूल जाना।

आर्सेनिक ६, ३० ।—रोगकी शेष अवस्थामें [illegible] प्रयोग [illegible] है।

हिपर सलफर ६ ।—स्वरभङ्ग; खांसते-खांसते श्लेष्मा और रक्त या पीब निकलना; लेटनेसे श्वास-प्रश्वासमें कष्ट; गण्डमाला धातुवाले युवक-युवतियोंके लिये यह औषधि और भी उपकारी है।

सलफर ३० ।—समय-समयपर; विशेषतः रोगके अधिक समयका होनेपर यह दवा देना चाहिये।

एकोनाइट ६, ड्रोसेरा ६, टानाम ६, ब्रायोनिया ६ समय-समयपर उपयोगी हो सकते हैं।

पथ्यादि ।—बकरीका दूध, गोका दूध, घृत, मक्खन, छोटी-छोटी मछलियों या बकरीके मांसका शोरबा, सूजीकी रोटी, मूंग, परवल आदि सुपथ्य हैं। इस रोगमें काड लिवर आयल उपकार करता है। फ्लानेलका व्यवहार न करना ही अच्छा है। फिर भी; हिम और शीतसे रोगीको बचाना चाहिये। रात जागना, अतिरिक्त परिश्रम और स्त्री-सहवास निषिद्ध है।

बहुमूत्र । (Diabetes)

बङ्गालके कवि भारतचन्द्र राय डाक्टर हेमचन्द्र सेन, राजनीतिविशारद कृष्णदास पाल प्रभृति गुणी ——

विद्यासागर महाशय प्रभृति महोदयगणने इसी रोगसे प्राण-त्याग किये हैं। इस रोगकी उत्पत्तिका कारण आजतक निर्णीत नहीं हुआ है। इस रोगकी प्रथमावस्थामें चमड़ा शुष्क और खुरखुरा, अत्यन्त प्यास, अतिशय क्षुधा, दन्त-मूल स्फीत; कोष्ठबद्ध, बारंबार मूत्रत्याग, शरीरकी क्षीणता, श्वास-प्रश्वाससे दुर्गन्ध, जिह्वा फटी हुई और आरक्त, अम्लजैसा मल प्रभृति लक्षण प्रकट होते हैं। क्रमशः क्षुधा-मान्द्य; शरीर जीर्ण-शीर्ण, पदतल स्फीत, दुष्ट व्रण या पृष्ठा-घात; स्त्रियोंका जरायु-अण्डप्रदाह; पुरुषकी कामेच्छा प्रबल प्रभृति लक्षण प्रकट होते हैं। अन्तमें फेफड़ेकी जलन, क्षयी कासी प्रभृति लक्षण प्रकट होते हैं। रोगी दिन-रातमें ४ से २० सेर वजनतक पेशाब करता है। मूत्रमें चीनी रहे, तो रोग मधुमेह और चीनी न रहे, तो मूत्रमेह कहलाता है। मूत्रत्यागके बाद उसपर यदि मक्खियाँ या चीटियाँ लगें, तो यह समझना चाहिये, कि उसमें चीनी है।

चिकित्सा। सिजिजियम एम्बोलिनम १X। — यह काले जामुनके बीजका चूर्ण है, रोगकी सभी अव-स्थामें दिया जा सकता है। इसके सेवनसे मूत्रका परिमाण और चीनीका भाग घटता है।

एसिड फासफोरिक १X, ६। — स्नायुमण्डलके किसी

शोथ । (Dropsy.)

समस्त शरीर या शरीरके किसी अंशमें जल-सञ्चय होने-को शोथ कहते हैं। शोथ स्थानिक होता है और सार्व्वाङ्गिक। स्थानिक शोथ मस्तक, उदर प्रभृति शरीरके किसी एक स्थानको आक्रान्त करता है। सार्व्वाङ्गिक शोथ शरीरके सब स्थानमें होता है। चमड़ेके नीचे जो शोथ होता है, वह पहले पदतलमें उत्पन्न होता है; क्रमशः ऊपर उठ सर्व्वाङ्गमें फैल जाता है। प्लीहाकी वृद्धि, रक्तोनताल्पता, मलेरिया ज्वर; अति-रिक्त आरसेनिक सेवन और पुराने उदरामय प्रभृति रोगोंके अन्तमें शोथ उत्पन्न होता है। इसके होनेपर स्फीत स्थान नर्म और चिलचिला हो जाता और उङ्गलीसे दबानेपर बैठ जाता है। इसीके साथ साथ अरुचि, प्यास, गात्र-त्वक खुरखुरा और रुक्ष; लाल रङ्गका थोड़ा पेशाब प्रभृति लक्षण प्रकट होते हैं। फुसफुसकी किसी बीमारीकी वजह शोथ होनेपर इसका आक्रमण पहले आंख और चेहरा होता है। प्लीहा और यकृतकी पुरानी बीमारीकी वजहका शोथ पहले उदरपर आक्रमण करता है। पाभी नदी उत्पन्न करता है। रक्तोनताल्पताजनित शोथका प्रभाव हाथ, पैर और मुखपर ही पड़ता है।

चिकित्सा। आर्सेनिक ६, १२ या ३०।— सभी तरहके शोथमें आर्सेनिक उत्तम दवा है। इससे

की पीड़ाके कारण उत्पन्न होनेवाले हाथ, पैर या सारे अङ्गके शोथमें और प्लीहा तथा यकृतादिकी विवर्द्धनजनित उदरीमें। दुर्व्वलता और शीर्णता; लाल खुरखुरी जिह्वा; सूक्ष्म और विषमगतिवाली नाड़ी; हाथ-पैर शीतल; बारंवार प्यास; किन्तु अल्प जल पीते ही परितृप्ति; छातीमें दबा रखनेजैसी वेदना; शयन करते समय श्वासकष्ट; गात्रत्वकका पीला हो जाना।

एपिस-मेल ६।—मूत्रविकृतिजनित शोथ; आरक्त ज्वरके बादका शोथ; गर्भावस्थामें पैरका शोथ; तरुण शोथमें प्यासका अभाव रहनेपर; प्रलाप; इधर-उधर दृष्टि; दांत कटकटाना; शरीरके अङ्गांशका स्पन्दन; मूत्र परिमाणमें कम और मस्तकमें पसीना।

एपोसाइनम १X।—मस्तक भारी; दुर्व्वलता; सदा ही तन्द्रालुता या अस्थिर निद्रा; मृदुगति नाड़ी; कोष्टबद्ध, किन्तु मलका कठिन न होना; बेखबरीमें मूत्रत्याग; पेटके ऊपरसे छातीतक वजन ज्ञान पड़ना; छातीमें तकलीफ रहनेसे रोगीका बारंवार दीर्घ निश्वास त्याग करना; हृत्पिण्डकी क्रिया क्षीण।

डिजिटेलिस ३X।—दुर्व्वल, क्षीण और विषमगति-विशिष्ट नाड़ी, श्वास-प्रश्वासमें कष्ट, मुखमण्डल मलिन;

रोगोंका चिन होकर भी न सकना, ऋतुविषयका क्रियावैषम्य, ऋतुविषय और मूत्रपथिकी बीमारीका शोथ।

हेलिबोरास १२ या ३० ।—मस्तिष्कशोथ; यक्ष्माका शोथ, माल्पाइन्निक शोथ और मूत्रविकारके बादका शोथ।

ब्रायोनिया ६, ३० ।—यकृत पीड़ा और कोठबद्धका शोथ, गर्भावस्थाका पैरका शोथ, ऋतुरोध या गात्रकी फुन्सि-योंके मिटनेका शोथ, गाँठोंका शोथ, श्वासकष्ट, सुई-चुभने जैसी छातीकी वेदना।

फेरम मेट ६, ३० ।—काले या पीले रङ्गका चमड़ा; अतिशय दुर्बलता, कोष्ठबद्ध, आहारके बाद वमनोद्वेग, स्त्री-वैकल्यजनित शोथ।

समय समयपर चायना ६, कल्चिकम ६, आर्सेनिक ६, सल्फर १०, आरम्कोलिडियम १०, एकोनाइट ६ प्रभृति औषधियोंका व्यवहार किया जा सकता है।

पथ्यापथ्य।—नवल शोथमें नवल ज्वरकेसा अनुपथ्य देना चाहिये और पुराने शोथमें पुष्टिकर अनुपथ्य। यकृतकी बीमारीके शोथमें दूध या माठा पथ्य निर्दिष्ट है। सामान्य शोथमें दूध पथ्य है किन्तु न ... रोगमें निषिद्ध है। रोटी सुपथ्य है किन्तु अधिक मात्रामें देना न चाहिये। ... जब समय देना चाहिये किन्तु समय मूत्रविकारजनित शोथ

न हो। ऐसे रोगमें शीतल जलके बदले विशुद्ध दूध देना उचित है। गर्म्मे जलका स्नान उपकारी होता है। रोग कुछ घटनेपर पुराने चावलका भात, मूंगकी दाल, मांसका शोरवा, परवल, बैंगन, नेनुआ प्रभृति देना चाहिये।

रक्तस्वल्पता। (*Anaemia.*)

अपरिमित रक्तस्राव, शुक्रक्षय, अतिसार, मलेरिया, [illegible] इति, रक्तामाशय प्रभृति रोगके बहुत दिनतक भोगने-पर रक्तका भाग बहुत घट और जलभाग बढ़ जाता है। इसीका नाम है,—रक्तस्वल्पता। इस रोगमें चमड़ी और होठों-का रङ्ग सफेद दिखाई देता, सारे शरीरमें पाण्डुवर्ण शोथ, ज्वर, हाथ पैर ठण्डा, अरुचि, सिर घूमना, मूर्छा प्रभृति लक्षण दिखाई देते हैं।

चिकित्सा।—मलेरिया रोग-भोगकी रक्तस्वल्पतामें [illegible] मिउर ३०। अल्प रक्त या ऋतु बन्द होनेसे [illegible] फेरम पल्सेटिला ६ और [illegible] ३०। [illegible] प्रदर, शुक्रक्षय, रक्त-स्राव और अतिसारके [illegible] ६ और फास्फोरिक एसिड ६। [illegible] ३०। [illegible] ६ [illegible] ३०।

इन औषधियोंसे कोई फल न होनेपर सलफर ३० दो दिन सेवन करा और दो दिन बिना औषधिके रखना चाहिये। इसके बाद लक्षणानुसार ऊपरकी कोई औषधि पुन सेवन कराना चाहिये। यदि इससे भी कोई उपकार न हो, तो नेट्राम सल्फ ३० देना चाहिये। यह औषधि रोगीको प्रायः सभी अवस्थामें फलप्रद है। इस पुस्तकका 'प्रमेह' 'उदरामय' 'अतिरज:' 'पुरानो सूतिका' प्रभृति रोगोंका वर्णन देखना चाहिये।

नियम।—ऐसा द्रव्य आहार करना चाहिये, जो पुष्टिकर हो और सहजमें हजम हो जाये। सबेरे और सन्ध्या टहलना और साफ कोठरीमें रहना चाहिये। सहन हो, तो नदी-जल या कुछ गर्म जलमें थोड़ा नमक मिला नहाना चाहिये।

८। स्नायुमण्डलके रोग।

मस्तिष्कके साथ स्नायुको स्नायुमण्डल कहते हैं। इस स्नायुमण्डलमें एक अद्भुत शक्ति छिपी है। इसी शक्तिसे हस्तपदादि अंगोंके समस्त अंश चलना-फिरना आदि किया करते हैं। इसी शक्तिसे हम बल-वीर्य दिखाते हैं, इसी शक्तिसे हम सोचने-समझते हैं।

माथा और माथेको ढंकनेवाली झिल्लीका प्रदाह।

तीन परदोंसे माथा ढंका है। इनमें प्रत्येक परदेको माथा ढंकनेवाली झिल्ली कहते हैं। माथे और माथेको ढंकनेवाली झिल्लीके प्रदाहकी चिकित्सा एक साथ लिखी जाती है। लक्षण :—अतिशय ज्वर; प्रबल शिरःपीड़ा; माथेकी वेदना; प्रलाप, वमन, मुखमण्डल लाल; द्रुतगति नाड़ी; कपाल और गलेकी धमनियोंका स्पन्दन; कोष्ठबद्ध; वमन या मिचली, निद्राशून्यता, रोगके आरम्भमें आंखोंकी पुतलियां छोटी रहें, किन्तु बढ़ितावस्थामें फैल जायें और उस समय आंखोंसे प्रकाश बरदाश्त न होना। रोगकी प्रबलावस्थामें कभी-कभी दांत पीसनेकी इच्छा होती है, सिर घूमता है, श्वास-प्रश्वासमें कष्ट होता और पेशाब अम्लगन्धविशिष्ट होता है।

कारण।—गिर पड़ना; किसी तरह सिरमें चोट आना; अधिक समयतक धूपमें घूमना; मानसिक अवसन्नता या उत्तेजना प्रभृति इस रोगके कारण हैं। स्त्रियोंमें यह रोग अधिक दिखाई देता है।

चिकित्सा।—चोट लगनेसे माथेमें प्रदाह उत्पन्न होने तथा ज्वर रहनेसे आरनिका ६ और एकोनाइट ३x पर्यायक्रमसे,

इसीके साथ प्रलाप; मस्तिष्क उत्ताप, चक्षु लाल प्रभृति लक्षणमें आरनिका ६ और बेलेडोना ६ या ३० पर्य्यायक्रमसे प्रयोग करना उचित है। माथेमें अतीव प्रखर वेदना और उसके साथ साथ रातको मृदु प्रलाप, नींदमें एकाएक चौंक उठना प्रभृति लक्षणमें आपोमियम ६, हेलिबोरस ६ या सलफर ३० देना चाहिये।

शिरःपीड़ा। (Headache.)

शिरःपीड़ा अन्यान्य बीमारियोंका लक्षण मात्र है।

चिकित्सा। एकोनाइट १२ या ३०।—रक्तप्रधान-जनित शिरःपीड़ामें भयानक वेदना; जान पड़े मानों सिरके अन्दरकी सब चीजें बाहर निकलना चाहती हैं। समय-समय पर कपालमें टप-टप वेदना, यहांतक, कि आंखें भी दर्दसे आक्रान्त हों; हिलने डोलने, सिर झुकाने, चलना और सिढ़ियाँ चढ़नेमें दर्दमें कमी जान पड़े।

आरनिका ६, ३०।—रक्तसञ्चयजनित या शारीरिक दैहिकदुर्बलताजनित शिरःपीड़ा; आंखोंकी पलकोंका भारी जान पड़ना; आंखोंके आगे अंधेरा या अस्पष्टतासा दिखाई

देना; आंखोंमें ज्वाला; माथेमें उत्ताप; सिर, कनपटी और गलेके नसोंका स्पन्दन; उच्चशब्द, प्रकाश, हिलने और शयनसे दर्दकी वृद्धि; स्थिर हो बैठनेसे आराम।

ब्रायोनिया ६, १२, ३०।—रक्तसञ्चय और वातजनित शिरःपीड़ा; हिलनेसे वृद्धि; सिर घूमना; माथेमें बड़ा वज़न, झुकानेसे ऐसा ज्ञान पड़े मानो माथा फट जायेगा। कपाल और कनपटीमें वेदना; दबानेसे वेदनामें कमी; आधे सिरमें, विशेषतः दाहने वेदना; वारंवार उद्गार उठना और पित्त-वमन; शिरःपीड़ाके बाद नाकसे रक्त निकलना।

केलकेरिया कार्ब्ब ३०।—अतिरिक्त मानसिक चिन्ताकी शिरःपीड़ा; भयानक शिरोवेदना, विशेषतः सवेरे; रातको शरीरके ऊपरी भागमें अतिशय पसीना; खाली पेटमें वार-वार उद्गार उठना और माथेका शीतल ज्ञान पड़ना।

चायना ६, १२ ३०।—कानमें सन्-सन् शब्द; लाल मुखमण्डल; शारीरिक दुर्ब्बलता; वारंवार जुम्हाई।

इग्नेसिया ३, ६।—दारुण शोकसे शिरःपीड़ा; गुल्म-वायुग्रस्त रोगीको शिरःपीड़ा, कांटा ठोंकनेजैसी शिरः-पीड़ा।

लिलियाम टिग्री ६।—माथेमें वेदना और वज़न ज्ञान

पड़ना। दोनो हाथोंमे घिरका बोझ मध्यालनेकी इच्छा। खुली हवामें वेदनाकी वृद्धि और सूर्यास्तके समय शान्ति।

नक्सवामिका ६, १२, ३० ।—शिर घूमना; कपाल और कनपटोके नसोंका स्पन्दन, विशेषवत् वेदना; वमन या या मितली; कोष्टबद्ध; आहारोपरान्त या मानसिक परिश्रमके उपरान्त और शिर झुकानेसे पीड़ाकी वृद्धि; बलवान् या रक्तप्रधान मनुष्योंकी शिर:पीड़ा, अर्द्धशिशूल, जो प्रात:काल आरम्भ होकर प्रखर वेदना उत्पन्न करे और सन्ध्या समय घट जाये; अम्ल या पित्तवमन।

पलसेटिला ३, ६, १२ ।—परिपाक-कार्य्यकी खराबी या अतिरिक्त परिमाणसे तेल या घीकी चीज खा लेनेकी शिर:पीड़ा; स्त्रियोंके जननयन्त्रके क्रियाविकारकी शिर:पीड़ा; एक ओर कानके पोछेकी तीव्र वेदना, ऐसा ज्ञान पड़े मानो कोई काँटा ठोकता हो।

फासफोरिक एसिड ६, ३० ।—स्नायविक दौर्बल्य और धातुदौर्बल्य जनित मस्तक और गर्दनकी पीड़ा, स्मरणशक्तिका ह्रास; दृष्टि-शक्तिकी कमी और कानसे कम सुनाई देना।

सिपिया ६, १२, ३० ।—मस्तकमें वजन ज्ञान पड़ना और कीलनेकेसा कष्ट, रजोवैलक्षण्यजनित वमन या मितलीके साथ शिर:पीड़ा, कोष्ठबद्ध।

वेराट्रम विर ६, ३० ।—मस्तक भरा हुआ; और वजनी, नसोंका स्पन्दन, अचेतनावस्था, कानमें सों-सों शब्द, वमन या मितलीके साथ उदरामय।

पथ्यापथ्य ।—पीड़ाकी पहली अवस्थामें कुछ न खाना ही अच्छा है। अन्नजनित शिरःपीड़ामें दूधके साथ थोड़ा चूनेका जल मिला पीना अच्छा है। दवासे यदि उपकार हो, तो गीला वस्त्र सिरमें बांधनेसे लाभ हो सकता है।

संन्यास । (APOPLEXY)

स्वस्थावस्थामें चलते फिरते या टहलते समय एकाएक गिर पड़ने और सम्यक् या आंशिक रूपसे अचैतन्य हो जानेको संन्यास कहते हैं। तीन कारणसे यह रोग उत्पन्न होता है—(१) मस्तककी रक्तकी नालियोंमें अधिक रक्त हो जानेकी वजह; (२) मस्तककी रक्तकी नालीके टूटनेसे अधिक रक्त स्राव होनेकी वजह और (३) एकाएक नाड़ीमें जलमग्नय होनेकी वजह। यह रोग कभी धीरे-धीरे और कभी एकाएक होता है। भला-चङ्गा आदमी एकाएक गिर पड़ता और इन्द्रियग्राम तथा सञ्चरण-शक्ति खो बैठता है। किन्तु उसके श्वास-प्रश्वास या रक्तसञ्चालनकी क्रिया ज्योंकी त्यों रहती है।

उस समय पूर्ण, मृदु और द्रुत नाड़ी, अक्षु तारा विस्तृत, या एक अक्षुतारा सङ्कुचित और दूसरा विस्तृत, अर्द्धाङ्गमें या सर्व्वाङ्गमें ऐंठन, मुख एक ओर आकृष्ट आदि लक्षण प्रकट होते हैं। फिर; कभी-कभी रोगीके एकाएक मूर्च्छित होनेसे पहले कई दिनतक मस्तक झुकानेसे मितली, मूर्च्छाभाव, शिरःपीड़ा, मस्तकके ऊपरी भागमें गर्मी, कोष्टबद्ध, पेशाबका परिमाण कम, चित्तचाञ्चल्य प्रभृति लक्षण प्रकट होते हैं। और एक तरहके संन्यास या अर्द्धाङ्गके पक्षाघातमें शिरका वजनी हो जाना, नाकसे सर-सर रक्त गिरना, कानोंमें एक तरहका शब्द अनुभव, नाड़ी पूर्ण और द्रुत, किसी-किसी अङ्गकी अवशता, वमनेच्छा, चलनेकी शक्तिका अभाव प्रभृति लक्षण दिखाई देते हैं। मद्यपानादिका अत्याचार, अपरिमित पान-भोजन, कन्धेपर वजनी चीजका दबाव, प्रशस्त छाती और क्षुद्र ग्रीवा, अतिशय मानसिक चिन्ता, रजोरोध, कृतपिण्डका क्रियावैषम्य प्रभृति विविध कारणवश संन्यास रोग उत्पन्न होता है।

चिकित्सा। एकोनाइट ३X।—पूर्ण द्रुत और सबल नाड़ी, गात्रचर्म शुष्क तथा उष्ण, जिह्वाके पक्षाघातकी वजह वाक्यकी जड़ता।

आरनिका ६।—वृद्ध मनुष्योंके माथेमें रक्त सञ्चित होनेपर।

बेलेडोना ६।—चैतन्य लोप; वाक्य-रहित, मुख-

मण्डल लाल और स्फीत; माथे और गर्दनकी रक्त बहानेवाली नालियोंका स्पन्दन; मुखमण्डल और हाथ-पैरमें आक्षेप; मूत्रबन्ध या बेखबरीमें मूत्रत्याग।

ओपियम ६, ३० ।—तन्द्रा या गाढ़ी निद्रा यानी संज्ञा न रहना; पूर्ण या मृदु नाड़ी, विषम शब्दयुक्त श्वास-प्रश्वास; मुखमण्डल स्फीत और लाल; अधखुली आँखें या चक्षुतारा विस्तृत, हाथ-पैर शीतल, रक्त बहानेवाली नसोंसे रक्तस्राव।

नक्सवमिका ६, १२, ३० ।—माथेमें रक्त सञ्चित होनेके संन्यास रोगमें; माथेमें रक्त या रस सञ्चित होनेपर; अतिरिक्त आहार, मद्यपान या रात्रिजागरण प्रभृति अत्याचारसे होनेवाला संन्यास।

मात्रा ।—प्रबल अवस्थामें २०।३० मिनट बाद एक-एक मात्रा।

पथ्यापथ्य ।—भात, थपक्षन, दूध, ताजी मछलीका शोरवा सुपथ्य है। चाय, कहवा, मद्य, मांस, घृत या गर्म मसालेसे बनी उत्तेजक चीजें निषिद्ध हैं। रोगके समय हाथ-पैर शीतल हो जानेपर गर्म जलसे सेंक, माथेपर शीतल जलकी पट्टी और पहननेके वस्त्रको ढीला कर देना आवश्यक है। ऐसा यत्न करना चाहिये, जिससे रोगीके पास पहुंचनेवाली स्वच्छ वायुमें रुकावट न हो।

क्रियम ६। धातुदौर्ब्बल्यके मृगी रोगमें एसिड फस ६, फास-फोरस ६, चायना ६ या फेरम ६। भयसे मृगी रोग होनेपर ओपियम ३० या एकोनाइट ३x।

गुल्म या मूर्च्छागत वायु। (HYSTERIA.)

आयुर्व्वेदोक्त गुल्मवायु और हिष्टिरिया दोनो एक रोग नहीं; फिर भी, इनमें सादृश्य दिखाई देता है। साधारणतः स्नायवीय विकारसे यह रोग होता है। इसीलिये पेट फूलना; कष्टकर हिचकी; दारुण श्वासकष्ट और श्वास-प्रश्वासमें उच्च शब्द; स्वरभङ्ग; पेटसे गलेतक गोलेजैसा कोई पदार्थ चढ़ना; मस्तकमें वेदना प्रभृति उपसर्ग दिखाई देते हैं। हिष्टिरियामें सम्पूर्ण ज्ञान लोप नहीं होता। अनेक स्थलमें जरायु-विकृतिप्रयुक्त यह रोग होता है। युवती स्त्रियों और कभी-कभी पुरुषोंको भी यह रोग होता है।

चिकित्सा।—मूर्च्छाके समय केम्फर या मस्कस रोगीकी नाकके पास लगानेसे इसे शीघ्र-शीघ्र चैतन्य हो सकता है। स्वस्थावस्थामें लक्षणानुसार निम्नलिखित दवाओंके देनेसे रोग दूर हो सकता है। रोगी सदा ही विषादयुक्त और अस्थिर; नियमित समयमें अधिक दिन स्थायी अतिरिक्त परिमाणसे रजःस्राव या बिलकुल ही रजोरोध होकर गर्भाशयमें रक्त

धनुष्टङ्कार । (TETANUS.)

इस रोगके आक्रमणमें शरीर धनुकी तरह टेढ़ा हो जाता है। यह दो तरहका होता है,—स्वयम्भूत और आभिघातिक। रक्त दूषित होनेसे स्नायविकमण्डली विकृत होनेपर जो धनुष्टङ्कार उत्पन्न होता है; वह स्वयम्भूत धनुष्टङ्कार कहलाता है। शरीरके किसी अंगमें चोट लगनेपर आहत स्थानमें स्नायुकी उत्तेजना होनेसे जो धनुष्टङ्कार होता है; वह आभिघातिक धनुष्टङ्कार कहलाता है। इस रोगमें गर्दन सख्त; गलेमें वेदना, रोगीका मुख हर्षयुक्त; मुखमण्डलकी पेशियोंके कठोर होनेपर उनमें आक्षेप या तनाव; मुखमण्डल यातनायुक्त; एकदृष्टिसे देखना आदि लक्षण प्रकट होते हैं। अन्तमें सारे शरीरमें आक्षेप उपस्थित होता और वह धनुकी तरह टेढ़ा हो जाता है। कोई-कोई आगे; कोई पीछे झुक जाते हैं। यह रोग सभी उम्रमें हो जाता है।

चिकित्सा।—स्वयम्भूत धनुष्टङ्कारमें प्रबल आक्षेप न रहने और आक्षेपकालमें शीत और घर्म्म प्रकट होनेपर एकोनाइट रेडिक्स। आघातजनित धनुष्टङ्कारमें रोगका आक्षेप थम-थमकर प्रकट होने और रोगीके पीछे झुक जानेपर मक्सवमिका ६। अभिघातजनित धनुष्टङ्कारमें दुर्निवार प्रबल आक्षेप रहनेपर एसिड हाइड्रो ६। रोगीका सारा शरीर सख्त हो जाना; एकदृष्टिसे देखते रहना; बहुत समयतक चैतन्य न होना, नाना

प्रकारकी पक्षविकृति, बहुत समयके बाद आक्षेप; स्पर्श लगनेसे वृद्धि, श्वास प्रश्वासमें कष्ट, मुखमण्डल लाल; मुखसे फेन निकलना; पीठकी ओर झुक जाना आदि लक्षणमें सिक्युटा विरोसा ६। आघातजनित धनुष्टङ्कारमें चैतन्य रहने और श्वासरोधका उपक्रम होने या सारे शरीरके कभी नर्म, कभी सख्त प्रभृति उपसर्गमें नक्सवमिका ३x। मेरुदण्डपर बरफका प्रयोग भी चलता है।

मात्रा।—रोगके पूर्वलक्षण प्रकट होते ही २०।२० मिनट बाद एक मात्रा औषधि देना चाहिये।

जलातङ्क। (HYDROPHOBIA.)

पागल कुत्ता, स्यार, बिल्ली इत्यादिके काटनेसे यह रोग उपस्थित होता है। इन पागल पशुओंके दाँत या नखसे किसी स्थानमें जख्म होना और उस जख्ममें लार लग जानेसे उसके साथ जब पहुंचा विष शरीरमें प्रवेश करता है। पागल पशुके काटनेसे ही रोग उपस्थित नहीं होता। १०।१८ दिनतक प्रायः ही रोगका कोई भी लक्षण प्रकट नहीं होता। कपड़ेपर काटनेसे पशुकी लार कपड़ेहीपर रह जाती है; मनुष्यके देहमें नहीं जाती। इसमें १०।१८ दिन बाद जख्मस्थानमें सामान्य प्रदाह होता और उसके पासके स्थानमें सूजनी होती है।

इसके बाद अस्थिर चित्त ; स्वभावमें चिड़चिड़ापन ; रातको भयङ्कर स्वप्नदर्शन ; गलेकी पेशियोंके सङ्कुचित हो जानेसे गर्दन सख्त ; किसी द्रव्यके निगलनेमें कष्ट ; जल या जलीय पदार्थ देखते ही भय आदि लक्षण प्रकट होते हैं। इसके उपरान्त क्रमशः रोगी निर्बल हो मर जाता है।

चिकित्सा।—पागल पशुके काटते ही ज़ख्मके ऊपरका स्थान कसकर बाँध देना चाहिये। इसके उपरान्त जिसके मुंह या मसूड़ोंमें ज़ख्म न हो : उसको चाहिये, कि वह ज़ख्मको चूस उससे कुछ रक्त निकाल ले। इसके उपरान्त लोहा तपा उस स्थानपर दबा या कारबोलिक एसिड या नाइट्रेट आफ सिलवर द्वारा क्षतस्थानको जला देना चाहिये। इसके उपरान्त ष्ट्रामोनियम १x देना चाहिये।

पक्षाघात। (PARALYSIS.)

किसी अङ्ग या अर्द्धाङ्गके स्पर्शज्ञानरहित या गतिरहित यानी अवश हो जानेपर उसे पक्षाघात कहते हैं। पक्षाघातके कई रूप हैं.—मेरुदण्डकी चोट पहुंचनेका पक्षाघात, सुषुम्नाकाण्डका पक्षाघात सकम्प पक्षाघात निम्नाङ्ग [illegible] पक्षाघात।

चिकित्सा।—स्मृतिशक्तिकी अल्पता और कम्प आदिके साथ वृद्ध मनुष्योंके सार्व्वाङ्गिक पक्षाघातमें और मुखमण्डल तथा जिह्वाके पक्षाघातमें बेराइटा कार्ब्ब ६, ३०। मुखमण्डल, स्वरनाली और मूत्राशयके पक्षाघातमें कष्टिकम ६, १२, ३०। पक्षाघात अङ्गमें स्पर्श करनेसे अनुभव न हो, किन्तु कण्टकादि विद्ध करनेसे अनुभव हो और आक्रान्त स्थान झुन-झुन करे; अङ्गोंकी अवशता, तरुण पक्षाघातमें एकोनाइट १x। जांघमें वातश्लेष्मा वेदना, दृष्टिशक्तिकी क्षीणता, वातको मूत्रवेग धारण करनेमें असमर्थ, चलनेमें असाड़ आदि लक्षणमें बेलेडोना १। अपरिमित शुक्रक्षयजनित ध्वजभङ्ग या पक्षाघातमें फासफोरस ६ या ३०। वात-पैत्तिक स्पन्दन, वायुमण्डलकी शीतलताके पक्षाघातमें मार्कसल ६। कांटा विद्ध करनेसे वेदनाबोध, स्पर्श करनेसे अनुभव न होना, मस्तिष्कके कड़ कड़ शब्दके साथ अर्द्धाङ्ग पक्षाघातमें और जिह्वाके पक्षाघातमें ककुलस ३। वृद्धोंके पक्षाघातमें कोनियम ६। अपरिमित मद्यपान-जनित पुरुषत्वहीन वायुका पक्षाघात होने और उसीके साथ वमनेच्छा, कोष्ठबद्धता, अरुचि प्रभृति लक्षणमें नक्सवमिका ६। बच्चोंके पक्षाघातमें जिलसिमियम ६।

स्नायुशूल। (NEURALGIA.)

स्नायुकी वेदनाको वजह नाना स्थानमें टप-टप कोंचनेजैसी जो ज्वालाकर वेदना होती है, उसीको स्नायुशूल कहते हैं। यह शूल कई प्रकारका होता है:—मुखमण्डलका स्नायुशूल, अर्द्धशिर:शूल या अधकपाली, पार्श्वशूल, गृध्रसी कमरके नीचेकी। भीतरके यन्त्रोंमें भी स्नायुशूल उत्पन्न होता है। जैसे,—आमाशयमें; हृत्पिण्डमें, यकृतमें, डिम्बाशयमें, और अण्डकोषमें। मुखमण्डलका स्नायुशूल और गृध्रसी प्रायः ही दिखाई देता है। चोट, दांतमें कीड़े, शीत लगना, अत्याधार-जनित स्वास्थ्यभङ्ग प्रभृति कारणसे यह रोग उत्पन्न होता है।

चिकित्सा।—मुखमण्डलके स्नायुशूलमें,—बेलेडोना, आरसेनिक, एकोनाइट, कलोफाइलम, स्पाइजिलिया और फासफोरस। आधे शिरके शूलमें,—आरसेनिक, इग्नेशिया, कफिया, चायना, जेलसिमियम, नक्सवमिका और बेलेडोना। आमाशयके शूलमें,—आरसेनिक, एलोज कलोसिन्थ, नक्स-वमिका और लाइकोपडियम। हृत्पिण्डके शूलमें,—क्याकटस, बेलेडोना, वेराट्रामविर और स्पाइजिलिया। गृध्रसी शूलमें,—केमेमिला इग्नेसिया, कलोसिन्थ, आरसेनिक, लाइकोपडियम, प्रमवम सलफर और फासफोरस। इन सब दवाओंकी ७ठ शक्तिमें व्यवहार करना चाहिये।

को आ सकती है। आंखें लाल, प्रकाश असह्य; आंखोंमें अतिशय जल गिरना, बारंबार छींक; वेदना; आंखोंके कोनोंमें और चक्षुताराके किनारे छोटी छोटी फुन्सियां, आंखोंसे पीब निकलना और सूजनेसा पीब फुन्सियोंपर या देखनेमें रुकावट उत्पन्न करे, तो दश बिन्दु १ एक आउन्स जलमें मिला आंखोंको धो देना चाहिये।

आर्जेण्टाम नाइट्रिकाम ३ या ३०।—अकुनछीपीब-के साथ सर्दीके चक्षुप्रदाहमें, पुराने चक्षुप्रदाहमें जब कुछ पीले रङ्गका पीब निकले।

सलफर ३, ३०।—चक्षुताराका प्रदाह और उसको चारों ओर लाल चकत्तीजैसे जख्म, सुई चुभनेजैसी तीव्र वेदना, जल लगनेसे वृद्धि या गण्डमालाजनित चक्षुप्रदाहमें आरसेनिका ६, फासफोरस ६, जेलसिमियम १x भी प्रयोग किया जाता है।

पथ्यापथ्य।— लघुपाक पुष्टिकर खाद्य देना चाहिये। मछली और मोटी चीज निषिद्ध है। रातोंको साफ बिछौनेपर सुलाना उचित है। गुलाबजल या कुछ गर्म दूधसे आंखोंको धो देना चाहिये।

—

दृष्टिशक्तिकी अल्पता । (AMBLYOPIA.)

कारण ।—दृष्टिक्षीणताके बहुतेरे कारण हो सकते हैं। अति सूक्ष्म या अति उज्ज्वल पदार्थको अधिक समयतक देखना; अपरिमित निद्रा या मादक सेवन; शीतल प्रयोगसे एकाएक पसीना रोकना; रजोरोध प्रभृति इस रोगके कारण हैं।

चिकित्सा ।—रस रक्तादि अधिक परिमाणसे निकल जानेपर शरीरकी रक्ताल्पतासे दृष्टिक्षीणता उत्पन्न होनेपर चायना ६, ३०। चायनासे उपकार न हो, तो फासफोरस ६, ३०। अतिरिक्त परिमाणसे मादक द्रव्य सेवनजनित दृष्टि-शक्तिकी अल्पता होनेपर नक्सवमिका १x। रक्ताधिक्यवशतः क्षीणदृष्टि होनेपर बेलेडोना ६, ३०। रजोरोध होनेपर पल्स-टिला ६, ३०। [illegible] बाद यह रोग होनेपर [illegible] ६। [illegible]

[illegible]

चिकित्सा।—आघातजनित तारकामण्डल-प्रदाहमें आरनिका ६ और आरनिका मूल अरिष्ट दश बिन्दु आध पाव जलमें मिला प्रति दिन ३।४ बार धो लेना चाहिये। प्रदाहके साथ ज्वर रहनेसे एकोनाइट ३x और आरनिका ६ पर्य्यायक्रमसे। यदि मस्तक आक्रान्त हो, तो आरनिका और बेलेडोना पर्य्यायक्रमसे। वातजनित प्रदाहमें ब्रायोनिया, स्पाइजिलिया, युफ्रेसिया। गांठोंके वातजनित प्रदाहमें आरसेनिक, कलोसिन्थ, ककिउलस या सलफर। उपदंशजनित प्रदाहमें कालिबाइक्रम, मार्कसल, एसिड फस। प्रमेहजनित प्रदाहमें—एसिड फस, मार्कसल, आरजेण्टाम-नाइट्रिकम। इन सब औषधियोंको ६ ठीं शक्तिमें देना चाहिये।

जाला। (*Muscævolitantes.*)

इस रोगमें ऐसा ज्ञान पड़ता है मानो आंखोंके सामने छोटे-छोटे कीड़े या छोटे-छोटे धूलिकण या सूत्रवत् पदार्थ उड़ रहे हों। पुराने ज्वर, अपरिमित शुक्रक्षरण; रक्ताल्पता प्रभृति नाना कारणसे यह रोग उत्पन्न होता है। कारण अनुसन्धानकर मूल रोगकी चिकित्सा करने हो यह रोग आप ही आप दूर हो जाता है। अधिकांश स्थलमें निर्बलतासे ही यह रोग उत्पन्न होता है, इसलिये चायना ६ या एसिड फस ३० प्रायः सभी अवस्थाओंमें प्रयोग किया जा सकता है।

धूमदृष्टि या धुन्द। (Glaucoma.)

समय समयपर आंखोंके सामने धुन्धलापन आ जाता है। स्वास्थ्यहानिसे यह रोग उत्पन्न होता है। इस रोगका कारण अभीतक स्थिर नहीं हुआ है। सिवा इसके कोई-कोई पीड़ा वातसम्बन्धिक रूपमें भी दिखाई देती है। एकोनाइट ६, बेले-डोना ६, आर्जेण्टाम नाइट्रि ६, फासफोरस ६ समय समय-पर उपकार करता है।

अञ्जनी। (Hordeolum.)

आंखोंकी पलकोंके ऊपर या नीचे मवादविशिष्ट एक लाल-सी फुन्सी हो जाती है, उसको आञ्जनी या बिलनी इत्यादि कहते हैं। पल्सेटिला ६ इस पीड़ाकी उत्तम औषधि है। बारंबार फुन्सी होने और उसके मुंह आनेपर उस स्थानके [illegible] ३० या [illegible] ६।

९। कर्णरोग।

कर्णप्रदाह। [OTITIS.]

[illegible] है और [illegible]
[illegible] है [illegible]

चारनिका ३। शूलविद्धवत् वेदनामें पलसेटिला ३x। सर्दी-मे होनेवाले इस शूलमें भो पलसेटिला उपकारी है। दन्त-शूलके साथ-साथ कर्णशूल होनेपर कैमोमिला १२, मार्कसल ६।

कर्णव्रण। (Abscess of the Meatus.)

कर्णावर्त्तकी बगलमें छोटी-छोटी फुन्सियां हो वेदनायुक्त, स्फीत और लाल हो जाती हैं। इससे सुननेकी शक्तिमें व्याघातनक होता है।

चिकित्सा।—टप-टप वेदना, लाल और स्फीत होनेपर बेलेडोना ३x सेवन और बेलेडोना ०, वाह्यप्रयोग। बेलेडोनासे उपकार न हो, तो साइलिसिया ३०। पीब होनेका उपक्रम होनेपर शीघ्र पकानेके लिये हिपर सलफर ६। प्रदाह घटनेपर सलफर ३०।

कर्णनाद। (Tinnitus Aurium.)

इस रोगके होनेपर कानमें सन सन, फस-फस, सों-सों वाद्यध्वनिवत शब्द अनुभूत होता है। अन्यान्य पीड़ाके बादके उपसर्गमें या स्नायविक दुर्ब्बलतामें कर्णनाद होता है। इस रोगमें मनुष्य धीरे-धीरे बहरा हो जाता है।

चिकित्सा।—कानमें घण्टाध्वनि, गर्जनवत् या सन-

गन शब्द होनेपर एसिड फासफोरिक ३० । प्रातःकाल कानमें गर्ज्जनवत् शब्द और कानके भीतर बारंबार खुजली रहनेसे नक्सवमिका ६, ३० । कानमें जलप्रवाहवत् कल-कल शब्द अनुभव होनेसे हैमोमिला ६ । कुइनाइनके अपव्यवहारजनित विविध प्रकारके कर्णनादमें एसिड नाइट्रिक ६ और चायना २०० । मस्तकके रक्तसञ्चयजनित कर्णनादमें बेलेडोना ६ और वमनके साथ कर्णनादमें वेराट्राम एलबम ३ । कलकी गाड़ीके शब्दसेसे शब्दमें और हिस-हिस शब्दवाले कर्णनादमें डिजिटेलिस ६

कानमें पीव। (OTORRHŒA.)

हाम, ज्वर प्रभृति पीड़ाके बाद और गण्डमालाग्रस्त बच्चों-के कानमें पीव उत्पन्न होता है । वयःप्राप्त मनुष्योंके कानमें पीव जमा होना बधिरताका पूर्व्वलक्षण है ।

चिकित्सा ।—अधिक परिमाणसे दुर्गन्ध पीव निकलने-पर मरक्‍युरियस (?) ... पर मरम सैट ६ । कानके पश्चाद्भागमें और नीचे वेदना और सूजनके साथ दुर्गन्ध पीव निकलना ; विशेषतः शरीरमें पारेका दोष रहनेपर नाइट्रिक एसिड ६ । पुराना कर्णस्राव, जो बहुत दिनोंसे आराम न हो कैल्केरिया कार्ब्ब ६ ३० । कानसे रक्ताक्त जलवत् पतला नमीना दुर्गन्ध पीव निकलनेपर ग्रेफाइटिस ६ । गन्धशून्य श्लेष्मा या पीव निकलनेपर पलसेटिला ६ । कानमें तीव्र वेदनाके साथ पीव या रक्ताक्त पीव निकलनेपर

मार्कसल । कानके बाहर सूजन और कानके अन्दरसे पतली धारामें पीब निकलनेपर साइलिसिया ३० । पीब सूख जानेपर बहरा होनेकी आशङ्का होनेपर कुछ दिन सलफर ३० और फासफोरस ६ पर्य्यायक्रमसे प्रयोग करना चाहिये ।

बहरापन । (DEAFNESS.)

बधिरता तीन तरहकी होती है ,—(१) स्नायविक क्रियाके वैषम्यसे , (२) अन्यान्य रोगसे और (३) जन्मकी बधिरता। प्रथमोक्त दोनो तरहकी बधिरता चिकित्सा द्वारा दूर की जा सकती है ।

चिकित्सा ।—सर्व्वाङ्गीन दुर्व्वलता और गण्डमाला-जनित बधिरतामें ; जब कानमें वाद्यध्वनि तथा अन्यान्य शब्द सुनाई दें , किन्तु मनुष्यकी बात समझमें न आये और कानमें सदा एक तरहका शब्द अनुभूत हो, फासफोरस ३० । रक्त-सञ्चयजनित शिर:पीड़ामें कानमें एक तरहके शब्दानुभवके साथकी बधिरतामें चिनिनाम सलफ ३य क्रमका विचूर्ण । अपरिमित शुक्रक्षयसे श्रुतिशक्तिकी अल्पता होनेपर एसिड फस ६ । सर्दीके सबब बधिरतामें एकोनाइट ६, बेलेडोना ६ या पलसेटिला ६ और पुरानी अवस्थामें मारक्यूरियस ६ । ज्वर या अन्य रोगके बादकी बधिरतामें बेलेडोना ६, पलसेटिला ६, साइलिसिया ३०, चायना ६, सलफर ३० और एसिडफस

६। कानके अन्दर जखम होनेपर उसका स्राव बन्द होनेकी बधिरतामें सलफर ३०, हिपर सलफर ६, मरमसेट ६, कष्टिकम ६ और एण्टिम क्रुड ६।

७। नासिका-पीड़ा।

नाकमें क्षत। (*Ozæna*)

नाककी श्लेष्माकी झिल्लोमें क्षत होनेपर दुर्गन्ध पीव या क्लेद निकलता है। इस पीड़ासे क्रमश: नाककी छोटी या बड़ी हड्डी नष्ट और मनुष्यकी सूंघनेकी शक्ति लोप हो सकती है। पारेके अपव्यवहार; उपदंशके क्षत; पुरानी सर्दी; किसी चीजका नासारन्ध्रमें प्रवेश; पैत्रक पारददोष प्रभृति कारणसे यह रोग होता है।

चिकित्सा।—नाक लाल, स्फीत और वेदनायुक्त; नासारन्ध्रमें उत्तापबोध और कुछ-कुछ वेदना; पीली आभावाला या पीले रङ्गका स्राव; कभी-कभी आधा जल-जैसा और आधा शुष्क पीवदार स्राव प्रभृति लक्षणमें मरमसेट ६। तरुण सर्दीमें नाकसे अधिक जल निकलनेपर नाकका ऊपरी भाग लाल और वेदनायुक्त होनेपर, बादको नाकका

मध्यभाग बैठने और प्राणशक्तिके लोप होनेपर ; उसमें दोषदार रक्तमिश्रित या मांसके धोवनजैसा दुर्गन्धमय स्राव प्रभृति लक्षणमें कलिसायक्रम ६। पारेके अपव्यवहार या उपदंशको पीड़ाके बाद या पिता-माताके पारद-दोषसे पीनस रोग होने और उसीके साथ प्रदाह तथा स्फीतता सहित नाकसे दुर्गन्धमय पीब या खूनमिश्रित पीबका स्राव होनेपर एसिड नाइट्रिक ६। अतिशय दाह और ज्वालाके साथ नाकसे जलवत् पीब निकलने और उसीके साथ छींक तथा स्वरभङ्ग प्रभृति लक्षणमें और पुराने नासिकाक्षतमें आर्सेनिक ६, ३०।

नाकसे रक्तस्राव । (EPISTAXIS.)

यह रोग यदि हलका हो, तो इसकी दवा करनेका प्रयोजन नहीं। किन्तु बारंबार इस रोगसे आक्रान्त होनेपर इसकी दवा करना चाहिये। सम्भवतः एक ही ओरकी नाकसे रक्त गिरा करता है। समय-असमयपर यह रक्त नाकसे न निकल स्वरनाली, गले या आमाशयमें जा पड़ता है। माथेमें रक्ताधिक्य, कठिन चोट लगना, अतिरिक्त परिश्रम और खांसीसे यह रोग उत्पन्न होता है। ऋतु बन्द होने या अर्शवृत्तिसे रक्तस्राव बन्द होनेपर नाकसे रक्त निकला करता है।

चिकित्सा :—फेराम फास्‌ ३ चूर्ण इसकी एक उत्तम दवा है। बहुत अधिक रक्तस्राव होनेपर हेमामेलिस १ x

आभ्यन्तरिक प्रयोग और दो-तीन बिन्दु हैमामेलिस ० नाकमें प्रवेश करा देनेसे रक्तस्राव बन्द होता है। रजस्रावके बन्द होने या अर्शोवलिका रक्तस्राव बन्द होनेकी वजह नाकसे रक्त गिरनेपर पलसेटिला ६, हैमामेलिस ३x, पडोफाइलम ६ या सलफर ३०। मस्तक या नाककी चोटसे नाकसे रक्त निकलनेपर आरनिका ३x। थम-थमकर खूब रक्तस्राव होनेपर चायना ६ और कार्ब्बोवेज ३०।

नासा। (POLYPUS.)

श्लैष्मिक झिल्लीके उपादानसे नासिका-गह्वरमें लहसुन या प्याजकी गांठजैसी सूजन उत्पन्न होता है। यह एक नाकमें भी हो सकती है और दोनो नाकोंमें भी। इस रोगके होनेसे पहले सर्दी होती है। इसके उपरान्त पहले गर्दनमें थोड़ा-थोड़ा दर्द; पीछे सर्व्वाङ्गमें दारुण वेदना होती और आंखें तथा मुख लाल हो जाता है। बेलेडोना ६ और मेडुइनेरिया १x पर्य्यायक्रमसे देना चाहिये।

८। रक्त-सञ्चालन-यन्त्रकी पीड़ा।

हृद्वृद्धि। (Hypertrophy of the Heart.)

हृत्पिण्डका आकार बहुत कुछ गौफेजैसा है। यह

बढ़नेपर खूब गोल और भारी हो जाता है और पेशियां भर आती हैं। अपरिमित व्यायामके कारण रक्तसञ्चालनकी क्रिया बन्द हो जानेसे यह रोग उत्पन्न होता है। लक्षण ;— हृत्पिण्डकी क्रिया सवेग होती और हृदय शब्दके साथ स्पन्दन करता है; हृदयके तड़पनेसे एक तरहका कष्ट अनुभव होता है; गला सुरसुराता और खांसी आती है; परिश्रम करनेसे श्वास-प्रश्वासमें कष्ट होता है; नाड़ी पुष्ट और द्रुत हो जाती है। कभी-कभी वक्षस्थलका पार्श्वदेश फूल आता है।

चिकित्सा ।—हृत्पिण्डकी क्रियावृद्धि और द्रुतता, वामपार्श्वमें वेदना, नाड़ी तीव्र और द्रुत, श्वासकष्टके लक्षणमें एकोनाइट ३। हृत्पिण्डकी पेशियोंकी दुर्बलता; सिर घूमना; मूर्च्छाभाव; परिश्रम करनेसे श्वासकष्ट और हृत्कम्प और छातीकी हड्डीके नीचे दर्द आदि लक्षणमें डिजिटेलिस ३। हृत्पिण्डकी वृद्धि; लुप्तप्राय नाड़ी; शारीरिक अवसन्नता; श्वास-प्रश्वासमें अत्यन्त कष्ट; ऐसा कि रोगी सो और बात कर न सके; निद्रा न आना, पैरमें सूजन, हृत्पिण्डका प्रदाह, हृद्स्पन्दन और हृद्शूल होनेपर कैक्टस १x। नावके डांड चलानेवाले तथा गदा आदि फेरनेवाले मनुष्योंके हृत्पिण्डके स्नायुशूल, पेशीशूल और हृद्वृद्धिमें आरनिका ३। अन्यान्य औषधियां - आरसेनिक ६, स्पाइजिलिया ३।

हृत्शूल। (Angina Pectoris)

क्षीण और रुग्न हृत्पिण्डके आक्षेपके कारण छातीमें वेदना होती है। इसीको हृत्शूल कहते हैं। छातीके मध्यस्थलमें तीव्र वेदना होती है। इसके बाद यह वेदना हृत्पिण्डसे फैल क्रमशः चारों ओर पहुंच जाती है। क्रमशः यह वेदना बढ़ती है। उस समय श्वास-प्रश्वासमें बड़ा कष्ट होता और रोगीकी मृत्यु हो सकती है। वेदना कुछ समय-तक धीमी रह फिर तीव्र वेगसे आक्रमण करती है। अतिशय अस्थिरता और मानसिक आतङ्क ; मृत्युभय ; मूर्च्छाका उपक्रम ; किसी अंशका सहारा ले खड़े होनेमें भी दुःख कष्ट और पसीना प्रभृति लक्षण दिखाई देते हैं।

चिकित्सा।—तीव्र और स्थिर गतिविशिष्ट नाड़ी ; दुर्बलताके साथ अतिशय श्वासकष्ट और मृत्युभय ; मुखमण्डल मलिन ; आंखें कोटरमें आदि लक्षणमें आर्सेनिक ६, ३०। रक्तप्रधान मनुष्योंके तरुण हृत्शूलमें श्वासरोध होनेका उपक्रम होनेपर एकोनाइट ३x, ३०। अधिक परिमाणसे बारंबार हृत्स्पन्दन ; मूर्च्छाभाव ; अतिशय व्याकुलता और धीमी नाड़ी होनेपर डिजिटेलिस ३। हृत्पिण्डका आक्षेप मर्दन आदि मानो किसीने लोहेके हाथसे हृत्पिण्डको दबा रखा हो आदि लक्षणमें कैक्टस १x। छातीमें छेदा बिंधनेके हृत्शूलमें स्पाइजेलिया ६, ३०।

हृद्स्पन्दन । (Palpitation of the Heart.)

स्वस्थ शरीरमें हृत्पिण्डकी क्रिया सहजभावसे साधित होती है। ऐसा न हो, तो समझना चाहिये, कि हृत्पिण्डको कोई रोग लग गया है। स्नायविक दुर्ब्बलता, रक्तप्रधान धातु; अतिशय मानसिक चिन्ता, अपरिमित शारीरिक परिश्रम या व्यायाम, गुल्मवायु, अधिक परिमाणसे शारीरिक स्राव निःसरण, भय, शोक, रजःस्रावका वैलक्षण्य; अति मैथुन; अपरिमित मादक द्रव्य सेवन; दुर्दमनीय अन्त्ररोग पीड़ा प्रभृतिसे यह रोग उत्पन्न हो सकता है।

चिकित्सा ।—मुखमण्डल उत्तप्त और लाल; हाथ-पैरकी अवशता; खूब श्वास-प्रश्वास, सामान्य उत्तेजनासे हृत्कम्प; मनमें आये मानो हृत्पिण्डकी क्रिया लोप हुई प्रभृति लक्षणमें एकोनाइट ६। हृत्पिण्डकी वेदनाके कारण वक्षस्थलमें यन्त्रणा; मुखमण्डल आरक्त और शिरःपीड़ामें बेलेडोना ३। हृत्पिण्डकी क्रिया कभी द्रुत, कभी मन्द; *हिलने या शयन करनेसे ऐसा ज्ञान पड़े मानो हृत्पिण्डकी क्रिया लोप हुआ चाहती है*; अत्यन्त अस्थिरता; अतिरिक्त परिश्रम और अतिशय मानसिक उत्तेजनाके हृद्स्पन्दनमें डिजिटेलिस १०। मनमें आये मानो हृत्पिण्डकी कोई हिलना या टहलना हो या प्रबल वेगसे उछाल रहा हो, सदा ही हृत्पिण्ड धड़ धड़ धड़कता रहे बामपार्श्वमें शयन

६। श्वासयन्त्रकी पीड़ा।

सर्दी। [Catarrh.]

श्वासनालीके कुछ अंशके प्रदाहयुक्त होनेसे सर्दी होती है। केवल नाककी श्लैष्मिक झिल्लीके प्रदाहयुक्त होनेसे सर्दी होती और नाक तथा गलेकी श्लैष्मिक झिल्लीके प्रदाहयुक्त होनेपर सर्दीका ज्वर उत्पन्न होता है। पीड़ाकी प्रारम्भिक अवस्थामें शरीरमें ग्लानि; अङ्गड़ाई; शिरमें दर्द; शिर घूमना; चक्षु लाल; श्वास-प्रश्वास उत्तप्त; बारंबार छींक और उसके साथ-साथ आंख-नाकसे जल गिरना आदि लक्षण प्रकट होते हैं। इसके बाद थोड़ी-थोड़ी शीत; द्रुत और चञ्चल नाड़ी; सूखी खांसी; स्वरभङ्ग; अक्षुधा; सर्व्वाङ्गमें वेदना आदि विकार प्रकट होते हैं। अधिक समयतक आर्द्र वस्त्रमें रहना; वृष्टिमें भीगना; हिम या शीत लगना; एकाएक पसीना बन्द करना आदि इस रोगके कारण हैं।

चिकित्सा। स्पिरिट केम्फर।—पीड़ाकी प्रथमावस्थामें; जब कुछ-कुछ शीत जान पड़े, शरीर टूटे और नाकसे जल गिरे।

एकोनाइट ३।—पीड़ाकी प्रथमावस्थामें कुछ-कुछ शीत; ज्वरभाव; जुम्हाई आना, शरीर टूटना; आंखोंसे

ज्वाला सजल चक्षु, उत्ताप श्वास-प्रश्वास ; बारंबार छींक ; सिर भारी, तरल श्लेष्मास्राव और अत्यन्त ग्लानि।

आमोनिया ३X, ६, ३०।—श्वासनालीकी श्लैष्मिक झिल्लीमें ज्वालाकर प्रदाह, कष्टकर, शुष्क और खुस खुस खाँसी, खाँसते खाँसते अल्प श्लेष्मास्राव ; श्लेष्मामें नाक बन्द हो जाना, खाँसते समय छातीमें वेदना, आँखोंसे जल गिरना पाकस्थलीका क्रियावैलक्षण्य, छातीकी बगलमें सुई चुभने-जैसी वेदना।

जेलसिमियम ३X।—पीठमें शीतके साथ ज्वर ; ज्वरावस्थामें साथ गर्म, प्यास, सिर भारी, मुखमण्डल लाल सजल चक्षु, नाड़ी पूर्ण और द्रुत, गलेमें वेदना ; खाँसी और स्वरभङ्ग।

आरसेनिक एलबम ६, ३०।—अधिक परिमाणमें नाक, नेत्र और ज्वालाकर श्लेष्मास्राव ; बारंबार छींक ; आँखसे जल गिरना अत्यन्त ग्लानि और तन्द्रालुता ; नाक, आँख, गलेकी और कण्ठनालीकी अवसन्नता।

परमेंटिला ३, ६, ३०।—नाकमें खाज़ और दुर्गन्ध श्लेष्मास्राव, नाक और मस्तकके पार्श्वमें तीव्र वेदना ; सिर भारी ; किसी चीज़का स्वाद या आघ्राण न मिलना ; गर्म कोठरीमें मध्यरात्रिको लक्षणोंकी वृद्धि।

नालियोंकी श्लैष्मिक झिल्लियां आक्रान्त होती हैं। सर्दी रोगमें केवल नाक और गलेकी श्लैष्मिक झिल्लियां आक्रान्त होती हैं। बच्चों और बूढ़ोंको यह रोग हो, तो खतरेकी बात है। लक्षण पहले सिर जकड़ जाना; आलस्य; क्रमशः ज्वरका भाव; छातीमें गर्मी जान पड़ना; स्वरभङ्ग; श्वासकष्ट, ऐसा जान पड़ना मानो छाती जकड़ गई हो, पहले शुष्क खांसी, पीछे किलमैला और इसके भी बाद गाढ़ा और पीला श्लेष्मास्राव; जिह्वा मैली और पेशाबका परिमाण कम हो जाता है। द्वितीय अवस्थामें अतिशय श्वासकष्ट; गलेमें घरघराहट; ज्वर, तापमान १०४ डिगरीतक बढ़ जाना। ठण्डा चटचटा पसीना, समय गाल पीले या नीले, सूखी और भुरभुरी जिह्वा; मूत्रका परिमाण कम और हाथ-पैर ठण्डा। चार दिनमें रोग घटे, तो अच्छा है, नहीं तो क्रमशः रोग कठिन हो जाता है। बूढ़ोंको यह पीड़ा प्रायः ही पुराना आकार धारण कर लेती है।

चिकित्सा। एकोनाइट 3X।—छाती और गलेमें सुर-सुर करता खांसी और इसकी वजह कराह और अन्तड़ियोंमें वेदना।

एण्टिमटार्ट ६, ३०।—खांसते-खांसते श्वासरोध होनेका उपक्रम। ज़रा थूका जैसा कटकर निकलना; सांय-सांय

शब्द ; कमर, पीठ और माथेमें वेदना और हृदस्पन्दन।
वृद्ध और बच्चोंके वायुनाली-प्रदाहमें।

बेलेडोना ६।—एकोनाइट प्रयोगसे वैसा फल न होने-पर। सूखी खुर-खुर खांसी ; ज्वर ; शिर:पीड़ा ; चक्षु और मुख लाल।

ब्रायोनिया ६, ३०।—गलेकी नाली और बड़ी श्वास-नालीके आक्रान्त होनेपर अतिशय कष्टकर खांसी ; पीला गाढ़ा अथवा रक्तमिश्रित श्लेष्मास्राव ; खांसते-खांसते वेदनासे छातीपर दबाव जान पड़ना।

केलिबाइक्रम ६, १२।—स्वरनाली और छातीका प्रदाह ; छोटी-छोटी स्वरनालियोंके आक्रान्त होनेसे कष्टकर खांसी ; बहुत देरतक खांसनेके उपरान्त लसदार, सफेद या मैला श्लेष्मास्राव ; पीली और मैली जिह्वा ; क्षुधा-मान्द्य।

आरसेनिक एलबम ६, १२, ३०।—छातीका जकड़ जाना ; शयन करनेपर दमजैसा श्वास-कष्ट ; खांसते-खांसते तरल श्लेष्मास्राव। वृद्ध और दुर्बल मनुष्योंके पुराने वायुनाली-प्रदाहमें।

कार्बो-वेज ६, १२, ३०।—वृद्धोंकी पुरानी या चर-मावस्थामें शरीरके हाथ-पैरका शीतल हो जाना, और

और वायु पानेकी आशासे रोगी दोनों कन्धे ऊँचे करता है। प्रायः ही पिछली रातको यह रोग बढ़ता है। खांसते-खांसते बहुत कष्टसे श्लेष्मा निकाल देनेपर दमेका जोर बहुत कुछ घट जाता है। दमेके साथ-साथ किसी-किसी रोगीमें पेट फूलना; सिर जकड़ जाना; वमनेच्छा प्रभृति लक्षण दिखाई देते हैं। माता-पितामें इस रोगका रहना; रातको अधिक भोजन; रहनेमें दूषण; वायुके साथ धूलिकणा या किसी तीव्र गन्धका श्वासके साथ शरीरमें प्रविष्ट होना प्रभृति कारणसे यह रोग उत्पन्न होता है। दमेका रोगी प्रायः ही दीर्घजीवी होता है।

चिकित्सा। आरसेनिक ६, १२, ३० ।—देहमें रङ्ग जर्द होनेसे श्वासकष्ट; गलेमें घरघराहट; हिलनेसे इसकी वृद्धि; छातीमें ज्वाला और ठण्डा पसीना।

इपिकाक ६ ।—छातीपर दबाव, रुद्ध श्वास-प्रश्वास; गलेमें घरघराहट, सर्वाङ्गमें शीतलता; सारे शरीरका, विशेषतः मुखमण्डलका पीला हो जाना; अस्थिरता; मितली बारबार कष्टकर खांसी

एकोनाइट ३, ३० ।—दमा आरम्भ होते ही व्याकुलता, श्वास लेनेमें कष्ट, हृत्पिण्डकी क्रिया मृदु।

किउप्राम-मेट ६ ।—आकस्मिक श्वासरोगमें ऐंठन और मृगीके लक्षण

फेफड़ेकी जलन। (Pneumonia.)

फेफड़ेका प्रदाह एक या दोनों ओर हो सकता है। इस रोगमें साधारणतः तीन अवस्थायें दिखाई देती हैं। प्रथमावस्थामें फेफड़ेमें रक्त सञ्चय होता और शीतके साथ ज्वर आ जाता है। तापमान १०३से १०७ डिग्रीतक पहुंच जाता है। श्वास प्रश्वासकी गति मिनट पीछे ३०।३५ बार हो जाती है। नाड़ी-स्पन्दन मिनट पीछे १२०।१३० बार हो सकता है। पहले ज्वर आनेपर थोड़ी-थोड़ी खांसीके साथ अल्प परिमाणसे लसीला श्लेष्मास्राव होता है। इसके उपरान्त द्वितीयावस्था उपस्थित होती है। इस अवस्थामें पहले लोहेके मोर्चेके या ईंटके चूर्णकी तरह कठिन चिकना श्लेष्मास्राव होता है। खांसते समय छातीपर दबाव जान पड़ता है। नाड़ीमें द्रुतता, अरुचि, श्वास-प्रश्वासमें कष्ट और नाड़ी पूर्ण तथा उत्तेजनापूर्ण हो जाती है। उल्लिखित प्रथमावस्था कुछ घण्टेसे लेकर २।३ दिनतक रह सकती है। इसके उपरान्त द्वितीयावस्था आरम्भ होनेपर फेफड़ा कठिन हो जानेसे वेदना घट जाती है। खांसनेमें उतना कष्ट नहीं होता और श्लेष्मा सरल होकर निकल आता है। इसतरह [illegible] [illegible] [illegible] अवस्था स्थिर [illegible] [illegible] अवस्था आरम्भ होती है [illegible] दूर होने[illegible] होता है [illegible] ज्वर [illegible] फेफड़ेका दर्द [illegible] [illegible]

और ये आपसे निवारण होता है। किन्तु यदि रोग बढ़कर जाता है, तो द्वितीय अवस्थाके बाद ही फेफड़ेमें पीब उत्पन्न होता और वह खांसीके साथ प्रचुर परिमाणमें निकलता है। इसके बाद नाड़ी क्षीण और द्रुत हो जाती तथा श्वासका वेग बढ़ जाता है। इसके उपरान्त रोगी शक्तिशून्य हो मृत्यु-मुखमें पतित होता है। कभी कभी रोगी अपनी दुर्बलताकी वजह पीब निकाल नहीं सकता, इसके फलसे रोगीका दम बन्द जाता और उसकी मृत्यु हो जाती है। इस पीड़ाकी परीक्षाके लिये छातीकी परीक्षा करनेवाले यन्त्र स्टेथोस्कोपकी आवश्यकता होती है। छातीकी परीक्षा करनेसे विदित होता है, कि पीड़ाकी आक्रमणावस्थामें पहले कठिन शब्द सुनाई देता है, पीछे बालोंके आपसमें रगड़ जानेकेसा शब्द अनुभूत होता है। द्वितीय अवस्थामें जब फेफड़ा कठिन हो जाता है, तब किसी तरहका शब्द नहीं होता। तृतीय अवस्थामें जब फेफड़ेमें पीब उत्पन्न होता है, तब सिर्फ टप-टप शब्द सुनाई देता है। दोनों ओरके फेफड़ेके आक्रान्त होनेपर रोगको कठिन समझना चाहिये।

कारण।—ऋतुपरिवर्तन; पसीनेका रुकना; शारीरिक दुर्बलता; ज्वरादि रोगके पीछेका निर्बल हो जाना; सिर का ठण्ढा लगना।

चिकित्सा। एकोनाइट 3X, ६।—पीड़ाकी प्रथमा-

वस्थामें जब ज्वराभाव ; सर्दी ; अत्यन्त ग्लानि ; अस्थिरता ; दोनो कन्धोंके बीचमें या छातीमें वेदना ; थोड़ी खांसी ; तीसरे-पहर पीड़ाकी वृद्धि ।

फासफोरस ६, ३० ।—लगातार कष्टकर खांसी ; छातीमें तीव्र वेदना ; पीला, हरा या रक्तमिश्रित श्लेष्मास्राव ; द्रुत नाड़ी ; बालपर बाल घिसनेजैसा फेफड़ेमें शब्द । बच्चोंके ब्रङ्कोनिउमोनियामें एकोनाइटके साथ पर्य्यायक्रमसे ।

ब्राओनिया ६, ३० ।—बारंबार शुष्क और खुस-खुस खांसी ; किन्तु अल्प श्लेष्मास्राव ; छातीमें सुईकी चुभन या दबाव जैसी वेदना ; श्वास लेनेपर वेदनाकी वृद्धि ।

वेराट्रम विर १X ।—प्रथमावस्थामें जब फेफड़ेमें रक्त सञ्चित होता है । छातीमें उत्ताप ; यन्त्रणा और भार-बोध ; शीत ; कष्टकर खूब श्वास-प्रश्वास और सूखी खांसी ; नाड़ी पूर्ण, कठिन और उछलती हुई ; यहांतक, कि उंगलीसे दबानेपर भी लोप न हो ।

एण्टिम टार्ट १२ ।—श्वासनाली प्रदाहयुक्त ; गलेमें खुर-खुर खांसी और सांय-सांय शब्द ; बिना कष्टके प्रचुर श्लेष्मास्राव ; नाड़ीकी वेगवृद्धि, किन्तु गात्रताप कम ; अधिक परिमाणसे ठण्डा पसीना ; अतिशय उत्कण्ठा और अस्थिरता ; मुखमण्डल पीला या काला , माथेमें रक्तसञ्चय ।

जेलसिमियम ३ X, ६ ।—दाहनेका फेफड़ा प्रदाह-युक्त और उसीके साथ यकृत्प्रदेशमें वेदना, लसदार पीला तरल मल और श्वासकष्ट ।

सलफर ६, ३० ।—फेफड़ेके प्रदाहकी प्रथमावस्थामें या पीब उत्पन्न होनेसे पहले ।

लाइकोपडियम १२, ३० ।—पीड़ाकी तृतीयावस्थामें पीब उत्पन्न होनेपर ।

साधारण नियम ।—छाती और पीठको रूईसे ढँक रखना चाहिये। रोगीको पीनेके लिये ठण्डा पानी दिया जा सकता है।

खांसी। (Cough.)

खांसी अन्य रोगका लक्षणमात्र है। गलेकी नालीकी विकृति; फेफड़ेमें प्रदाह, यकृतकी पीड़ा और सर्दी प्रभृति पीड़ाके साथ खांसी मौजूद रहती है। खांसी दो तरहकी होती है; तरल और कठिन या सूखी। यक्ष्मारोगमें ज्वर और छातीकी वेदनाके साथ शरीरको क्षय करनेवाली खांसी मौजूद रहती है। दमेके रोगके साथ जो खांसी रहती है; वह रातको बढ़ती और उसके साथ श्वासकष्ट वर्त्तमान रहता है। निउमोनिया रोगमें ईंटके चूर्णजैसा थोड़ा श्लेष्मा निकालनेवाली खांसी रहती है। रक्तके रोगमें उज्ज्वल

रहाई साथ खांसी आती और सूखी खांसीमें ठन-ठन शब्दके साथ खांसी आती है। इस ज्वरके साथ एक तरहकी सूखी खुस-खुस खांसी दिखाई देती है।

चिकित्सा। **एकोनाइट ३X** ।—उत्कण्ठा ; सिरकी व्यथा ; कोष्ठबद्ध या कल ; चित होकर सोनेसे खांसीमें कमी ; करवट सोनेसे खांसीकी वृद्धि ; खांसते समय छातीमें कोंचने जैसी वेदना ; सूखी खांसी।

इपिकाक ३X । बारंबार छींकें ; कष्टकर श्वास-प्रश्वास ; आक्षेपिक और श्वासरुद्धकर खांसी ; स्वरनालीमें सुर-सुराहट ; या ख़तके साथ सांय-सांय शब्द ; या अतिरिक्त परिमाणसे श्लेष्मा एकत्र होनेसे खरखराहट ; खांसते समय नाभिमें वेदना ; मितली या वमन।

जेलसिमियम ३ ।—स्वरभङ्ग या स्वररुद्धके साथ उग्र खांसी और उसीके साथ कण्ठ तथा छातीमें वेदना। प्रदाहकी प्रथमावस्थामें।

बेलेडोना ३ ।—स्वरनाली और कण्ठनालीमें प्रदाह ; पूर्ण और कठिन नाड़ी ; उज्ज्वल आंखें ; मुखमण्डल लाल ; सिर चक्कर खाना ; मस्तिष्क रक्ताधिक्य ; कभी सूखी कभी खुस खुस खांसी ; रातको वृद्धि ; [illegible] आराम ; छातीमें दर्द ; श्वास प्रश्वास मन्द

एसिड नाइट्रिक ६, ३०।—दुर्बलता, मानसिक अवसाद, शिर पकड़ना, क्षुधामान्द्य, पाकस्थलीमें यन्त्रणा; आहारके अन्तमें पेटका पूर्ण ज्ञान पड़ना, रातको गात्र-तापकी वृद्धि, प्यास, पसीना, निद्रामें व्याघात; छातीकी हड्डीके नीचे वेदना, पुरानी खांसीमें।

एण्टिम टार्ट ६, ३०।—स्वरभङ्गयुक्त सूखी खांसी; गलेमें घरघराहटके साथ तरल खांसी, कष्टसे कफ निकलना; आहार करते समय खांसते-खांसते खाये द्रव्यका वमन; खांसते समय जुम्हाई।

ब्रायोनिया ६, १२, ३०।—खांसते समय मस्तक, छाती और बगलमें छोलके फेंकनेजैसी या सुई चुभानेजैसी वेदना; छातीमें वेदना; खांसते समय सर्व्वाङ्गका कम्पन; प्रातःकाल, सन्ध्या समय और ठण्ढी हवामें खांसीकी वृद्धि; सूखी खांसी।

ड्रसेरा ३।—रातको खांसीकी वृद्धि और उसीके साथ वमन तथा उद्गार उठना; समय-समयपर रक्तमिश्रित श्लेष्मा निकलना; रह-रहकर खांसीका वेग; शयन करनेसे खांसीकी वृद्धि होनेपर रोगी उठ बैठनेपर बाध्य हो।

आर्निका ६।—लगनव्यापी खुर-खुर खांसी; खांसते-

खाँसते मारे शरीरका काँप उठना ; खाँसीके साथ थोड़ा-थोड़ा रक्त निकलना ; छातीकी बगलमें सुई चुभनेकीसी वेदना।

आरसेनिक एलबम ६, १२, ३० ।—श्वास-खाँसीकीसी श्वासरोधक खाँसी ; छातीमें आकुञ्चन ; अस्थिरता ; प्यास।

कष्टिकम ६, ३० ।—सूखी खाँसी ; खाँसते-खाँसते बेखबरीमें मूत्रस्राव ; रातको शय्याके उत्तापसे खाँसीकी वृद्धि ; शीतल जल पीनेसे खाँसीमें कमी ; खाँसते-खाँसते श्लेष्मा गलेतक आना ; किन्तु थूकनेकी शक्ति न रहना।

कोनायाम ६, ३० ।—गलेमें सुर-सुर होनेपर सूखी खाँसी ; सोने, बैठने या हँसनेसे खाँसीकी वृद्धि ; रातको खाँसी बढ़ना ; दिनको कम हो जाना।

हिपर-सलफर ६ ।—पुराने अग्निमान्द्यके साथ खाँसी ; गलेमें ज्वाला और स्वरभङ्गके साथ कड़ा, गाढ़ा श्लेष्मा निकलना ; ठण्डक लगनेसे खाँसीकी वृद्धि ; ऐसा प्रतीत होना मानो गलेमें कोई चीज़ अटकी हो और उससे दम निकलनेमें कष्ट।

हाइयोसायेमस ६ ।—आक्षेपिक आवेशयुक्त सूखी खाँसी ; रातको और सोते समय खाँसीकी वृद्धि, उठ बैठनेसे खाँसीका आराम।

इग्नेशिया ६ ।—हिस्टिरिया या स्नायुदुर्बल रोगीकी

गर्भावस्थाके दन्तशूलमें और अन्यान्य दन्तशूलमें मारकिउरियस ६। मुखमण्डलकी चारो ओर कील फेंकने या नोचने जैसी वेदना; वेदना कानतक विस्तृत ; प्रचुर राल गिरना ; रातको वेदना-वृद्धि आदि लक्षणमें मारकिउरियस ३x क्रमका विचूर्ण-सेवन। बहती हुई वायुके दाँतमें लगते ही वेदना-वृद्धि ; दाँतोंका बड़ा जान पड़ना ; वामपार्श्व हीमें वेदना अधिक ; आहारके समय दाँतका शीतल जान पड़ना आदि लक्षणमें सलफर ६। पारेके सेवनसे होनेवाले दन्तशूलमें ; प्रचुर परिमाणसे राल बहनेपर; मसूड़ोंसे रक्तस्राव होनेमें नाइट्रिक एसिड ६। क्षयप्राप्त दाँतकी अतिशय वेदना और उसके साथ अन्यान्य दाँतोंमें वेदना ; शीतल जल स्पर्श करनेसे वेदनाकी वृद्धि इत्यादि लक्षणमें स्पाइजिलिया ३। तुषार और शीतल जल स्पर्श करनेसे वेदनाकी कमीमें कफिया ३x। दाँतोंका काला या विकृत हो जाना ; दाँतोंको जड़का खोखला हो जाना ; ऋतुकालीन दन्तशूल ; आक्रान्त दाँतमें चबाने या तोड़नेजैसी वेदना ; छेदनेजैसी वेदना, जो कानोंतक जान पड़े ; गण्डदेशमें टप-टप वेदना ; दाँतोंकी जड़का फूलना और सफेद हो जाना ; शीतल द्रव्य पान-भोजनसे वेदना-वृद्धिमें स्टेफिसेग्रिया ३० ।

साधारण नियम।—दाँतोंकी रक्षाके लिये बहुतेरे लोग बहुत तरहके दन्त मञ्जन, सुरती, पुरट आदि व्यवहार करते हैं। किन्तु इन उपायोंसे अपकार होनेकी सम्भावना अधिक है। खड़िया मट्टी पानके साथ कूट दाँत मलनेमें अनेक

एकोनाइट ३x पर्य्यायक्रमसे। गलेमें सामान्य वेदना और सूजन; कुछ नीला आभायुक्त लाल घाव; श्वास-प्रश्वासमें दुर्गन्ध आदि लक्षणमें मार्कसल ६। निद्रासे जागते समय गला शुष्क ज्ञान पड़ना; थूक निगलते समय ऐसा ज्ञान पड़े मानो गलेमें पिण्डवत् कोई चीज रुकी हो; गलेमें देखनेसे लाल या बैगनी रङ्ग दिखाई दे; गलेका बाहरी भाग थोड़ा फूल जाये आदि लक्षणमें लाकेसिस ६। थूक निगलनेमें वेदना; तालुप्रदाह; घावसे पीब निकलने आदि लक्षणमें; पुरानी अवस्थामें बेराइटा कार्ब्ब ६। समय-समयपर आरसेनिक ६, फाइटोलैका ३, डालकेमारा ६ प्रयोग किया जा सकता है।

पाकाशय-प्रदाह। (Gastritis.)

तरुण पाकस्थली-प्रदाहमें यह सब लक्षण प्रकट होते हैं;—पेटमें ऐसी ज्वालाकर वेदना, जो दबानेसे बढ़े, शीतल जल पीनेकी अविरल इच्छा, किन्तु वह पेटमें न रहे; सभी समय पेट भरा ज्ञान पड़े, मुख विस्वाद, श्वास-प्रश्वासमें कष्ट; जिह्वा सफेद या पीले लेपसे ढकी हुई, अवसन्नता। पुराने पाकस्थली-प्रदाहमें यह सब लक्षण दिखाई देते हैं—पाकाशयमें ज्वाला, अम्ल या कड़वा वमन, जिह्वाका मध्यभाग लेपावृत, किन्तु प्रान्तभाग लाल, छातीमें प्रदाह, पेट फूलना, प्यास, हस्तपदतलमें ज्वाला, कोष्ठबद्ध, पेशाब लाल और परिमाणमें कम। प्लीहा, यकृत या मूत्रयन्त्रकी बीमारीमें

हेमामेलिस १ ।—हुल, कांपती हुई और शीतल नाड़ी वाले रङ्गका रक्तस्राव, पेटमें गड़-गड़ या कल-कल शब्द; बिना कष्टका रक्तस्राव, दुर्बलता।

आरनिका मण्टेना ३ ।—थोड़ा-थोड़ा रक्तवमन; खाने-पीनेसे वृद्धि, अतिरिक्त परिश्रम या चोटके रक्तस्रावमें।

आरसेनिक ६, ३० ।—श्वास-प्रश्वासके कष्टमें; मुख-मण्डल मलिन, हृदस्पन्दन, गात्रदाह, दुर्निवार प्यास, नाड़ी क्षुद्र तथा क्षीण।

चायना ६, ३० ।—अतिरिक्त परिमाणमें रक्त निकलने-से रोगीका दुर्बल होना और हाथ-पैरकी शीतलताके साथ नाड़ी क्षीण हो जाना।

नियम ।—जबतक रक्त-वमन न मिटे, तबतक साबू, बार्ली, अराख्ट, थोड़ा दूध ठण्ढा करके देना चाहिये और पाकस्थलीपर शीतल जलकी पट्टी बांधना विधेय है।

अजीर्ण या अग्निमान्द्य। (DYSPEPSIA.)

परिपाक क्रियाके वैलक्षण्यको अजीर्ण या अग्निमान्द्य कहते हैं। इस रोगमें क्षुधामान्द्य, पेट फूलना, कोष्ठबद्ध या उदरामय, खट्टी डकार, सिरमें छातीमें जलना, पेट भारी; मुखमें जल भरना, आहारके बाद पेटमें वेदना, श्वासमें

जकड़ जाना; पाकाशयमें कोंचनेजैसी वेदना; मुखका स्वाद कड़वा या खट्टा और मितली; ग्रीष्मकालीन उदरामयमें।

लाइकोपडियम ३०, २०० ।—भुक्त द्रव्यके परिपाकके समय अतिशय तन्द्रा; पेटमें वायु सञ्चित होनेसे पेट फूलना; कोष्ठबद्ध; बायें पार्श्वकी धमनीका काँपना; दुर्ब्बलता या अध्ययनादिजनित अपाक; पेशियोंकी क्षमता घटने या परिपाक रसके अभावमें अजीर्ण।

कार्ब्बोवेज ६, ३० ।—पेट फूलना, छातीमें ज्वाला; उदरामय; माथेका जकड़ जाना और दुर्ब्बलता। पुराने और बुड्ढोंके अग्निमान्द्यमें।

एण्टिमक्रुड ६ ।—परिपाक शक्तिका ह्रास या अरुचि; पाकस्थलीमें भारबोध; वमनेच्छा और पित्त-युक्त वमन; गुह्यद्वारसे दुर्गन्धमय वायु निकलना; खाई चीजके आस्वादका उद्गार; कभी तरल मल; कभी कोष्ठबद्ध; सूत्राशयमें प्रदाह।

हिपर सलफर ६ या १२ ।—पुराने अग्निमान्द्यमें, जब और कोई द्रव्य परिपाक नहीं होता।

सलफर ३० ।—अम्ल उद्गार उठना; पाकाशयमें भारबोध; आहारके अन्तमें तन्द्रा; मुखके किनारे और होंठपर क्षत और सूजन। प्रातःकाल सलफर ३० और सन्ध्या

आरसेनिक ६, १२ या ३०।—आमाशयमें जख्म होनेसे वमनेच्छा या वमन; साथ-साथ पाकस्थली और पेटमें उत्ताप अनुभव, अजीर्णके कारण खानेको खानेके साथ भोजनोपरान्त वमन; रह-रहकर मितली और उसकी वजह निर्बलता।

एण्टिम क्रुड ६।—पाकस्थलीमें भारबोध; मैले-सफेद लेपवाली जिह्वा, अरुचि या मितली।

आइरिस वार्स ६।—अम्लपित्त या भुक्तान्न वमन; शिरःपीड़ा और उद्गारके लक्षणके साथ अम्लपित्त वमन।

क्रियाजोट ६।—जरायु, यकृत और मूत्रकोषकी पीड़ाके कारण वमन; गर्भावस्थामें वमन; सवेरेकी मितली।

मस्तककी चोटके वमनमें आरनिका ६, गाड़ी, पालकी, नाव और जहाजमें यात्रा करनेसे वमनमें ककिउलस ६ और और पेट्रोलियम ६। रक्त-वमनमें इपिकाक १x, मिलिफोलियम १x, हेमामेलिस १ या क्रियोजोट ६। पित्त-वमनमें आइरिस वार्स ६, पडोफाइलम ६, इपिकाक ३, आयोनिया ६ और मार्कसल ६।

पथ्यापथ्य।—पुराने चावलका भात; आरा; साबू, बारली या अरारूट; मूँग, यव, नारियल, पक्का कैथ और किशमिश पथ्य है।

साधारण नियम ।—किसी विषाक्त पदार्थके पेटमें जानेपर शीघ्र ही ऐसा यत्न करना चाहिये; जिससे वह निकल जावे। पाकस्थली या और किसी यन्त्रकी उत्तेजनाके कारण वमन होनेपर गर्म जल पीनेसे ही यथेष्ट उपकार होता है। छोटे-छोटे बरफके टुकड़ोंके चूसनेसे भी उपकार होता है। कभी-कभी पाकस्थलीको विश्राम देने या सामान्य आहार करनेसे वमन रुक जाता है। अग्निमान्द्यके वमनमें कच्चे नारियलका पानी लाभप्रद है।

पाकाशयकी वेदना । (Pains in the stomach.)

भोजनोपरान्त पाकस्थलीमें नाखुनसे चीरनेजैसी वेदना; खाद्यद्रव्यके पेटमें पहुँचते ही वेदनाकी वृद्धि; अम्ल या तिक्तास्वादविशिष्ट डकार; वमनमें खाई चीजके निकल जानेपर वेदनाका ह्रास प्रभृति लक्षण इस रोगमें दिखाई देते हैं।

चिकित्सा । नक्सवामिका ६. ३० ।—आहारके अन्तमें पाकस्थलीमें वेदना और डकारोंके साथ [illegible], सामान्य भोजन करते ही वेदना [illegible] पीठके ऊपर और कंधेमें वेदना [illegible] वमन या वमनेच्छा, फिर [illegible]

आरसेनिक ६. ३० । [illegible]

पाकस्थलीमें कोंचनेजैसी वेदना, रातको पीड़ाकी वृद्धि; अतिशय अस्थिरता और दुर्ब्बलता।

केमोमिला ६ या १२।—रातको पाकस्थलीमें दबाव और वेदना, तिक्त या अम्लास्वादके साथ भुक्त द्रव्य वमन।

कलोसिन्थ ६।—पाकस्थलीका खाली जान पड़ना और वेदना, रातको पाकस्थलीमें मरोड़ें; पीले रङ्गका तिक्त वमन; पेट फूलना। एसिड हाइड्रो ६, कलिसनम ६, कार्ब्बवेज ३० भी समय-समयपर प्रयोग किये जा सकते हैं।

अन्त्रप्रदाह। (Enteritis.)

पेटके नाना स्थानमें आंतें भरी हैं। छोटी-छोटी आंतोंके प्रदाहित होनेको अन्त्रप्रदाह या 'एण्टाराइटिस' और बड़ी-बड़ी आंतोंके प्रदाहित होनेपर आमरक्त या 'डिसेण्ट्री' कहते हैं। यह रोग सदा शिशुओं होमें दिखाई देता है। पहले कम्पके साथ ज्वर आना पेटमें विशेषत नाभिकी चारों ओर दबानेसे वेदना वृद्धि होना क्रमशः वेदना इतनी अधिक हो जाता है कि रोगी हिल नहीं सकता। रोगी चित सो मारे वेदनाके अपने घुटनोंको अपनी छातीसे लगा लेनेपर बाध्य होता है। अरुचि कोष्ठबद्ध मिचली पेट फूलना; कभी कभी पतला मल प्रभृति लक्षण दिखाई देते हैं।

चिकित्सा।—ज्वर और प्रदाह मिटानेके लिये एको-

अविरल मल-प्रवृत्तिके साथ कोठबद्धमें नक्सवमिका और मल-प्रवृत्तिविहीन कोठबद्धमें ब्रायोनिया उपयोगी होता है। सिर लकड़ना; सिर घूमना; कठिन मल; सदा तन्द्राबोध; मुखमण्डल लाल; मूत्रका परिमाण अल्पादि लक्षणमें ओपियम ३०। वृद्ध, शान्तप्रकृति और रक्तप्रधान धातुवाले मनुष्योंके लिये ओपियम उपकारी है। कोठबद्ध या बड़े कष्टसे शुष्क कठिन मल निकलना; पेट फूलना; आहारके बाद ही तलपेटका फूलना, पेटका गर्म्म हो जाना; मुखमें जल आना आदि लक्षणमें लाइकोपोडियम ३० व्यवस्थेय है। पेड़ू और गुह्यद्वारमें भार और गर्म्मी जान पड़ना; गुह्यद्वारमें कुट-कुट ज्वाला, मलत्यागके पहले और पीछे मलद्वारमें अस्वच्छन्दता अनुभव, बारंबार अल्प मलप्रवृत्ति और अर्शपीड़ा रहनेसे सल्फर ३०। पुनः पुनः रेचक औषधि सेवन वशतः कोठबद्ध होनेसे हाइड्रेस्टिस ०।

साधारण लक्षण। कब्ज़में जुलाब लेना अच्छा नहीं। कारण, उससे इस बीमारीका अभ्यास हो जाता है। फिर जुलाब न लेनेसे कोठा साफ नहीं होता। औषधि सेवनसे यदि मल न निकले तो, २ आउन्स गर्म्म जलमें १ ड्राम ग्लिसरिन मिला मलद्वारमें पिचकारी देनेसे गांठ गांठ मल निकल आता है। नित्य सवेरे उठते ही ठण्ढा जल पीना और प्रति दिन ठण्डे जलका स्नान उपकारी होता

एपेनडिक्स प्रदाह।—शरीरके भीतरके निम्नांशके दाहने अंशका नाम एपेनडिक्स है। खृष्टीय २०वीं शताब्दीके आरम्भसे इसका नया नामकरण हुआ है, किन्तु असलमें यह रोग चिरकालसे है। लोगोंका, विशेषतः गठियाके रोगियोंका खाया द्रव्य हजम न होकर अनेक स्थलमें यह रोग उत्पन्न कर देता है। पेटके दक्षिण भागमें वेदना, कितने ही स्थलमें कई सप्ताहतक रोगी यह वेदना अनुभव कर नहीं सकता। इसके उपरान्त इस वेदनाकी क्रमशः वृद्धि और उसके साथ साथ ज्वर तथा पाकाशय-यन्त्रके क्रिया-व्याघातसे यन्त्रणा, इस रोगका प्रथम लक्षण है। इस अवस्थामें प्रदाह निवारित न होनेसे शरीरके अन्यान्य यन्त्रोंके आक्रान्त होनेपर रोगीकी मृत्युतक हो जा सकती है। इस रोगका नाम सुनते ही लोग हताश हो अस्त्र-चिकित्साका आयोजन करते हैं। किन्तु प्रथमावस्थामें होमियोपैथिक मतसे सुचिकित्सा होनेपर अस्त्र-प्रयोगका कोई प्रयोजन बाकी नहीं रहता।

लक्षण।—प्रबल शिरःपीड़ा, आंखोंसे प्रकाश बिलकुल ही बरदाश्त न होना, वमन, जिह्वा कभी कभी या बराबर मलिन कभी कोष्ठबद्ध होना, कभी न होना, वायु निकलना; पेट फिर्वाह रहना निम्न पेटके अधोभागमें तीव्र वेदना। शरीरका ताप १०० से १०३ डिग्री तक पहुंच जाना। यकृत् और प्लीहा का कभी कभी कुछ बढ़ जाना।

चिकित्सा। लेकेसिस ३०।—इसको एक उत्कृष्ट औषधि है ; विशेषत: उदरके दाहने कर्त्तनवत् वेदना ; कमरमें वस्त्र रख न सकना; सामान्य ज्वरके साथ वमन आदि लक्षणमें। किन्तु वेदना कोंचनेजैसी या ज्वालाकर होनेपर; विशेषत: टीका देनेके बाद या स्त्रियोंके एपेन्डिक्समें ; लाकेसिसकी अपेक्षा एपिस ३० उपयोगी है। किन्तु लाकेसिस या एपिसके प्रयोगसे कोई लाभ न होनेपर आरसि ३० देना चाहिये। मृत्युभय ; उत्कण्ठा ; जिह्वा लाल ; अनवरत जलपानकी इच्छा ; किन्तु अल्प जल पीते ही निवृत्ति , बिस्तरमें छटपटाना ; नितान्त अवसन्नता प्रभृति लक्षणमें आरसेनिक ३०। शय्यापर हिलनेमें वेदनाकी वृद्धि होनेपर ब्रायोनिया ३०। किन्तु शय्यापर हिलनेसे वेदना घटनेपर रसटक्स ३० देना चाहिये।

आनुसंगिक चिकित्सा।—बोतलमें खूब गर्म जल भर सेंकना चाहिये। पीड़ाकी तरुणावस्थामें बार्लीका जलपाक देना चाहिये। इसके बाद मोरबा और अन्तमें दूधमें अन मिला पीनेको दिया जा सकता है। इस रोगको एलोपेथिक डाक्टर जितना भयङ्कर समझते हैं ; होमियोपेथिक डाक्टर उतना विभीषिकामय नहीं समझते।

उदरामय। (*Diarrhœa.*)

बिना कारण बारंबार जो तरल दस्त होता है, उसीको उदरामय कहते हैं साधारणत: चार प्रकारका उदराम—

दिखाई देता है :—(१) गुरुपाक द्रव्य भोजन, अपरिष्कृत जल पान, उत्तेजक औषधादि सेवनसे उपदाहजनित उदरामय; (२) परिपाक कार्य्यमें व्याघात होनेसे अजीर्ण द्रव्य निकालनेवाला उदरामय, (३) गर्म्म शरीरमें शीतल जल या बरफ पीने या ठण्डी हवा द्वारा एकाएक पसीना रोकनेसे प्रदाहजनित उदरामय और (४) ग्रीष्मकालीन उदरामय। उदरामय और सामान्य हैजेका प्रभेद हैजा शीर्षक प्रबन्धमें लिखा गया है। उदरामयमें पेटमें मरोड़े नहीं होतीं, किन्तु आमाशयमें यह दोनो लक्षण मौजूद रहते हैं।

चिकित्सा। केम्फर।—शीत; कम्प, पाकस्थलीमें वेदना, हाथ पैर और मुख शीतल, ग्रीष्मकालीन और सर्दीके उदरामयमें।

पलसेटिला ६, १२।—परिवर्त्तनशील मल; मुखका तिक्तास्वाद; मिचली या वमन, डकार, गुरुपाक भोजनजनित उदरामयमें।

एण्टिम क्रुड ६।—सफेद लेदयुक्त जिह्वा; डकार; वमनेच्छा; अरुचि, जलवत् तरल मल; पित्तमिश्रित मल।

इपिकाक ६।—मिचली या वमन; दुर्गन्धमय मल; रक्तमय मलस्राव; पेटकी वेदनाके साथ ग्रीष्मकालीन उदरामयमें, बर्य्योंकि पीले पीले-हरे मलविशिष्ट उदरामयमें।

नक्सवमिका ६; ३० ।—अति भोजन; रात्रिजागरण और मद्यपानादि अत्याचारजनित उदरामयमें।

चायना ६, १२ या ३० ।—आहारके बाद, रातको तथा सवेरे वेदनाके साथ या वेदनाहीन कुछ लाल रङ्गका अजीर्ण मल निकलना और उसीके साथ दुर्ब्बलता; अरुचि और प्यास।

आरसेनिक ६, ३० ।—मलत्यागसे पहले अस्थिरता; पेट या तलपेटमें वेदना; मलत्यागसे पहले मितली; कांखना; मलत्यागके बाद गुह्यद्वारमें ज्वाला; सर्व्वाङ्गमें कम्प; छाती धड़कना; दुर्गन्धमय मलिन थोड़ा मल; मलत्यागके बाद अवसन्न करनेवाली निर्ब्बलता।

डालकामेरा ६ ।—हिम या शीतके या सर्दीसे उदरामयमें; रातको पित्तभेद; पेट फूलनेके साथ सवेरे दस्त; तरह-तरहके रङ्गका मल; तरल मलके साथ कठिन खण्ड-खण्ड मल; एक साथ दस्त और कै; गुह्यद्वारमें ज्वाला।

आइरिस वार्स ६ ।—हैजेजैसे लक्षणवाले उदरामयमें, अतिशय उदर वेदना, गुह्यद्वारमें ज्वाला; वमन या मितली, बेवखतमें मलत्याग प्रभृति लक्षणवाले ग्रीष्म और शरत्कालीन उदरामयमें, शिशु उदरामय और शिशु-विसूचिकामें।

उदरामयमें कैम्फर, एकोनाइट ३x, आमोनिया ६ और डाल-कैमेरा ६। अतिरिक्त मद्य और फल सेवन जनित उदरामयमें कलोसिन्थ ६ और आर्सेनिक ६। शोथकालीन उदरामयमें चायना ६, वेराट्राम ६, आइरिस ६ और आर्सेनिक ६। मानसिक कारणजनित उदरामयमें इग्नेसिया ६, कैमोमिला और वेराट्राम ६।

नियम।—रोगीको ऐसी कोठरीमें सुलाना चाहिये, जिससे हिम या शीत न लगे। गर्म जलमें कपड़ा भिगा उसे उत्तम रूपसे निचोड़ उससे रोगीकी देह समय-समयपर पोंछ देना चाहिये। पथ्य,—अराख्ट, साबू, बार्ली, मिश्री या मागुर मछलीका शोरबा; इसके बाद खूब पुराने चावलका भात।

रक्तामाशय। (DYSENTERY)

मही आंतोंके पदार्थयुक्त मलको रक्तामाशय कहते हैं। पेटमें वेदना और मलत्यागके समय काँखना इसका प्रधान लक्षण है। रोगके आरम्भमें क्षुधामान्द्य, वमन या वमनेच्छा, मासिका भारी भाव मात्र वेदना अथवा तरल दस्त और सामान्य ज्वरभाव होता है। क्रमशः समूचे पेटमें दर्द, कांखनेके साथ बारबार मलत्यागकी इच्छा। सफेद या रक्त मिश्रित श्लेष्मा या मछलीके धोवनजैसा मलस्राव होता है। रोग उत्कट होनेपर रोगीकी देहमें एक तरहका दुर्गन्ध

निकलने लगता है। साथ ही मुखमण्डल चञ्चल; द्रुत और क्षीण नाड़ी; हिचकी और बेखबरीमें मलत्याग; हाथ-पैर शीतल; प्रलाप प्रभृति लक्षण प्रकट होते हैं। आहारमें अनियम; खूब गर्म्म या ठण्डा लगना; दूषित जलपान प्रभृति कारणसे यह राग उत्पन्न होता है। रोगीकी देह या मल-मूत्रसे जो वाष्प निकलती है; उससे भी यह पीड़ा उत्पन्न होती है।

चिकित्सा। एकोनाइट ३X, ३०।—ज्वर; पेटमें वेदना; रक्तमय आंव; प्यास; अस्थिरता।

मारकिउरियस ३X, ६, ३०।—रक्तामाशयकी पीड़ामें मार्क्कर अति उत्कृष्ट औषधि है। केवल रक्त या रक्तमिश्रित आंव; अतिशय कांखनेके साथ मलत्यागकी इच्छा; मल-त्यागसे पहले और बादको पेटमें तीव्र वेदना; मूत्राशयमें ज्वालाके साथ अति कष्टसे थोड़ासा पेशाब; कभी-कभी पेशाबका न उतरना; रोगी निस्तेज। रक्त जितना अधिक होगा; इस औषधि द्वारा उतना ही शीघ्र फल मिलेगा। रक्तका भाग कम और श्लेष्माका भाग अधिक रहनेसे मार्कसल ६ देना चाहिये। मलत्यागके बाद और भी मलत्यागकी आशासे बैठे रहने और उसीके साथ खूब कांखनेके लक्षणमें मार्क्कर।

नक्सवामिका ३०।—मलत्यागके समय और उसके

द्वारके बाहर रहनेपर बहिर्व्वलि और भीतर रहनेपर अन्त-
र्व्वलि कहलाती है। वलिके फटनेपर उससे रक्त निकलता है।
और एक तरहकी वलि होती है। उससे रक्तस्राव नहीं
होता। यह अन्धी वलि कहलाती है। मलद्वारके निकट
कुट कुट करना, खाजना, कांटा चुभानेजैसी वेदना; कोष्ठबद्ध;
बारंबार मलत्यागकी इच्छा प्रभृति इस रोगके लक्षण हैं।
बारंबार जुलाब लेना, उत्तेजक द्रव्य पान-भोजन; मद्य-
पान, रात जागना, घी और मसालेसे बने द्रव्यका भोजन
करके भी बिना परिश्रमके दिन काटना; शीतल पत्थर या
भीगी घास या खूब गर्म चीजपर बैठना आदि कारणसे यह
रोग उत्पन्न होता है।

चिकित्सा। नक्सवमिका ६, ३० ।—कभी-कभी
उदरामय, मलत्यागके समय वलि बाहर निकलना; कमरमें
वेदना; मूत्रत्यागके समय यन्त्रणा; अधिक समयतक चिन्ता
और आहार करनेसे पीड़ा-वृद्धि; जो लोग किसी तरहका
परिश्रम न करनेपर भी घी और मसालेकी बनी चीजें खाते हैं
या खूब मद्यपान करते हैं। सूर्य्यास्तके समय नक्सवमिका ३०
और सबेरे सलफर ३० व्यवहार करनेसे बहुतेरे अर्श रोग
आराम होते हैं

सलफर ३०। पुराने अर्शरोगमें अत्यन्त कोष्ठकाठिन्य
[illegible] गुह्यद्वारमें ज्वाला और
कुट कुट करना बारबार झूठा मलत्यागकी इच्छा।

क्रिमि । (Worms)

तीन तरहके क्रिमि या कीड़े सदा दिखाई देते हैं। (१) क्षुद्र-क्षुद्र सूतवत्; (२) लम्बे केंचुएजैसा और (३) खूब लम्बे फीतेजैसा। (१) सूतजैसे छोटे-छोटे कीड़े इन बीच मलद्वारके पास रहते हैं। कभी मूत्रनाली और कभी योनि-द्वारमें जाते हैं। ऐसा होनेपर इन स्थानोंमें विलिक होती, ज्वाला होती और धातुक्षरण होता है। क्षुद्र क्रिमिके साधारण लक्षण यह हैं,—नासिकाके अड़भाग और गुह्यद्वारमें खुजली, श्वास-प्रश्वासमें दुर्गन्ध, मलत्यागके समय अत्यन्त कष्ट, गुह्यद्वारमें इतनी खुजली, कि निद्रा भङ्ग हो जाये। इन कीड़ोंकी लम्बाई चौथाई इञ्चसे एक इञ्चतक होती है। (२) केंचुएजैसा लम्बा क्रिमि क्षुद्र अन्त्रमें रहता है। कभी-कभी पाकस्थलीकी राहसे ऊपर चढ़ मुखसे निकल जाता है। कभी-कभी नीचे जा मलके साथ निकल जाता है। इसके साधारण लक्षण यों हैं,—पेट फूलना और पेटमें अत्यन्त वेदना, दांत पीसना, निद्रित अवस्थामें एकाएक चौंक उठना, नासिकाग्र और गुह्यद्वारमें खुजली, पेट सख्त और गर्म, शरीर शीर्ण, मुखमण्डल पीला, चक्षुतारा विस्तृत; आम-मिश्रित मल; कभी क्षुधा और कभी अरुचि; श्वास-प्रश्वासमें दुर्गन्ध मूर्च्छावेश कभी-कभी मितली, मुखसे बराबर जल उठना। इसकी लम्बाई चारसे बारह इञ्चतक

केंचुएजैसे क्रिमिको नष्ट करता है। डाक्टर डिडब और टेष्टका कहना है, कि लाइकोपडियम १० दो दिन, वेराट्रम १२ चार दिन और टयिकाम ६ सात दिन प्रयोग करनेसे क्रिमिका नाश हो सकता है। क्रिमिधातुविशिष्ट बच्चोंके लिये केलकेरिया १० उपयोगी है।

नियम ।—एक बोतल जलमें थोड़ासा नमक मिला प्रतिदिन ३।४ बार सरलान्त्रमें पिचकारी देनेसे उपकार होता है। बलदायक लघु पथ्य देना चाहिये। मिठाई, कच्चे फल, मैला जल, सड़ी मछली, मांस आदि निषिद्ध हैं।

यकृत-प्रदाह । (Hepatitis.)

पुराने मलेरिया ज्वर, पारे या कुइनाइनके अपव्यवहार, अतिरिक्त मद्यपान, गर्म स्थानमें वास प्रभृति कारणसे यकृतमें रक्तसञ्चार होता और यह प्रदाह उपस्थित होता है। इस प्रदाहके पुरानी अवस्था प्राप्त करनेपर यकृत बढ़ता और कठोर होता है और क्रमशः दाहने पेटमें फैल जाता है। थोड़ाको तरुणावस्थामें पहले शीत और कम्पके साथ ज्वर आता; पीछे यकृतके ऊपर वेदना; शिरमें व्यथा; मुख विस्वाद, क्लेदाक्त जिह्वा, क्षुधामान्द्य, कीचड़जैसा मैला सफेद मल, दाहने स्कन्धमें थोड़ी-थाड़ी वेदना; दाहने कांधमें भारबोध प्रभृति लक्षण प्रकट होते हैं। यदि रक्तसञ्चय दूर किया नहीं जाता, तो यह सब लक्षण क्रमशः बढ़कर तीव्र वेग धारण करते हैं।

सफेद कठिन मल या पित्तयुक्त तरल मल, मुखका विस्वाद; श्वासकष्ट।

चेलिडोनियम ३० ।—यकृत्में अतिशय वेदना; दाहने कन्धे या उसकी हड्डीमें वेदना, पीला, तरल या सफेद कठिन मल, सारा शरीर पीला, गाढ़ा पेशाब।

नेट्रम मिऊर ३० ।—यकृत्में सुई चुभने, चिमटीसे पकड़ने या थापनेजैसी वेदना, पेटका बढ़ और फूल आना; समय-समयपर पेटमें गड़गड़ाहट और उसीके साथ ज्वर।

नेट्रम सल्फ ३० ।—स्पर्श करने, हिलने, दीर्घश्वास लेनेसे यकृत्में वेदना, खाली पेटमें नाभिके चारो ओरवेदना, आहार करनेसे इसमें कमी।

पडोफाइलम ।—यकृत्के तरुण(प्रदाहमें कोठबद्ध रहनेपर १ क्रम। पुराने प्रदाहमें – यकृत् बढ़ जाता और उसीके साथ पित्तवमन, पित्तयुक्त तरल मल, मलत्यागके समय काँच बाहर निकलना; मुखका तिक्तास्वाद, मलिन मूत्र, मुखमण्डल मलिन; शिरःपीड़ा, विशेषतः मस्तक कपालमें तीव्र वेदना आदि अवस्थामें पडोफाइलम ३० क्रम।

फासफोरस ६, ३० ।—यकृत्के बृहत् और कठिन होकर क्रमशः घट होने और अन्तमें उदरी हो जानेपर।

बार्ब्बेरिस १X या १ ।—यकृत्में रक्त सञ्चित होनेपर मूत्रनालीमें, जांघमें, कमरमें और नाभिमें वेदना होनेपर।

ब्रायोनिया ३X, ६, ३० ।—यकृत्‌का बढ़ना और सख्त हो जाना; सुई चुभानेजैसी ज्वालाकर वेदना; कांपनेसे इस वेदनाकी वृद्धि; कोठबद्ध या मलत्यागकी इच्छा न रहे; सिर घूमना; दाहने स्कन्धमें वेदना; चक्षु और गात्रचर्म्मका कुछ पीला हो जाना। यकृत्‌के तरुण प्रदाहमें मार्किउरियस-के साथ इसे पर्य्यायक्रमसे प्रयोग करनेपर इससे आशातीत फल होता है।

लाइकोपडियम १२ या ३० ।—वायुसे पेट फूलना और कोठबद्ध; सदा ही चापनेजैसी वेदना; चापकर पकड़ने-पर भी दीर्घश्वास लेनेमें वेदनाकी वृद्धि; दक्षिण पार्श्व और उदरमें वेदना।

लेप्टाण्ड्रा ३X, ६ ।—जिह्वा पीली; पित्त-वमन; अलकतरेजैसा काला मल, यकृत्‌की चारों ओर असह्य वेदना; कीचड़जैसा मल, आमाशय, ज्वर, उदरी या शोथ।

आर्सेनिक ३० ।—यकृत् बढ़ जाना, शोथ, अल्पमूत्र: जीवनी शक्तिका ह्रास प्रभृति।

सिपिया ३० ।—जरायु और मूत्राशयके क्रियाविकारके

साथ यक्कत्‌के पुराने प्रदाहमें, दुर्ब्बलता; अग्निमान्द्य; सन्नि-वात, शोथ।

हिपर सलफर ३X विचूर्ण।—श्वास लेने, खांसने और हिलने-डोलनेसे वेदना-वृद्धि, यह वेदना नाभितक फैले, मर्म्मपीड़ाके साथ यक्कत्‌के रक्तसञ्चयजनित पुराने प्रदाहमें।

नियम।—यक्कत्‌के ऊपर बकईके चोनाको गर्म करके सेंक। ज्वर रहनेसे साबू, बारली, अरारूट इत्यादि लघुपथ्य। मछली, मांस, घृत या घृतपक्क चीजका भोजन निषिद्ध है।

वर्द्धित प्लीहा। (*Enlarged Spleen.*)

मलेरियाका विष शरीरमें घुसनेसे प्लीहा बढ़ता है। ज्वरके समय शीतावस्थामें प्लीहामें रक्त सञ्चित होता और उसका आकार बढ़ता है। सिवा इसके हृद्‌रोग, रजोलोप और मर्म्म-पीड़ामें रक्तस्राव-रोध होनेसे भी प्लीहा बढ़ता है। प्लीहा बढ़नेसे सारा शरीर रक्तशून्य और पाण्डुवर्ण, अग्निमान्द्य; कोष्ठबद्ध या उदरामय; दुर्ब्बलता प्रभृति लक्षण प्रकट होते हैं। क्रमसे प्लीहा बढ़कर उदरके बायें पहुंच जाता और ऐसा जान पड़ता है मानो एक टुकड़ा पत्थर रख दिया गया हो। पीहा कठिन होनेपर उदरामय या रक्तामाशय होता है, क्षुधा नहीं रहती; मसूड़े फूल आते हैं और उनसे रक्त गिरने लगता है।

अन्तमें उदरी और शोथ होनेपर रोगीकी मृत्यु हो जाती है। प्लोहा फटनेसे भी रोगीकी मृत्यु हो जाती है।

चिकित्सा ।—मलेरिया ज्वरके साथ प्लोहाके तरुण प्रदाहमें पहले ज्वर रोगकी चिकित्सा करना कर्त्तव्य है। तरुण प्लीहा-दाहमें एकोनाइट ३x। प्लीहाके ऊपर सुई चुभानेजैसी वेदना ; चापनेसे इस वेदनाकी वृद्धि ; समय-समयपर विलक और रह्वमनके लक्षणमें आरनिका ६। बायें पेटमें चापने या सुई चुभानेजैसी तीव्र वेदना ; प्लीहा बढ़ना और कठिन हो जाना ; बायें करवट सो न सकना ; दुर्बलता ; मुखमण्डल मलिन ; प्रायः सदा ही शरीर गर्म रहनेके लक्षणमें आरसेनिक ३०। अधिक दिन विषमज्वर भोगनेपर प्लीहाके क्रमशः बढ़ जाने और उसीके साथ रोगीके अतिशय दुर्बल होनेमें चायना ६ या ३०। समय-समयपर प्लीहामें चिलिकजैसी वेदना होनेपर कार्बोवेज ३ और नेट्राम-म्यूर ३०। सिवा इनके नक्सवमिका ३०, पडोफाइलम ६, साक्सिरियन विन आयोडिटाम ३x सियूर्स, फासफोरस ६, एसिड नाइट्रिक ६, लाईसिस ६, सियानोथास १x, बेलाडोना ३x प्रयोग किया जाता है।

पाण्डु या नेबा। (*Jaundice.*)

यकृत्की क्रिया बिगड़नेपर पित्त आयोजित नहीं होता ; रक्त हीमें रह जाता है ; इसीलिये पाण्डुरोग उत्पन्न होता है। इस रोगमें रोगीका गात्रचर्म, आँखोंका श्वेतांश, नाखूनोंका

मूलभाग और पेशाब पीला हो जाता है। और तो क्या; रोगीको सब चीज़ें पीली ही पीली दिखाई देती हैं और शय्याके जिस स्थानमें रोगीका पसीना लगता है, वह स्थान भी पीला हो जाता है। कोष्ठबद्ध या उदरामय, मुखका तिक्तास्वाद, कीचड़जैसा या सफेद मल, नाड़ी द्रुत और दुर्ब्बल प्रभृति लक्षण इस रोगमें दिखाई देते हैं। इस रोगके उत्कट होनेपर प्रायः ही रोगीकी मृत्यु हो जाती है।

चिकित्सा।—मलिन पीला मुखमण्डल; यकृतमें सुई चुभानेजैसी वेदना, मुखका तिक्तास्वाद, अरुचि, अतिशय दुर्ब्बलता और पित्तयुक्त तरल मलके लक्षणमें चायना ६। कोष्ठबद्ध; पीला मूत्र, बिस्तरपर पीले दागोंका आना, नाड़ी क्षीण और कोमल, सर्व्वाङ्गका पीला हो जाना आदि लक्षणमें मार्कसल ६। पहली अवस्थामें ३।४ बार एकोनाइट ३x प्रयोग कर चुकनेपर मार्कसल ६ प्रयोग करना अच्छा है। गात्रत्वक और चक्षुका पीला वर्ण; कुछ धूसरवर्णका पेशाब; स्वरभङ्ग; खांसी और नैराश्यके लक्षणमें फासफोरस ६। लेप्टेण्ड्रा ६, एसिडफस ३० प्रभृति औषधियाँ भी लक्षणानुसार समय-समयपर प्रयोग की जाती हैं।

पथ्यके सम्बन्धमें विशेष दृष्टि रखना चाहिये। ज्वर हो, तो साबू, बारली, अराख्ट; ज्वर न हो, तो पुराने चावलका अन्न और दालका जूस देना चाहिये। मछली, दूध, घी और मिठाई निषिद्ध है।

मूत्रभाग और पेशाब पीला हो जाता है। और तो क्या; रोगीको सब चीजें पीली ही पीली दिखाई देती हैं और शय्याके जिस स्थानमें रोगीका पसीना लगता है; वह स्थान भी पीला हो जाता है। कोष्ठबद्ध या उदरामय; मुखका तिक्तास्वाद; कीचड़जैसा या सफेद मल, नाड़ी द्रुत और दुर्ब्बल प्रभृति लक्षण इस रोगमें दिखाई देते हैं। इस रोगके उत्कट होनेपर प्रायः ही रोगीकी मृत्यु हो जाती है।

चिकित्सा।—मलिन पीला मुखमण्डल; यकृतमें सुई चुभानेजैसी वेदना, मुखका तिक्तास्वाद, अरुचि; अतिशय दुर्ब्बलता और पित्तयुक्त तरल मलके लक्षणमें चायना ६। कोष्ठबद्ध, पीला मूत्र, बिस्तरपर पीले दागोंका आना, नाड़ी क्षीण और कोमल, सर्व्वाङ्गका पीला हो जाना आदि लक्षणमें मार्कसल ६। पहली अवस्थामें ३।४ बार एकोनाइट ३x प्रयोग कर चुकनेपर मार्कसल ६ प्रयोग करना अच्छा है। गात्रत्वक और चक्षुका पीला वर्ण, कुछ धूसरवर्णका पेशाब; स्वरभङ्ग, खांसी और नैराश्यके लक्षणमें फासफोरस ६। सिप्टेण्ड्रा ६, एसिडफस ३० प्रभृति औषधियाँ भी लक्षणानुसार समय-समयपर प्रयोग की जाती हैं।

पथ्यके सम्बन्धमें विशेष दृष्टि रखना चाहिये। ज्वर हो तो साबू, बार्ली, अरारूट, ज्वर न हो तो पुराने चावलका अन्न और दालका जूस देना चाहिये। मछली, दूध, घी और मिठाई निषिद्ध है।

कभी लाल, कभी धूमल, कभी-कभी रक्त या पीब मिश्रित मूत्र होता है। मूत्रत्यागके समय अतिशय ज्वाला और वेदना होती है। मेरुदण्ड और कमरमें दर्द होता और अण्डकोष लाल हो जाते हैं। समय-समयपर पेशाब बिलकुल बन्द हो जाता और मनुष्य एकाएक या मूर्च्छित हो मर जाता है। एकाएक हिम या शीत लगने; मद्यपानका अत्याचार; रात्रिजागरण, पेशाबको औषधिका अपव्यवहार; आघात लगना प्रभृति कारणसे यह रोग उत्पन्न होता है।

चिकित्सा।—ज्वर और प्रदाहके लक्षणके साथ पीड़ाकी प्रथमो अवस्थामें एकोनाइट १x। बिन्दु-बिन्दु पेशाब कभी-कभी रक्तमिश्रित, अण्डकोष लालवर्ण; तलपेटमें ज्वालाकर वेदना; मूत्रत्यागके समय ज्वाला या मूत्ररोधित्वके लक्षणमें कैन्थारिस ६। मलिन या रक्तमिश्रित मूत्रत्याग; अण्डकोष लाल; शरीरके स्थान-स्थानमें शोथके लक्षणमें टेरिबिन्थिना ६। बारंबार मूत्रत्यागकी इच्छा, मूत्रकोषमें कोंचनेजैसी वेदना; चक्षु और मुखमण्डल लाल, समय-समयपर प्रलापके लक्षणमें बेलेडोना ६। आरसेनिक ३०, कैमाफिसस्फाट ६, नक्स-वमिका ३०, पलसेटिला ६, हिपर सलफर ६, मारक्युरियस सल ६, लाइकोपडियम ३०, सिपिया ६, सलफर ३० समय-समयपर आवश्यक हो सकता है।

पुराने जख्म या शोथकी चिकित्सा।—जख्मसे सहज ही रक्त निकलना ; आगमें जलनेजैसी ज्वाला ; अत्यन्त ज्वाला और जख्मको चारो ओरका मांस कठिन हो जानेके लक्षणमें आरसेनिक ३०। दुर्गन्ध, गाढ़ा पीवस्राव ; क्षतमें खुजली या डङ्कजैसी वेदना ; मांस-वृद्धि-विशिष्ट पुराने जख्ममें ग्रेफाइटिस ६। शरीरके नाना स्थानमें बड़े जख्म और उनके आस-पास छोटी-छोटी फुन्सियां और क्षतसे दुर्गन्ध पीव निकलनेके लक्षणमें लाकेसिस ६। खुजली ; चबानेजैसी टपटप कतरनेजैसी वेदना ; क्षतपर हाथ फेरते ही सहज ही रक्तस्राव और इस रक्तसे खट्टा दुर्गन्ध अनुभवके लक्षणमें एसिड सलफिउरिक ६। यह औषधि ऐसे सड़नेवाले जख्ममें भी उपकारी है, जो हड्डीतक पहुंच गया हो। पारेके अपव्यवहारके पुराने गहरे जख्ममें लाइकोपडियम १२, एसिड नाइट्रिक ६। गहरा जख्म ; उसका प्रान्तभाग ऊंचा ; छिद्रवत् लाल रङ्ग ; सहज ही छूनेसे वेदना-वृद्धि ; प्राय: ही जख्मसे रक्त निकलना आदि लक्षणमें मार्कसल ६। दस विन्दु कैलेण्डुला [illegible] टिंक्चर जलमें मिला उसमें वस्त्र भिगा आक्रान्त स्थानपर [illegible] बांधनेसे फल होता है।

फोड़ा। (Boils.)

रक्त दूषित या देह खराब होनेसे छोटे या बड़े फोड़े [illegible] कभी कोई फोड़ा पकनेकी जगह बैठ जाता है [illegible]

देहका फटना।—शीतकालमें देह फटनेसे पारमे...

मूंछकी दाद।—लाइकोपडियम, मार्कसायड, ग्रेफ... टिस, एण्टिमक्रुड, सलफर।

सेंहुएकी दवा।—ईलीकार्ब, एसिड नाइट्रिक, नेट्राम... मिपोर, केन्थारिस, ग्रैफाइटिस, सलफर।

मुंहासा।—एण्टिमक्रुड, एण्टिमटार्ट, कार्बोएनिमेलिस, आरसेनिक, बलस, केलिब्राइकम, पेट्रोल, एसिडफस, सलफर।

दाद।—हिपर सलफर फासफोरस, एसिड नाइट्रिक, रसटक्स, सिपिया, ग्रैफाइटिस सलफर। उपरोक्त औषधियोंका प्रयोग ६ से ३० क्रमतक करना चाहिये।

१३। स्त्रीरोग।

स्त्रीरोगकी चिकित्सामें प्रवृत्त होनेसे पहले पाठक महाशयोंको स्त्रियोंकी जननेन्द्रियसे सम्बन्धकी निम्नलिखित स्थूल बातोंको स्मरण रखना चाहिये।

१। स्त्रियोंके तलपेट या पेड़ूमें मूत्राधार और मल-[illegible] [illegible] है। यह एक खाली [illegible] है [illegible] [illegible] जैसी है [illegible] रहता है [illegible] घटना बढ़ना है इसलिये गर्भावस्थामें

[illegible]

इसके भीतर शिशु बढ़ता जाता है ; इसीके साथ-साथ यह भी बढ़ता जाता है। फिर ; शिशुके भूमिष्ठ होते ही यह सङ्कुचित हो पूर्व्वाकार धारण कर लेता है। इसके ऊपरी भागको जरायुका छोर या fundus कहते हैं। इसका निम्न भाग अपेक्षाकृत तङ्ग होता ; इसलिये जरायुकी गर्दन या cervix कहलाता है। जरायुकी गर्दनमें एक छिद्र है, जो जरायुका मुख या os कहलाता है। प्रायः तीन इञ्च लम्बी एक टेढ़ी सुरङ्ग है, जिसका छोर जरायुकी गर्दनको चारों ओर जुड़ा हुआ है। इस सुरङ्गको योनिपथ या vagina कहते हैं।

२। जरायुकी दोनों ओर बादामके आकारके दो यन्त्र हैं। इन्हें डिम्बकोष* या ovaries कहते हैं। प्रत्येक डिम्बकोषमें सरसोंजैसे छोटे-छोटे दश-बीस डिम्ब या ovum रहते हैं।

३। जरायुके छोरमें दोनों ओर तीन-तीन इञ्च लम्बे बाहुजैसे दो नल हैं। यह दोनों विस्तारित होकर जरायुको डिम्बकोषसे जोड़ते हैं। इन दोनोंको स्त्री-वीर्य्यवाही नल या Fallopian Tubes कहते हैं।

ऋतु।—स्त्रियोंका यौवनकाल उपस्थित होनेपर उनकी समस्त जननेन्द्रिय जब परिपुष्ट हो जाती है, तब डिम्बकोषसे डिम्ब निकलता है। उस समय डिम्बकोष, स्त्री-वीर्य्यवाही नल और जरायुकी देहमें रक्ताधिक्य होता है। इसीसे रजः

---

* इसीका दूसरा नाम 'डिम्बाशय' या 'डिम्बाधार' है।

निकलता और इसीको 'ऋतु' या 'स्त्री-धर्म' कहते हैं। स्त्री-धर्म प्रायः प्रति अट्ठाईसवें दिन हुआ करता है।

गर्भसञ्चार।—स्त्री वीर्य्य या डिम्ब जिसतरह डिम्ब कोषमें रहता है, पुरुष-वीर्य्य या रेत: semen उसीतरह मुष्क या Testes में रहता है। पुरुष-वीर्य्यमें खूब पतले और नन्हे एक तरहके कीट होते हैं। इन सबको शुक्रकीट या sperma tozoa कहते हैं। स्त्रियोंका परिपक्व डिम्ब और पुरुषोंका सतेज शुक्रकीट यही दोनो गर्भसञ्चारके उपादान हैं। साधारणतः ऋतुके चौथे या पांचवें दिन गर्भ-सञ्चार होता है किन्तु कभी-कभी ऋतुके दो एक दिन पहले या कभी-कभी ऋतुके दश-पन्द्रह दिन बाद भी गर्भ-सञ्चार होता है।

स्त्री-पुरुषके सहमको अन्तिम अवस्थामें पुरुषके मुष्क पुरुषाङ्ग द्वारा जो वीर्य्य निकलता है, उस वीर्य्यका शुक्रकी स्त्रियोंके योनिपथसे जरायुके भीतर जा क्रमशः स्त्री-वीर्य्यवाह नलके भीतर पहुँच डिम्बकोषके परिपक्व डिम्बमें मिल जात है। ऐसा होनेसे स्त्री गर्भिणी होती है। इस महीयसी शक्तिसे नवजीवनकी उत्पत्ति कैसे होती है? इस शुक्रकी और डिम्बके मिलनेपर प्रकृतिके अन्तरालमें छिपी हु कौनसी महीयसी शक्ति अपना अद्भुत प्रभाव दिखा अर्द्ध और नेपोलियन; वेदव्यास और प्लेटो; भास्वभट्ट और निउटनके रचना किया करती है? मानव बुद्धि क्या कभी इस दुर्भे अन्धकारको अतिक्रम कर सकती है या विज्ञान क्या किस

कालमें भी इस यवनिकाके उठानेकी स्पर्धा कर सकता है? महाशक्ति अपनी लीला आप ही समझ सकती है। हम इस अचिन्त्य गूढ़ महाशक्तिको दूरसे कोटि-कोटि प्रणामकर इस समय अपने प्रकृत विषयका अनुसरण करते यानी आसामयके रोग और उनके निवारणकी आलोचनामें प्रवृत्त होते हैं।

स्त्री रोग निम्नलिखित नौ श्रेणियोंमें विभक्त किये जाते हैं और उनमें प्रत्येककी चिकित्सा यथाक्रम आगे लिखी जाती है।

(१) आर्तव व्याधि।
(२) जरायुकी व्याधि।
(३) डिम्बकोषकी व्याधि।
(४) योनिकी व्याधि।
(५) कामोन्माद।
(६) बन्ध्यात्व।
(७) स्तनकी पीड़ा।
(८) मिवटस्थकी पीड़ा।
(९) त्रिक-अस्थि सन्धिकी वेदना।

(१) आर्तव-व्याधि।

(Disorders of Menstruation.)

ऋतु सम्बन्धीय रोगोंमें निम्नलिखित प्रधान रोगोंका विवरण इस क्रम लिखा जाता है।

(क) प्रथम रजःस्रावमें विलम्ब, (ख) रजोरोध, (ग) अनियमित ऋतु, (घ) अनुकल्प रजः, (ङ) स्वल्प रजः, (च) अति रजः, (छ) बाधक वेदना, (ज) श्वेत प्रदर, (झ) रजोनिवृत्ति और (ञ) हरितरोग।

(क) प्रथम रजःस्रावमें विलम्ब।

(*Delayed Menstruation*)

हमारे देशकी स्त्रियोंमें रजःस्राव साधारणतः १२।१३ वर्षकी उम्रसे आरम्भ होता और ४०।५० वर्षकी उम्रतक प्रति मास नियमित रूपसे होता रहता है। किसी-किसी बालिकाका यौवनकाल उपस्थित होनेपर भी रजःस्रावमें विलम्ब होता है। या पहले एकबार स्राव होकर बन्द हो जाता है। धातविक दुर्बलता या दीर्घकालके पीड़ा-भोग या शारीरिक दुर्बलता तथा रक्तस्वल्पताकी वजह या योनिमुखकी ढँकनेवाली झिल्लीके छिद न होनेकी वजह प्रथम रजोदर्शनमें विलम्ब होता है। लक्षण :—सिर भारी और दर्द, नाकसे रक्त गिरना, छाती धड़कना, श्वास प्रश्वासमें कष्ट बोध, कमर और जांघमें भार, पेटमें दर्द।

चिकित्सा। पल्सेटिला ३x, ३०।—पेट और पीठमें दर्द [illegible] [illegible], [illegible] या शीतानुभव [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible]

भारी और वेदना ; पीठ और कमरमें वेदना ; अरुचि ; पैरोंके तलवोंमें ठण्डक और शीतबोध प्रभृति लक्षण इस रोगमें दिखाई देते हैं। अतिरिक्त परिमाणमें रक्तस्राव होनेपर मुख-मण्डल पीला ; आंखोंका कोटरमें घुस जाना ; हाथ-पैर शीतल ; कानोंका शून्य हो जाना ; दृष्टि और नाड़ी क्षीण और मूर्च्छा प्रभृति लक्षण प्रकट होते हैं।

चिकित्सा ।—शारीरिक दुर्बलता और गर्भाशयकी क्रिया बिगड़नेसे अधिक कालस्थायी प्रचुर रजःस्रावमें आरसेनिक है। रजोनिवृत्तिके समय, गर्भावस्था और प्रसवकालमें पीठ और पेड़ूमें वेदना रहनेपर अलमेटिना है। मूत्रयन्त्रके प्रदाह ; क्षीण दृष्टि ; डिम्बाशयमें वेदना ; लाल रङ्गके रक्तस्रावमें स्याबिना है। स्थूलाङ्गी स्त्रियोंके लिये स्याबिना विशेष उप-योगी है। सदा ही प्रचुर परिमाणमें वेदनाशून्य पतला रजःस्राव ; कभी काले रङ्गका, कभी थोड़ा थोड़ा, कभी दुर्गन्ध-मय रक्तस्राव ; कुछ भी हिलने-डोलनेसे स्रावकी वृद्धि ; सर्व्वाङ्ग शीतल, किन्तु भीतर उत्ताप, जरायु-मुखमें चींटी रेंगने-जैसी सुरसुराहट ; पेटमें वेदना और योनिकी ओर दबावके साथ काला-काला असीला अलकतरेजैसा स्राव होनेपर सीकाल स्याटाइना २। विरामके समय कायला और रोगमें सीकाल प्रयोग करनेसे विशेष फल मिलता है। गाढ़ा अलक-तरेजैसा प्रचुर परिमाणमें स्राव, पृष्ठ और योनिमें वेदना ; ऐसा जान पड़े मानों पेटकी आंतें योनिकी राहसे निकल

ट्रिलियाम ६।—लसीला और लाल रक्त धमनीसे निकलनेपर; आमुद्देशमें विशेष वेदना रहनेपर, विशेषतः रक्तस्राव-प्रवण रोगियोंके लिये।

विरामकालकी चिकित्सा।—अत्यन्त रजःस्राव होनेसे रोगियोंके नितान्त दुर्व्वल हो जानेपर चायना, फेरम, चायना और आरसेनिक। रक्तसञ्चालनके वैलक्षण्य और ज्वर रहनेपर एकोनाइट। वातमें सिमिसिफिउगा। उदरामय, स्वरभङ्ग और खांसी या यक्ष्माका पूर्व्वलक्षण प्रकट होनेपर केलकेरिया कार्ब्ब। मानसिक उत्तेजना और मैथुन प्रवृत्तिके आधिक्यमें फासफोरस। सिवा कभी-कभी प्रचुरपरिमित रक्त निकलने और दुर्व्वलता अनुभव करनेके रोगियोंके और कोई अतिरिक्त वैलक्षण्य अनुभव न करनेपर ट्रिलियाम। इन सब [illegible]योंको इनकी उच्च शक्तिमें प्रयोग करना चाहिये।

[illegible] नियम।—अतिरिक्त शारीरिक और मानसिक [illegible] है। [illegible] कोई दुर्व्वलकर पीड़ा या धातुगत [illegible] हो, तो उसे गर्म्म जलके [illegible] रखनेसे और इसके [illegible] उपकार होता है। [illegible] उसमें वस्त्र भिगा [illegible] सकता है।

प्रयोग करनेपर प्रायः सभी बाधक वेदनामें उपकार होता है।

बेलेडोना ६, ३० ।—जरायु और डिम्बाशयमें रक्तसञ्चय-जनित बाधक वेदनामें ; वस्तिगह्वरमें अतिशय वेदना ; वेदनाके समय ऐसा ज्ञान पड़े मानो पेटकी आंतें योनिसे ढकेली जानेपर योनिद्वारसे निकला चाहती हों ; रजःस्रावके एक दिन पहलेसे वेदनाका उद्रेक ; ऋतुके समय मलत्यागमें अतिशय कष्ट ; पेटमें मानो कतरनी चलती हो ; आंखें और मुख लाल ; कनपटीमें धमक प्रभृति लक्षण-युक्त रक्त-प्रधाना स्त्रियोंके लिये यह उत्कृष्ट औषधि है।

जेलसिमियम ३x ।—जरायुमें रक्त-सञ्चित होनेसे आक्षेपिक बाधक वेदना ; योनिद्वार और जांघमें मरोड़जैसी वेदना ; पहले पेटमें वेदना आरम्भ होकर क्रमशः कमर और पीठके ऊपर और गर्दनमें आक्षेपिक वेदना ; समय-समयपर वेदना घटनेपर रोगिणीका तन्द्राविष्ट और आलस्य। इस दवाके साथ कलोफाइलम १x पर्य्यायक्रमसे प्रयोग करनेपर यथेष्ट फल होता है। ज्वर रहनेपर यह और भी उपयोगी है।

केमोमिला १२ ।—मैला या काला जमीला रक्तस्राव ; प्रसववेदनाजैसी वेदना, बारंबार पेशाबकी इच्छा। पेटमें वेदना ; कमरसे सामनेकी ओर धक्का देनेकी वेदना इत्यादि

वाइवानामि अपिउलास ३X ।—ऋतुकालमें वेदना एकाएक आरम्भ हो और ८।१० घण्टे स्थिर रहे; जरायुमें तीव्र वेदना; पीछे सारे पेटमें वेदनाकी विस्तृति। आक्षेप-युक्त बाधक।

निम्नलिखित औषधियाँ यह्व ग्रन्थिमें समय-समयपर आवश्यक होती हैं,—क्रोकास, मस्कास, कनिम्ब्रोनिया, सिनिसिव, लिलियाम, सिपिया, स्याबिना, सेन्यगजिम्बाम, कलोफाइलाम, प्लेटिना, बोराक्स, ग्राफोनिया और क्रिउमाम।

नियम ।—अल्प रज:स्रावकी वजह पेटमें अत्यन्त वेदना रहनेसे गर्म जल या गर्म गोमूत्रको सेंकसे उपकार हो सकता है। बिजलीके प्रयोगसे भी वेदना शीघ्र दूर हो सकती है।

यदि होमियोपैथिक औषधिकी सुविधा न हो और रोगिणी यन्त्रणासे अधीरा हों, तो उलटे कम्बलकी जड़ चार आनेभर छ: दाने गोलमिर्च और पानके एक डंठेके साथ पीस जल मिला ऋतुकालमें तीन दिन सेवन करना चाहिये। इस तरह यह दवा ऋतुमें दो-तीन दिन व्यवहार करते ही बाधक सम्पूर्ण आराम हो सकता है।

(ज) श्वेतप्रदर। (Leucorrhœa)

जरायुको ढँकनेवाली झिल्ली, जरायुके भीतरी भाग और जरायुके मुखसे सफेद, नीला, पीला, दुग्धवत्, मांसके धोवन-जैसा अलकतरेजैसा काला विविध रङ्गका स्राव होता है।

इसीको श्वेतप्रदर कहते हैं। गण्डमाला-धातुग्रस्ता अल्प-वयस्का बालिकाओंमें भी समय-समयपर यह रोग होता दिखाई देता है। उपयुक्त समयपर चिकित्सा न होनेसे क्रमशः जरायुसे अधिक परिमाणसे पीवजैसा स्राव होता और इसके फलसे योनिके भीतर और मुखमें क्षत उत्पन्न होता है। कोठबद्ध ; सिर पकड़ना ; पेट फूलना ; परिपाक-क्रियामें व्याघात और मुखमण्डलमें रक्तहीनता प्रभृति लक्षण दिखाई देते हैं।

शीत लगना, क्लान्ति, गन्दगीसे रहना, उत्तेजक द्रव्य पान भोजन, स्वास्थ्यभङ्ग, अतिरिक्त सङ्गम, कभी-कभी अतिशय रक्तस्राव, जरायुमें किसी उत्तेजक पदार्थका रहना, कर्कटिका होनेसे योनिमें प्रदाह, बारंबार गर्भपात प्रभृति कारणसे श्वेत-प्रदर होता है। श्लेष्मप्रधान या गण्डमाला-धातुग्रस्ता स्त्रियोंमें यह रोग अधिक होता दिखाई देता है।

चिकित्सा। केल्केरिया कार्ब ६, ३० ।—दुग्धवत् प्रदरमें—जरायुमें ज्वाला, खुजली और वेदना, बालिकाओं और गण्डमाला-धातुग्रस्ता स्त्रियोंके प्रदरमें यह उपकारी होता है।

पल्सेटिला ६ —नये या पुराने श्वेत प्रदरमें यह उपकारी है ; [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हो ; इस स्रावके [illegible] [illegible] वेदना कभी होना, कभी नहीं होना।

एसिड नाइट्रिक ६।—विविध रोग भोगने या गर्मी रोगके बाद श्वेतप्रदर होनेसे यह औषधि उपकारी है। पहले मैला गाढ़ा स्राव हो ; ५।६ दिन बाद यह स्राव पतला जलवत् या मांसके धोवनजैसा दुर्गन्ध हो जाये।

क्रियोजोट ६।—ऋतुके ४।५ दिन बाद पीला कच्चे मत्स्यके गन्धवाला स्राव ; जरायुके बाहर सूजन ; कोंचनेजैसी वेदना और खुजली, जांघमें स्राव लगनेसे जखम और पीठमें वेदना।

बोविष्टा १२।—सफेद अण्डेके रङ्गका पुराना प्रदर और उसीके साथ सिर भारी ज्ञान पड़ना।

सिपिया।—प्रसववेदनाजैसी वेदना ; कोष्ठबद्ध ; कुछ हरे रङ्गका दुर्गन्ध स्राव या दुर्गन्धमय जलवत् स्राव होनेपर। शीर्णाङ्गी और वायुप्रधाना स्त्रियोंके लिये यह विशेष उपकारी है।

सलफर ३०।—पुराने श्वेत प्रदरमें दीर्घकालीन भोग भोगनेपर २।१ मात्रा सलफरसे उपकार होता है।

सफेद या पीला स्राव होनेपर मार्कसल, सिपिया, कैलकेरिया कार्ब्ब, चायना और नेट्रामम्यिउर। जलवत् पतले स्रावमें स्याबिना, फेरम और पल्स। तीव्र और ज्वालाकर स्रावमें एसिड नाइट्रिक, पलसेटिला, क्रियोजोट और आर्सेनिक। दुग्धवत स्रावमें साइलिसिया, कैलकेरिया कार्ब्ब,

पलसेटिला, लाइकोपडियम और फेरम। रक्त-संयुक्त स्रावमें क्रियोजोट, लाइकोपडियम और सायना। इन सब औषधियोंको षठ शक्तिमें प्रयोग करना चाहिये। बीच-बीचमें औषधि-सेवन बन्द भी कर देना चाहिये।

नियम।—नित्य स्नान, जननेन्द्रियको दिनमें ३।४ बार धोना और विशुद्ध वायु सेवन करना चाहिये। नाटक-नावेल पढ़ना, कुसंसर्ग, गुरुपाक द्रव्यका आहार और स्वामी-सहवास निषिद्ध है।

(रू) रजोनिवृत्ति। (Menopause.)

पहले पहले कहा गया है, कि स्त्रियोंका मासिक कोई ३०।३२ वर्ष स्थिर रहता है। किसी नारीको यह यदि उसके बारहवें वर्षसे आरम्भ होता, तो चव्वालीसवें वर्षतक जारी रहता है। साधारणतः चालीस वर्षकी उम्रसे स्त्रीको जननेन्द्रियका रक्त-सञ्चय घटने लगता है और पैंतालीस या पचास वर्षकी उम्रमें स्वस्थकाय स्त्रियोंका मासिक बिलकुल ही सदाके लिये बन्द हो जाता है। उस समय जरायुका आकार छोटा हो जाता, योनिदेश सङ्कुचित हो जाता और दुर्बलताके लक्षण प्रकट होते हैं। इसतरह सहज ही ऋतु बन्द हो जानेसे किसी औषधिके प्रयोगका प्रयोजन नहीं होता।

किन्तु यदि सहजमें ऋतु बन्द न हो और वायुकी उग्रता जैसे, बारबार गर्मी जान पड़ना, सिर पीड़ा, हृत्स्पन्दन,

हिष्टिरिया या वमनेच्छा ; कोठबद्ध, उदरमें वायुसञ्चय ; अधिक मात्रासे पसीना और पेशाब प्रभृति लक्षण प्रकट हों, तो औषधिकी व्यवस्था करना चाहिये। रजोनिवृत्तिसे पहले कितनी ही स्त्रियां खूब सबल और स्वस्थ होती हैं।

चिकित्सा। लेकेसिस ६।—यह इस रोगकी प्रधान औषधि है। रह-रहकर गर्मी जान पड़ना ; माथेमें ज्वाला; निद्राके बाद रोगकी वृद्धि।

सेंगुइनेरिया ३X या एमिल नाइट्रिट ३।—लाक्षणिक लक्षणमें। यदि लाकेसिस व्यर्थ हो।

अधिक पसीना या राल टपकनेपर जेबोरैण्डि २x, सिरःपीड़ाके प्रावल्यमें ग्लोनाइन ३, माथेके चांदमें अधिक ज्वाला जान पड़नेपर सागना ६ या फेरम ६, धाकस्मिक खांसी आने पड़नेपर हाइड्रोसियानिक एसिड ६। रोगिणीके छटपट होनेपर डाक्टर मेडामने एकोनाइट ३ देनेकी आज्ञा दी है।

नियम।—कुछ गर्म जलमें स्नान, सहजमें पचनेवाले द्रव्यका आहार, यथासमय निद्रा और थोड़ा शारीरिक परिश्रम करनेकी विधि है।

(ञ) हरित्पीड़ा। (Chlorosis)

इस रोगमें रक्तके लाल-कणाका भाग घट जाता है, इसी लिये देहका चमड़ा मटिया, मटमैला सफेद, पीला या कुछ

कैल्केरिया ३०, सिपिया १२, प्लाटिना ६, फास्फोरिक एसिड ६, सलफर ३०, प्लम्बाम ६ समय-समयपर आवश्यक हो सकते हैं।

नियम ।—ठण्डे जलमें, विशेषतः समुद्रके जलमें स्नान; विशुद्ध वायु-सेवन; पाउरटकी (bran) रोटी खाना; सूर्यालोकमें इधर-उधर घूमनेकी व्यवस्था है। रोगियोंको निकम्मी या आलस्यमें रहना न चाहिये।

(२) जरायुकी पीड़ायें। (Diseases of the Uterus)

जरायुकी पीड़ाओंमें निम्नलिखित प्रधान पीड़ाओंका विषय यथाक्रम लिखा जाता है,—(क) जरायुकी उग्रता, (ख) जरायुकी मूर्च्छा, (ग) जरायुका प्रदाह, (घ) जरायुमें वायु या जल-सञ्चय, (ङ) जरायुके अर्ब्बुद और (च) जरायुकी स्थानच्युति या नाभि टलना।

(क) जरायुकी उग्रता। (Hysteralgia.)

जरायुमें वेदना जान पड़ती और सारे वस्तिदेशमें धीरे-धीरे वेदना होती है। यह वेदना स्नायविक होता और ऋतुके समय तथा चलनेसे बढ़ जाती है। क्षुधामान्द्य, अस्थिरता, मितली, अनिद्रा, पाकाशयमें हलचल प्रभृति इस पीड़ाके प्रधान लक्षण हैं।

चिकित्सा। सिमिसिफिउगा ३X, ३०।—यह इस रोगकी प्रधान औषधि है।

दूषित होनेसे प्रायः ही तरुण जरायु-प्रदाह हुआ करता है। अत्यन्त शीत-बोध, प्रबल ज्वर और पेडूमें वेदना इसका प्रधान लक्षण है। इन सब लक्षणके प्रकट होते ही वेराट्राम विरिड ३x देना चाहिये। इसके बाद नक्सवमिका ३० का प्रयोजन हो सकता है। बेलेडोना ६, कलोसिन्थ ६, रसटक्स या लेकेसिस ६ समय-समयपर उपयोगी हो सकते हैं। यह रोग बड़ा ही आशङ्काजनक होता है; इसीलिये इसमें उपयुक्त चिकित्सकपर निर्भर करना उचित है। रक्त दूषित न हो, तो भयका कारण नहीं। २।३ मात्रा एकोनाइट ३x देते ही रोग दूर हो सकता है।

पुराना जरायु-प्रदाह।—प्रसवके बाद जरायुके सङ्कुचित न होने, कृत्रिम उपाय द्वारा गर्भ-सञ्चार रोकने या बहुत समयतक हरित्पीड़ा भोगनेसे जरायु क्रमशः वेदनायुक्त, कठिन और बड़ा हो जाता है। इसीको पुराना जरायु-प्रदाह कहते हैं। पेटका भारी जान पड़ना, बाधक वेदना, स्तन और कमरमें वेदना, प्रथम रजःस्रावके बाद दाह, स्वामी सङ्गममें वेदना, मूत्रस्थली और मलद्वारमें वेग, हिष्टिरिया प्रभृति इस रोगके प्रधान लक्षण हैं।

चिकित्सा। स्याबाइना ३X।—अधिक मात्रामें रक्तस्राव होने, रक्तस्राव लाल, नमोना या जलीय।

बेलेडोना ३X।—प्रकृत जरायु प्रदाहमें डाक्टर लियमनने एकमात्र बेलेडोनापर निर्भर करने कहा है। विशेषतः जरायु-

सिपिया १२।—इस रोगकी एक उत्कृष्ट औषधि है।

बेलेडोना ६, फेराम-आयोड १x चूर्ण, सिकेली ६, हेनाम ६ लक्षणानुसार समय समयपर उपयोगी हो सकते हैं।

खूब हिलकर चलना-फिरना मना है। होमियोपैथिक औषधिसे ही यह रोग मिट जाता है। कोई-कोई होमियोपैथिक औषधिके साथ भागी लिखि कौशलसे जरायुको यथास्थान ठीक बैठा देते हैं.—

रोगिणीको पड़ीअवस्थामें अवस्थितकर उसकी जांघें उसकी छातीकी ओर उठा चिकित्सक अपनी उंगली द्वारा उसका दबाव दे करतल द्वारा रक्षा करते हुए जरायुको धीरे-धीरे ऊपर चढ़ा देते हैं। जरायुको स्वस्थानमें पहुँचा कुछ समयतक 'पेसारी' (Pessary)* व्यवहार करनेकी व्यवस्था करते हैं।

(३) डिम्बकोषकी व्याधि। (Diseases of the Ovaries.)

डिम्बकोषके रोगोंमें निम्नलिखित तीन प्रधान रोगोंका विवरण यथाक्रम लिखा जाता है, (क) डिम्बकोष प्रदाह, (ख) डिम्बकोषका शोथ और (ग) डिम्बकोषका आयु-शूल।

(क) डिम्बकोष-प्रदाह। (Ovaritis.)

यह रोग दो तरहका होता है—नया और पुराना।

---

* [illegible]

चोट लगना, प्रबल वमनेच्छा, ऋतुकालमें शीत लगना या सङ्गमहेतु रजोवन्ध[1] होना प्रभृति कारणसे 'डिम्बकोषका तरुण प्रदाह' होता है। व्यभिचारी वेश्याओं या कामुकी नारियों होनेमें यह रोग दिखाई देता है। पुट्ठेके कुछ ऊपर और पेटके खूब भीतर वेदना और जलनाहट; दाबने या हिलनेसे वेदना-वृद्धि; ज्वर; वमन; सङ्गमेच्छा प्रभृति इस रोगके प्रधान लक्षण हैं।

तरुण प्रदाहकी चिकित्सा। एकोनाइट ३x।— शीतकी वजह ऋतु बन्द होनेसे प्रदाह; पेशाब करनेमें कष्ट।

एपिस ६।—दाहने डिम्बकोषका प्रदाह; छेदनेजैसी वेदना, थोड़ा पेशाब; प्यासका अभाव।

लाकेसिस ६।—बायें पार्श्वके डिम्बकोषमें प्रदाह; शोथ, कपड़ेके स्थानका दबाव असह्य।

अन्यान्य औषधियां.—बेलेडोना ३x, जिसमें सुई चुभाने-जैसी वेदना होनेपर, मार्कसार ६, पल्सेटिला ६, कन्थेरिस ६, हैमामेलिस ३, प्लाटिना। लक्षणानुसार समय समयपर प्रयोग कराये जाते हैं

और श्वास-प्रश्वासमें कष्ट ; वमन; स्तनमें दुग्धसञ्चय प्रभृति- गर्भ-लक्षणजैसे कितने ही लक्षण इस रोगमें दिखाई देते हैं।

चिकित्सा ।—एपिस और आयोडियम इस रोगकी प्रधान औषधियां हैं।

एपिस ३ ।—डिम्बकोषमें हूलें ; पेट फूलना ; अल्प मूत्र, प्यासका अभाव प्रभृति लक्षणमें।

आयोडियम ३ ।—दक्षिण डिम्बकोषसे जरायुतक मारनेजैसी वेदना ; ऐसा ज्ञान पड़े मानो योनिपथसे सब बाहर निकल आयेगा; घतकर प्रदाह; डिम्बकोष और स्तनद्वय शुष्क।

अरम-मिओर नेट्रानेटाम ३x, प्लाटिना ३०, कैलिब्रोम १x चूर्ण, आरसेनिक ६, ग्रेफाइटिस ६, लाकेसिस ६, सिकेली ३, लाइकोपडियम ६, ब्रिडाम ६ समय-समयपर आवश्यक हो सकते हैं।

(ग) डिम्बकोषका स्नायुशूल । (Ovaraga)

यह स्नायविक वेदना है ; डिम्बकोषका प्रदाहादि इसका कारण नहीं। एकाएक वेदना आरम्भ हो जाती और फैल पड़ती है। वमन, पेट फूलना, हृद्स्पन्दन, पेशाब घट जाना इसके विशेष लक्षण हैं।

चिकित्सा । न्याजा ६ ।—इस रोगकी एक उत्कृष्ट औषधि है। एकमात्र इसीपर निर्भरकर बहुतेरे रोगिणियोंने स्वास्थ्यलाभ किया है।

शूलवेदनाकी आक्रमणावस्थामें एट्रोपिया ३x चूर्ण और वेदनाकी विरामावस्थामें जिङ्काम-वेलेरियानाम ३x चूर्णकी व्यवस्थाकर डाक्टर लडलामने अनेक स्थलमें सुफल पाया है। ष्टाफिसाग्रिया ६, मानसिक उत्तेजनाजनित वेदनामें उपयोगी है।

यदि यह समझमें न आये, कि वेदना स्नायविक है या प्रदाहजनित, तो हेमामेलिस ३ या कलोसिन्थ ६ देना चाहिये।

स्नामो-मइवास और मानसिक उत्तेजना निषिद्ध है।

(४) योनिकी पीड़ायें। (Diseases of the Vagina.)

योनिदेशके रोगोंमें निम्नलिखित रोगोंका उल्लेख किया जायेगा;—(क) योनिका प्रदाह (ख) योनिका आक्षेप (ग) अवरुद्ध योनि, (घ) योनिभ्रंश और (ङ) योनिमें खुजली।

(क) योनिका प्रदाह। (Vaginitis.)

यदि योनि लाल, उष्ण, स्फीत और वेदनायुक्त हो जाये और इसीके साथ योनिसे पीब निकले और यदि इन लक्षणोंके साथ पेशाब करते समय योनिमें खुजली हो, तो समझना चाहिये, कि 'योनिका प्रदाह' रोग हो गया है। प्रमेहका पीब लगना, अतिरिक्त मइथुन, बलात्कार, प्रसवकालमें आघात, रक्त रचित होना, योनिमें जलप्रवेश, शीत लगना प्रभृति कारणसे योनिका प्रदाह होता है। इस रोगमें प्रायः ही रजोरोध नहीं होता। यह रोग द्विविध है,—तरुण और पुराना।

प्रसव वेदनाके बाद योनि बाहर निकल आती है। पेड़ूमें भार, पैर चलानेमें क्लान्ति और मलभाण्ड स्फीत इस रोगके प्रधान लक्षण हैं।

चिकित्सा।—ऐनाम ६ और क्रियोजोट ६ इस रोगकी प्रधान औषधियां हैं।

कुछ दिनतक ममनदके सहारे लेटना विधेय है। दस-पन्द्रह मिनट बाद कुछ जलमें बैठनेपर योनि सहज ही विवरमें चली जाती है।

(ङ) योनिकी खुजली। (Pruritis Vulvæ.)

शरीर निर्बल हो जानेपर योनिके बाहरी भागमें तरहतरहकी फुन्सियां उत्पन्न होनेपर बड़ी ही कष्टकर खुजली उपस्थित होती है। इसीको 'योनिकी खुजली' कहते हैं।

चिकित्सा। सलफर ३०।—ज्वालाकर खुजली और फुन्सी; गर्म्म जान पड़ना; घर्म्म।

डलिकम्स ६।—असह्य खुजली; रातको वृद्धि। श्वास, सफेद मल।

आरसेनिक ३०।—जलपूर्ण फुन्सियां; सड़ना आरम्भ होनेपर।

कैलाडियम ६, मार्कुरियस ६, माइकोपोडियम १२, कार्बो-वेज ३०, नेट्रामसियोर ३०, नक्सवमिका ६, सिपिया १२, पेट्रोलियम ६ समय-समयपर आवश्यक हो सकते हैं।

सहकारी उपाय।—आक्रान्त स्थानको सदा साफ रखना चाहिये। कैलेण्डुला ० एक भाग शेष भाग जलमें मिला योनि नित्य २।३ बार धो देना चाहिये। इसके बाद कैलेण्डुला आंके साथ अच्छी रूईमें भरकर योनिमें रखना चाहिये। योनिमें यदि कंटीले बाल हों, तो उन्हें साफ करनेपर औषधि सेवन करना चाहिये।

(५) कामोन्माद। (Nymphomania)

जब कोई स्त्री अपनी यौवनकी इच्छापर कर्तृत्व करनेमें असमर्था हो सामने आनेवाले किसी भी पुरुषके साथ अपनी कु-प्रवृत्ति चरितार्थ करनेमें बिन्दुमात्र भी कुण्ठित नहीं होती, तब समझा जाता है, कि उस स्त्रीको कामोन्माद रोग हो गया है। योनिके भीतर छोटे कृमि जैसे एक तरहके कीटाणु उत्पन्न होनेपर स्त्री-जननेन्द्रियमें उत्तेजना (irritation) उत्पन्न होती है। यही उत्तेजना रोगिणीको क्रमशः उन्मत्त बना दिया करती है।

चिकित्सा। हायोसायेमास।—[illegible] [illegible] साथ [illegible] [illegible] इच्छामें

लाटिना ६।—[illegible] [illegible] [illegible] कामोन्माद

कोका [illegible] [illegible] इसके बाद [illegible]

[illegible]

नियम।—नित्य बड़े सवेरे शय्या त्याग करनेपर ठण्ढे जलमें स्नान और वायु-सेवन करना उचित है। नाटक नावेल-पाठ और उत्तेजक पान-भोजन न करना चाहिये।

(६) बन्ध्यात्व। (Sterility.)

स्त्रियोंमें सन्तान उत्पन्न करनेकी शक्ति न होनेका नाम 'बन्ध्यात्व' है। स्त्री-जननेन्द्रियमें यानी जरायु, डिम्बकोष और योनिमें पूर्व्वलिखित किसी तरहकी व्याधि रहनेसे सन्तानोत्पत्तिमें व्याघात उत्पन्न होता है। उपयुक्त चिकित्साके गुणसे यह रोग रहनेपर बन्ध्यात्व मिट सकता है। फिर; पुरुषके दोषसे या स्त्री जननेन्द्रियके अपरिपुष्ट रहनेसे भी रमणी बन्ध्या हो सकती है। ऐसे स्थलमें उसे औषधि सेवन करानेका कोई फल नहीं होता।

किन्तु यह सब कारण न रहनेपर भी यदि कोई स्त्री पुत्रमुखदर्शनसे वञ्चित हो, तो निम्नलिखित औषधिका सेवन विधेय है।

चिकित्सा। कोनायाम ३।—विशेषकर डिम्बकोषकी क्रियाके शिथिलता-जनित बन्ध्यात्वमें। अल्प परिमाणमें रजो-निःसरण; स्तनद्वयमें यन्त्रणा।

बोराक्स ६।—सौत्र श्वेत प्रदर संयुक्त बन्ध्यात्वमें।

सिलिका ३० ।—फोड़ेके बाद नालीके अवस्थामें (Sinus)।

(ग) स्तनमें फोड़ा। (Tumour.)

फाइटोलेक्का ३X ।—पुराने फोड़ेकी उत्कृष्ट औषधि है।

बाह्यप्रयोग ।—फाइटोलेक्का ♂ एक भाग बीस भाग जलके साथ मिला स्तनपर कमपट्टी बाँध देना चाहिये।

(घ) स्तनमें दूषित फोड़ा। (Cancer)

हाइड्रास्टिस १X ।—यह दूषित फोड़ेकी उत्कृष्ट औषधि है।

बाह्यप्रयोग ।—हाइड्रास्टिस ♂ एक ड्राम चार आउन्स जलमें मिला धो देना चाहिये।

कोनायाम३या साइकिउटा३ ।—दो मात्रक चार घेनिक सेवनसे कोई फल न होनेपर। 'स्तनप्रदाह' या 'दुग्धकी' देखना चाहिये।

(८) मेरुदण्डका उपदाह। (Spinal Irritation)

शरीर क्षीण होनेपर स्नायविकोंमें निरन्तर वेदना होती है; इसीका नाम 'मेरुदण्डका उपदाह' है। इस वेदनाका प्रधान लक्षण यह है, कि व्यथित स्थानको दबानेसे वेदना बढ़ती है।

आरनिका ३ ।—आघात-जनित उपदाहमें ।

सिमिसिफिउगा।—जरायुकी पीड़ाके साथ उपदाह ।

रासटक्स ६ ।—आमवातके साथ उपदाह ।

आरसेनिक ६ ।—स्नायुशूलके साथ उपदाह ।

नियम ।—थोड़े गर्म जलसे पीठ धो डालना और विशुद्ध वायु सेवन उपकारी है ।

(९) पिकचंचु-अस्थिप्रदेशमें वेदना । (Coccygodynia.)

पिकचञ्चु-अस्थिकी* पेशी और विधान-तन्तुमें समय-समयपर स्नायुशूल (Neuralgia) जैसी तीव्र वेदना अनुभूत होती है । इसीको पिकचञ्चु अस्थिकी वेदना कहते हैं । इस रोगका विशेष लक्षण यह है, कि उठने, बैठने, मलत्याग करने और ऋतु तथा सङ्गके समय वेदना उपस्थित होती है । आघातादि कारणसे यह रोग उत्पन्न होता है ।

चिकित्सा ।—आघातजनित वेदनामें आरनिका ३ या रुटा ३x उपकारी है । यदि वेदना आघात-जनित न हो, तो फासफोरस ६ या लाकेसिस ६ प्रयोग करना चाहिये । यदि बैठनेसे उठनेपर वेदना उपस्थित हो, तो लाकेसिस देना चाहिये । इसमें यह विशेषरूपसे उपयोगी है ।

---

* मेरुदण्डके निम्न भागमात्रका नाम 'पिकचञ्चु' (Coccyx) है ।

१४। गर्भिणीरोग।

गर्भसञ्चार।—यथास्थान देखना चाहिये।

गर्भलक्षण।—ऋतु बन्द होना, वमि, मिचली, स्तनकी भुटनियोंकी चारों ओर स्याही आ जाना, पेड़ू और पेट दोनोंका बढ़ जाना प्रभृति गर्भके लक्षण हैं। किन्तु कितनी ही बीमारियोंमें भी यह सब लक्षण प्रकट होते हैं; इसलिये इन सब लक्षणोंके साथ यदि दोसे पांच मासके अन्दर पेड़ूमें बच्चा हिलना-डोलना जान पड़े, तो समझना चाहिये, कि निश्चय ही गर्भ है। मनुष्यकी छातीपर कान लगा सुननेसे जिसतरह धक-धक शब्द सुनाई देता है, गर्भिणीके पेड़ूमें कान लगानेसे यदि बच्चेकी छातीकी वैसी ही धड़कन सुनाई दे, तो गर्भके होनेमें किसी तरहका सन्देह करनेका प्रयोजन नहीं।

गर्भकाल २८० दिन। गर्भधारणसे प्रसवके दिनतक।

गर्भावस्थामें नियम-पालन।—निम्नलिखित कई विषयोंके प्रति विशेष लक्ष्य रखना चाहिये, नहीं तो प्रसूति और गर्भस्थ शिशु दोनोंका अमङ्गल हो सकता है।—

(क) खाद्य।—गर्भावस्थामें गुरुपाक द्रव्य भोजन, अतिभोजन, या उपवास वर्जनीय है। दूध, घी, दाल-भात, खिचड़ी, पूरी प्रभृति पुष्टिकर लघुपाक द्रव्य ही भोजन

करना विधेय है। मोठी नहीं, अचार, खराब चीजें अथवा प्रभृति अनिष्टकर है। जिस चीजके खानेसे बदहज़म मालूम हो, उस चीजको विषतुल्य समझ छोड़ना चाहिये क्योंकि बदहज़मी होनेपर पेटका व्यथा निकल आ सकता है। गर्भावस्थामें तरह-तरहकी चीजें खानेकी इच्छा होती है। यदि उस खाद्यसे गर्भस्थ शिशुकी कोई हानि होनेकी आशंका न हो, तो गर्भिणीकी अभिलाषा पूरी करना उचित है।

(ख) परिच्छद।—धोती ढीली पहनना चाहिये। कारण, धोती कसकर पहननेसे शिशुकी देहमें रक्त पहुंचनेमें रुकावट होती है और इसके फलसे शिशु या तो विकलाङ्ग होता या मृतावस्थामें अकाल ही भूमिष्ठ हुआ करता है। देरतक भीगा या मैला कपड़ा पहनना भी ठीक नहीं।

(ग) श्रमादि। नित्य विशुद्ध वायु सेवन और नियमित परिश्रम करना आवश्यक है। अति परिश्रमसे गर्भपात हो सकता है और नितान्त आलस्यसे दिन काटनेपर प्रसवके समय प्रसूतिको कष्ट और शिशु निर्जीव हो सकता है। गर्भावस्थामें, विशेषकर प्रथम तीन मासके अन्दर गाड़ी, [illegible] सवारी, उछलना कूदना, भारी बोझ उठाना, [illegible] लेकर चलना आदि [illegible] [illegible] है। गर्भावस्थामें [illegible] [illegible]

(घ) मन ।—मन को सदा निरुद्वेग और प्रफुल्ल रखना चाहिये। माताके मनके भाव गर्भस्थ शिशुके मनपर असर दिखाते हैं। गर्भावस्थामें स्त्रीका स्वभाव भयार्त्त रहनेसे सन्तानका भी स्वभाव भीरु हो जाता है। गर्भिणीका मन विषादपूर्ण रहनेसे भावी शिशु भी विषण्णस्वभाव हो जन्म ग्रहण कर सकता है।

(इस अध्यायमें पहले गर्भावस्थाके; बादको प्रसवावस्थाके उपसर्गादिका विषय लिखा जायेगा।)

गर्भावस्थामें गर्भिणीको बड़ी सावधानीसे रखना चाहिये। गर्भसञ्चारके बादसे प्रसवकालतक साधारणतः नाना प्रकारके उपसर्ग होते हैं और इसलिये गर्भिणी अतिशय कष्ट पाती है। आगे प्रधान-प्रधान उपसर्गों की बातें लिखी जाती हैं।

मूर्च्छा ।—मूर्च्छा आते ही मुखपर ठण्डे जलके छींटे मारना और मस्तक या अर्क कपूर सुंघाना उचित है। विराम-कालमें निम्नलिखित औषधियोंका प्रयोग करना चाहिये;— रस-रक्तादिके क्षयसे मूर्च्छा होनेपर चायना ६, ३०। भयसे मूर्च्छा होनेपर ओपियम ६; शोक-दुःखादिकी मूर्च्छामें इग्नेसिया ६; हृत्पिण्डकी क्रिया क्षीण होनेकी मूर्च्छामें डिजिटेलिस ६ और स्नायविक दुर्व्वलताकी मूर्च्छामें एसिडफस ६।

शिर जकड़ जाना और शिर घूमना ।—रक्ताधिक्यसे माथा घूमने और आंखोंके सामने काले-काले दागोंके

आने आदि लक्षणमें एकोनाइट ६। टप-टप शिरःदर्द
और चक्षु तथा मुखमण्डल लाल और कानमें भों-भों शब्द आदि
लक्षणमें बेलेडोना ६। शिरकी चिलकनमें नक्सवमिका ३०
प्रयोजन होनेसे 'शिरःपीड़ा'की औषधियोंसे कोई औषधि पुन
देना चाहिये।

दन्तवेदना।—ज्वरके साथ ही दन्तवेदनामें एकोनाइट
३। वायविक उत्तेजना या अजीर्ण दोषकी दन्तवेदनामें केल-
केरिया फोरिटो ६, मार्किउरियस ६, नक्सवमिका ३०, कैमो-
मिला १२, एण्टिमक्रूड ६ और क्रियोज़ोट १२ लक्षणानुसार
प्रयोग करना चाहिये। 'दन्तशूल' देखना उचित है।

शोथ।—गर्भावस्थामें रक्तचालनकी क्रियामें व्याघात
पहुंचनेपर पैर, हाथ और जननेन्द्रियमें 'शोथ' हुआ करता
है। आर्सेनिक ३०, चायना ६, एपिस ६ और फेरम ३०
लक्षणानुसार देना चाहिये। 'शोथ' देखना चाहिये।

वमन या वमनेच्छा।—गर्भावस्थामें वमन, वमनेच्छा
और मुखसे जल निकलना यह तीनों उपसर्ग प्रायः ही सबेरे
[illegible] आते हैं। कुछ दिन तक यह उपसर्ग रहते; बादको आप
[illegible] हैं। [illegible] निर्धारित न
[illegible]
[illegible]

और उदरामय होनेकी आशङ्का या तरल मलके लक्षणमें इपिकाक ६। पाकस्थलीमें वेदना; कोठबद्ध; उद्गार उठना; मुखमें जल आना; हिचकी; प्रातःकालीन आहारके समय या आहारके बाद वमनके लक्षणमें नक्सवमिका ३०, क्रियोजोट ६ सिपिया ३० समय-समयपर आवश्यक हो सकते हैं।

मुखसे जल आना।—अति भोजनकी वजह मुखसे जल आता और खट्टा या खाई चीजका उद्गार उठता है। निम्नलिखित औषधियोंका प्रयोग होना चाहिये,—मारकुरियस ६ प्रधान औषधि है। खट्टा उद्गार; एकाएक उद्गार उठनेके साथ तिक्त स्वादका कुछ तरल पदार्थ गलेतक बढ़े और फिर उतर जाये; अरुचि, छातीकी ज्वाला; कोठबद्ध; सदा मुखमें जल उठना, नक्सवमिका ३०। पेट फूलना या पेटका जकड़ जाना; पकस्थलीमें ज्वाला; अम्ल उद्गारके साथ मुखमें जल उठनेमें कार्बोवेज ३०। सदा अम्लोद्गारके साथ मुखसे जल आनेमें कैलकेरियाकार्ब ३०।

मरोड़ें।—४।५ मासके अन्दर समय-समयपर गर्भिणीकी जांघ, पेट, पीठ और कमरमें मरोड़ें होती हैं। आवश्यक होनेसे नीचे लिखी औषधियोंको उनकी कहीं शक्तिमें प्रयोग करना चाहिये। पेर और जांघकी मरोड़ोंमें कैमोमिला और उसीके साथ सिर.पीड़ा, अग्निमान्द्य या वमनेच्छा रहनेसे नक्सवमिका, आर्सेनिया और सिपिया, उदरामय रहनेसे

छाती धड़कना ।—डिजिटेलिस ३ प्रधान औषधि है। अजीर्णतासे छाती धड़कनेपर नक्सवम ६।

अर्श ।—कोई-कोई गर्भिणी अर्शसे कष्ट पाती हैं। नक्सवमिका ६ इसकी उत्कृष्ट औषधि है। अर्शके साथ कोष्ठबद्ध रहनेपर कलिनसोनिया ३x।

खांसी ।—समय-समयपर सूखी खांसीसे कष्ट होता है। एकोनाइट ३ और नक्सवमिका ६ इस रोगकी प्रधान औषधि है। 'श्वासयन्त्रकी पीड़ा' देखना चाहिये।

पेशाबकी यन्त्रणा ।—अर्क कपूर प्रधान औषधि है। एकोनाइट ३, बेलेडोना ६, एपिस ६, आरसेनिक ६ और केन्थारिस ६ समय-समयपर आवश्यक हो सकते हैं। पेशाबकी पीड़ा देखना चाहिये।

नसोंका फूलना ।—जांघ प्रभृतिके नसोंके फूल जानेसे कभी-कभी बड़ी यन्त्रणा होती है। हेमामेलिस ३x इसकी उत्कृष्ट औषधि है। हेमामेलिस ϙ लोशनमें जलमें मिला सूतनपर पट्टी देनेसे रक्तका गिरना घट जा सकता है।

रजः निकलना ।—गर्भावस्थामें कभी-कभी ऋतु दिखाई देता है। कक्किउलस ६ और फास्फोरस ६ इसकी उत्कृष्ट औषधि है।

पेटमें कनकनाहट ।—कैमोमिला १२ या नक्सवमिका ६ एक मात्रा प्रयोग करते ही उपकार होता है। केलिकार्ब ६ भी अच्छा है।

ज्वर ।—गर्भावस्थामें पहले कई मासके अन्दर ज्वर आनेपर किसी औषधिके देनेकी आवश्यकता नहीं। यदि किसी तरह ज्वर न छुटे, तो एकोनाइट ६ देना चाहिये।

दर्द ।—पैर या पैरके तलवोंमें एकाएक तनाव या खिंचाव-जैसा दर्द होनेपर क्युप्राम ६ या जेलसिमियम ३ उपकारी है।

बाह्य जननेन्द्रियमें खुजली ।—बोराक्स ३ और एम्ब्रा ६ इसकी उत्कृष्ट औषधि है। सुहागा जलमें घुला जननेन्द्रिय २।३ बार धो डालना चाहिये।

पेट बढ़नेसे कष्ट ।—बेलेडोना ६ और नक्सवमिका ६।

पेटमें बच्चा हिलनेसे कष्ट ।—ओपियम ६ और आर-निका ३।

धातुकी बीमारी ।—दूधजैसा धातु निकलनेपर कैल-केरिया ६। पानी या पानी-जैसा धातु निकलनेपर सिपिया १२। धातु जानेके निकलते दुखन हो जानेसे सायना ६। यदि धातुके जानेके साथ योनिके भीतर सुरसुराहट हो

और मङ्गम करनेकी खूब इच्छा हो, तो प्लाटिना ६। 'श्वेत-प्रदर' देखना चाहिये।

स्तनमें वेदना।—स्तनके सख्त, लाल, वजनी और वेदनायुक्त हो जानेपर बेलेडोना ३x। स्तनके स्फीत, भारी, किन्तु लाल न रहनेके लक्षणमें ब्रायोनिया ३।

स्तनकी भुटनियोंका प्रदाह और जख्म।—चोट लगनेसे भुटनीमें प्रदाह होनेपर आरनिका ३ सेवन और आरनिका ∅ जलके साथ मिला बाह्यप्रयोग। भुटनियोंमें जख्म होनेपर हाइड्रास्टिस ३ और हाइड्रास्टिस ∅ जलके साथ मिला लगाना चाहिये।

स्तन बढ़नेका दर्द।—शूलवेदनाजैसी यन्त्रणामें कोनायम ३। प्रदाहजनित यन्त्रणामें बेलेडोना ३x और ब्रायोनिया ३।

मानसिक कष्ट।—गर्भिणीके सदा उदास रहनेसे सिमिसिफिउगा ६, शोकसे अधीरा होनेपर इग्नेसिया ६; डरी हुई रहनेमें एकोनाइट ३, क्रोधनस्वभाव होनेसे कैमोमिला १२।

अप्रकृत प्रसववेदना।—गर्भावस्थाके अन्तमें बराबर प्रसववेदनाजैसी वेदना दिखाई देती है। ('प्रसववेदना—अप्रकृत लक्षण' द्रष्टव्य है।) कैमोमिला ६ इसकी उत्कृष्ट

बेसिलिनाम २०० ।—वंशमें यक्ष्मा या क्षयरोग रहनेपर।

सोरिनाम ३० ।—पिता या मातामें दुर्गन्धयुक्त चर्म्मरोगादि रहनेपर।

सिलिका ३० ।—पिता-मातामें अस्थिविकृति रोग(rickets) रहनेपर।

बेराइटा कार्ब्ब ३० ; आयोडियम ३० ; थुजा ३० ; मारकुरियस ३० , कष्टिकम ३०, सिपिया ३० और सलफर ३० लक्षणानुसार प्रयोग किया जा सकता है।

गर्भपात या गर्भस्राव । (ABORTION.)

गर्भसञ्चारकालके ७. मासके अन्दर गर्भस्थ शिशुके निकल जानेको 'गर्भपात' या 'गर्भ गिरना' कहते हैं। ऐसा होनेसे बच्चा तो बचता ही नहीं, खूब सावधानी न होनेसे प्रसूतिके भी जीवनकी आशङ्का रहती है *। कमर और पेड़ूमें वेदना, ऐसा ज्ञान पड़ना मानो बच्चा नीचेको और धँसा आता हो और रक्त तथा श्लेष्मा निकलना गर्भपातका पूर्व्वलक्षण है। गर्भावस्थामें कमसकर धोती पहनना, ज्यादा मिहनत करना, माड़ी पालकी नाव रेल प्रभृतिमें चढ़ना, विशेषतः गर्भावस्थाके प्रथम चार मासमें ऐसी सवारी करना, दौड़ धूप करना, गिरना, वजनी बोझ उठाना, पेड़के पत्तों या अँगलियोंपर खड़े होना,

नज़ोर या मसहरी टांगना, चेचक, हैजा, ज्वर, बदहज़मी प्रभृति होना, खांसी-श्वास, तीव्र औषधि सेवन, स्त्री-जननेन्द्रियमें दर्द, अनियत भय, चिन्ता, शोकादि कारणसे गर्भस्राव होता है। इसलिये गर्भावस्थामें इन सब बातोंसे खूब सावधान रहना चाहिये। एकबार गर्भपात होनेपर बारंबार गर्भपातकी सम्भावना है; इसलिये गर्भसञ्चार होते ही खूब सतर्क रहना उचित है। यह पीड़ा बड़ी ही कठिन होती है; इसलिये खूब समझ-बूझकर दवा करना आवश्यक है।

गर्भपात-निवारणकी चिकित्सा।

एकोनाइट ३x। गर्भावस्थामें प्रथम तीन मासके अन्दर गर्भस्रावकी आशङ्कामें, ज़ोरसे दर्द होने और रक्त दिखाई देनेके बाद दें।

सिकेली ३x।—गर्भावस्थाके पीछे वा बादके महीनोंमें गर्भस्रावकी आशङ्का होनेपर ज़ोरसे दर्द होने और रक्त दिखाई देने पर।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

धात्री द्वारा ऐसी व्यवस्था करना चाहिये, जिससे गर्भसे भ्रूण और फूल निःशेष निकल जावे; नहीं तो सूतिकादि रोग उत्पन्न होनेसे प्रसूतिको जानतक जा सकती है। फूल गिरनेमें देर हो, तो पलसेटिला ३० या सिकेली ३० देना चाहिये और जिन कई दिनों रक्त निकलता है; उन कई दिनों चायना ६ देना उचित है।

प्रसवावस्थाके उपसर्गादि।

प्रसवकाल।—पहले ही लिखा जा चुका है, कि गर्भसञ्चारके दिनसे कोई २८० दिनके भीतर यानी दसवें महीने सन्तान भूमिष्ठ होता है। जो गर्भनिषेक गर्भिणीका पेट बढ़ता है; इसके बाद यानी प्रसव होनेसे कोई दस दिन पहले पेट झूलने लगता, बोझा हलका हो जाना, बारंबार पेशाब जाना और जङ्घाके नीचे दर्द होती है। यह सब लक्षण दिखाई देते ही प्रसव-व्यवस्थाका इन्तेज़ाम करना चाहिये।

सूतिकागार।—मकानमें जो कोठरी सबसे अच्छी हो यानी जो कोठरी बड़ी और साफ हो और जिसमें दुर्गन्ध न हो, वायु आवे और जिसमें [illegible]; वही कोठरी सूतिकागार [illegible] सूतिकागारमें [illegible] है।

[illegible]

तथा मानसिक चिन्ता प्रसव-वेदनाके पूर्व्वलक्षण हैं। इसके बाद जब बारंबार पेशाब करनेकी इच्छा हो, मिचली या कै हो, शरीर कांपे, जल निकले यानी योनिसे जलजैसा स्रावादि निकले और वेदना क्रमसे बढ़कर पेटकी ओर या ठण्डो हो जाये, तब समझना चाहिये, कि प्रसववेदना उपस्थित है। अनेक समय प्रसववेदनाका निर्णय करना कठिन होता है; इसलिये प्रकृत और अप्रकृत प्रसववेदनाका अलगाव नीचे दिया जाता है,—

प्रकृत लक्षण।	अप्रकृत लक्षण।
१।—पीठ, कमर कभी कभी जांघतक वेदना जान पड़े।	१।—केवल पेट हीतक वेदना रहती है।
२।—प्रति बार वेदना नियमित रूपसे, जैसे प्रति पन्द्रह वें, दसवें, पांचवें मिनट हो और रुक जाय।	२।—वेदना उपस्थित होनेका कोई नियम नहीं। कभी पांच, कभी पन्द्रह मिनट बाद हो। कभी-कभी वेदना लगातार बनी रहे।
३। प्रति बार वेदनाके साथ जरायु-मुख थोड़ा थोड़ा खुले और जल निकले।	३। वेदनासे जरायुमुख जरा भी न खुले और जल कुछ भी न निकले।

प्रसवकी अवस्थायें। प्रसववेदनाका सूत्रपात होनेके बाद [illegible] घण्टेके भीतर भूमिष्ठ होने और शिशुका प्रसव

आगे निकलनेको 'स्वाभाविक प्रसव' कहते हैं *। स्वाभाविक प्रसवकी तीन अवस्थायें हैं :—

प्रथम अवस्था।—प्रसव-वेदना आरम्भ होनेपर जरायु-मुखके विस्तृत होने और उससे जल † निकलनेतक। यानी दर्द शुरू होनेसे पानी निकलनेतक।

द्वितीय अवस्था।—जरायु-मुख खुलने और जल निकलनेसे शिशुके भूमिष्ठ होनेतक। इस अवस्थामें जरायु-मुख और वाह्य स्त्री-जननेन्द्रियके बीच कोई अलगाव रह नहीं जाता; एक सुरङ्गजैसी राह तय्यार हो जाती है।

तृतीय अवस्था।—सन्तान भूमिष्ठ होनेके बादसे जरायुका फूल बाहर निकलनेतक।

स्वाभाविक प्रसवमें अवश्य प्रतिपाल्य कितनी ही विधियाँ।

प्रथमावस्था।—प्रसवकी पहली अवस्थामें गर्भिणी जिस ढङ्गसे रहना चाहे या जो कार्य्य करना चाहे, उसमें बाधा

---

* [illegible]

† [illegible]

नाड़ी काटना।—शिशु भूमिष्ठ होनेपर जबतक रोने न लगे; तबतक उसकी नाड़ी काटी न जाये। नाड़ीका जो सिरा शिशुकी नाभिमें लगा रहता है; उस सिरेसे अन्दाज़ कोई तीन अङ्गुल नाड़ी छोड़ रेशमसे * दो मज़बूत गांठ दे देना चाहिये और इससे ऊपर और एक अङ्गुल नाड़ी छोड़ इसी तरह और दो गांठ दे देना चाहिये। इसतरह शिशु और प्रसूतिकी ओर नाड़ी बंध जानेसे दोनो बन्धनोंके बीचकी नाड़ी तेज़ कैंची या छुरीसे काट देना चाहिये। बन्धन खूब मज़बूत न होनेसे अतिशय रक्तस्राव होनेकी वजहसे शिशुका प्राणनाश हो सकता है। सावधान। नाड़ी काटते समय शिशुके हिलने-डोलनेसे उसके हाथ पैरकी उंगलियां न कट जायें। यदि भूमिष्ठ होनेपर शिशुका मुख नीला हो जाये, तो थोड़ी नाड़ी काट पहले थोड़ासा रक्त निकाल तब नाड़ी बांधना चाहिये।

नाड़ी काट चुकनेपर शिशुकी नाड़ीपर तेलकी पट्टी बांध देना चाहिये। इसके बाद उंगलीके सिरेपर साफ़ नरम कपड़ा लपेट शिशुके मुंहके भीतरसे कफ़ या लार निकाल लेना चाहिये। इसके बाद कुछ गर्म जलसे स्नान करा खूब नर्म कपड़ेसे उसकी देह पोंछ-पांछ ओढ़ने लायक कपड़ेसे ढंक देना चाहिये। [illegible] शिशुको स्नान न करा

[illegible]

सरसोंका तेल कुछ गर्मकर शिशुके सारे शरीरपर मल ... पतले वस्त्रसे धीरे-धीरे पोंछ देना चाहिये। ०

'शिशुके भूमिष्ठ होनेपर न रोने या मृतवत् पड़े रहनेप[illegible] 'मृतवत् भूमिष्ठ शिशु' देखना चाहिये।

तृतीयावस्था।—जबतक फूल निकल नहीं जाता; तबतक माताकी अवस्था निरापद नहीं रहती। स्वाभाविक प्रसवमें कोई आध घण्टेमें फूल आप ही आप निकल आता है। खींच-तानसे विपद्‌की आशङ्का है। 'फूल न निकलना' द्रष्टव्य है।

फूल गिरनेके बाद माताका वस्त्र और बिछौना साफकर उनकी बाह्य जननेन्द्रियके मुखमें पांच अङ्गुल परिमाण कपड़ा दो-तीन तह करके रख देना चाहिये और समय-समयपर इसे बदल देना चाहिये।

तीन हाथ लम्बा और आध हाथ चौड़ा एक कपड़ा माताके पेटपर कमरबन्दकी तरह कोई दस दिनतक बांध रखना चाहिये। किन्तु प्रसवके बाद ही यदि दो घण्टेतक दोनो हाथोंसे माताके जरायुको पेड़के ऊपरसे दबा रखा जाय, तो कमरबन्द बांधनेकी आवश्यकता नहीं होती।

[illegible]

प्रसवके बाद कमसे कम तीन घण्टे माताको चित सुला रखना चाहिये और उसके कपड़ेका उतारना और पेशाब-पाखाना सभी अवस्थामें होना चाहिये। हिलने-डोलनेसे भयानक रक्तस्राव होनेकी बड़ी आशङ्का है। तीन घण्टे स्थिरभावसे रहनेपर मस्तक हो सुनिद्रा आ माताको बहुत कुछ स्वस्थ बना देता है। प्रसवके आठ-दस घण्टे बाद माता जब स्वस्थ हो जायें, तब शिशुको उसका दूध पीने देना चाहिये। बच्चेके दूध पीनेसे स्तनमें शीघ्र-शीघ्र दूध आता और जरायुके सङ्कुचित हो जानेसे रक्तस्राव नहीं होता।

यदि प्रसवके बाद कोई उपसर्ग दिखाई न दे, तो आर्णिका ३ चार-चार घण्टे बाद तीन दिनतक माताको सेवन कराना चाहिये। आर्णिका सेवन करा देनेसे सूतिका-ज्वर प्रभृति प्रसवान्तिक बीमारियाँ हो नहीं सकतीं।

प्रसवके बाद अधिक परिमाणमें रक्तस्रावादि होनेपर 'प्रसवान्तके उपसर्गादि' देखना चाहिये।

सूतिकागारमें माताका यत्न या।—नीचे लिखे नियमोंकी ओर विशेष दृष्टि रखना चाहिये :-

१। एक मास   अथवा एक सप्ताह माताको सूतिकागारसे निकलने देना न चाहिये। प्रथम चार-पाँच दिन पूर्ण स्थिर भावसे लेटा रखना चाहिये। पेशाब आदिके लिये भी बाहर निकलना न चाहिये। हिलने डोलनेसे रक्तस्रावके कारण मृत्युतक हो सकती है।

लक्षणमें बेलेडोना ३०। अत्यन्त वेदना रहनेसे कैमोमि
इक्विया ६ और जेलसिमियम ६। अत्यन्त प्रसववेदनामें
एकाएक वेदना बन्द होनेपर पांव-मुंह लाल; ग
श्वास-प्रश्वास; खुर-खुर शब्द; अज्ञानता और मूर्च्छा
दिखाई देनेपर ओपियम ६, ३०। अत्यन्त मरोड़ोंकी व
गर्भिणी अधीरा हो चिल्लाने लगे, तो हायोसायमस ६।

गर्भस्थ सन्तानका मस्तक पहले बाहर न निकलनेसे
आमवातमें पलसेटिला ३०। जरायुका मुख तंग रहने और
विस्तृत न होनेपर बेलेडोना ३०। ऊटकर प्रसववेदनामें
आरनिका ३। प्रसवके समय या बादको मूर्च्छा और उबाई
काथ शरीर बरफकी तरह ठण्डा और नाड़ी क्षीण हो जाने-
पर केम्फर।

फूल न गिरना।—शिशु उत्पन्न होनेके कुछ देर बाद ही
जरायु-फूल बाहर निकल आता है। किन्तु प्रसवके बाद एक
घण्टेतक फूल न गिरनेसे पलसेटिला ३० या सिकेली ३०
पन्द्रह-पन्द्रह मिनट बाद देना चाहिये। एक घण्टेतक
औषधि सेवन करनेसे भी यदि कोई उपकार न हो, तो एक
हाथसे जरायुपर दबाव दे दूसरे हाथसे फूलको धीरे-धीरे
खींच बाहर निकाल लेना चाहिये। जोरसे खींचनेसे फूल
टूट जाता और उसका कुछ अंश भीतर ही रह जाता है
[illegible] भीतर रह जानेसे [illegible]
[illegible] है

चाहिये। भारनिकासे उपकार न होनेपर सैवविनियम ३x या अफिया ६ या सिकेली ३० देना चाहिये।

रक्त बन्द करना (Lochia)।—फूल गिरनेके बाद कोई बीस दिनतक जरायुसे थोड़ा-थोड़ा रक्त निकलता है। पहले दो दिनका निर्गम घोर लाल, पीछे पीला आभायुक्त हो जाता है और अन्तमें जलवत् या पतले पीवजैसा हो बन्द हो जाता है। इस रक्तके इस स्वाभाविक रूपसे बन्द होनेमें किसी तरहकी औषधिका प्रयोजन नहीं होता। किन्तु निम्नलिखित लक्षणमें औषधिका प्रयोजन होता है:—दीर्घकालस्थायी होने-पर सिकेली ३ : दीर्घकालस्थायी घोर लाल निर्गममें स्याबाइना ३x; एकाएक बन्द हो जानेपर एकोनाइट ३x; दुर्गन्धयुक्त होनेपर क्रियोजोट ३ या कार्बो-वेजिटेबिलिस ६ और कैले-न्डिउला ० तीसगुण जलके साथ मिला नित्य तीन बार धो देनेकी व्यवस्था है।

रक्तस्राव (Hæmorrhage)।—प्रसवके बाद रक्त जारी [illegible]नेपर माताके जीवनमें संशय होता है। इस बातको याद [illegible]ना चाहिये, कि प्रसवकालमें थोड़ा रक्त निकलता है। [illegible] ज्यादा रक्त या लाल रक्त स्रोतकी तरह परिमाणमें [illegible]पर निम्नलिखित उपायसे उसे उसी समय बन्द करना [illegible]ये

[illegible] और जाँघे ऊँची करना [illegible] बाद रक्त जरायुको [illegible]

सूतिकाज्वर (Puerperal fever)।—सूतिका-ज्वर योनिज पीड़ा है; किन्तु स्त्रियोंको होता है; इसलिये यहाँ उसका हाल लिखा गया है। सूतिकाज्वर अति भयानक और कष्टदायक होता है। एक तरहका विष इस पीड़ाका उत्तेजक कारण है। प्रसवके बाद नाना कारणसे जरायु दूषित होना और प्रसवके बाद फूलका कुछ अंश जरायुके भीतर रह सड़ जाना इस रोग का पूर्ववर्त्ती कारण है। प्रसवके ३।४ दिन बाद ही सूतिका-ज्वर होता है। पहले सामान्य ज्वर होता; पीछे बढ़ जाता। उस समय शीत, कम्प, शरीर गर्म होना, शिरःपीड़ा, नाड़ीमें वेग, प्यास, पेटमें वेदना आदि लक्षण प्रकट होते हैं। ताप १०६ डिग्रीतक पहुँचता है, किन्तु पसीना नहीं आता। प्रायः ही स्तनसे दूध नहीं आता और ७।८ दिनमें मृत्यु हो जाती है। जरायुसे पीपजैसा दुर्गन्धस्राव निकलना अशुभ लक्षण है। यह रोग कभी पुराना आकार धारण नहीं करता।

चिकित्सा। एकोनाइट ३x।—पीड़ाकी प्रथमावस्थामें जब अत्यन्त ज्वर, शीत और कम्प, नाड़ी द्रुत और कठिन, देह शुष्क, उदर स्फीत और वेदनायुक्त, अत्यन्त प्यास और जरायुमें वेदना आदि लक्षण प्रकट होते हैं किन्तु डाक्टर लाइलनेन इस अवस्थामें वेराट्रम विरिड १ क्रमने बहुतेरे रोगियोंके प्राणरक्षा की है

सिल १, चायना ६, एपिस ६। पेटमें दर्द हो, तो खूब गर्म फ्लानेल पेटपर बांधना चाहिये।

पुराना सूतिका रोग।—एक सुप्रसिद्ध चिकित्साग्रन्थमें 'सूतिकाज्वर' और 'पुराना सूतिका रोग' एक ही बताया गया है। किन्तु असलमें ऐसा नहीं। यह दोनों दो जुदा रोग हैं। 'सूतिका ज्वर' स्पर्शाक्रामक होता है। एक तरहका विष रक्तस्थ होनेपर यह रोग उत्पन्न होता है। 'पुराना सूतिका रोग' स्पर्श द्वारा संक्रामित नहीं होता या किसी तरहके दूषित विषसे उत्पन्न नहीं होता; इसलिये यह सूतिका-ज्वरकी पुरानी अवस्था या आकार नहीं। प्रसवके बाद यदि प्रसूतिका अच्छा यत्न किया न जाय, तो उसका शरीर क्रमशः टूटकर रक्तहीन हो जाता है। इसीके साथ-साथ पुराना ज्वर, उदरामय, शोथ प्रभृति होता है; इसीको 'सूतिकारोग' या 'पुराना सूतिका रोग' कहते हैं।

चिकित्सा।—इस कठिन पीड़ामें नेट्रम-मिथोर ३०, आर्सेनिक ३०, चायना ६, फेरानमेट ३०, एलुमिना ६, सिपिया ३०, ग्राफाइटिस ३०, पलसेटिला ३०, नक्सवमिका ३० प्रयोग किया जाता है। किन्तु फेराम आर्सेनिकाम ३० इस रोग-की उत्कृष्ट औषधि है। [illegible] मांगुर मछलीका शोरवा पीना और डाक पत्तोंका [illegible] है। इस कुस्त करी रक्तस्वल्पता [illegible]

[illegible]

बाद या पहले बलक्षय प्रभृति कारणसे कोई-कोई स्त्री पागल हो जाती हैं। यह जरायुरोग दो तरहका होता है,—उन्माद (*mania*) और विषाद-वायु (*melancholia*)।

(१) उन्माद रोग।—बुद्धिकी भ्रान्ति, अनर्थक बकना, प्रियजनको मारने दौड़ना प्रभृति उन्माद रोगके प्रधान लक्षण हैं। सामान्य पागलपन या हंसी-खुशीके लक्षणमें ह्वायोसायमस ३, घोर उन्माद, जैसे भीषण प्रलाप, क्रोध, काटने दौड़ना, अकेली या अन्धकारमें रहनेसे अनिच्छा, निर्लज्ज भाव प्रभृति लक्षणमें ष्ट्रामोनियम ३, उग्रभावपूर्ण प्रलाप, ठीक मानो देवादेश होता हो; या अकेली तथा अन्धकारमें रहनेकी इच्छा, रह-रहकर रोगिणीकी शारीरिक और मानसिक क्रियाका निस्तब्ध भाव (Catalepsy) आदि लक्षणमें केनाबिस इण्डिका ६ देना चाहिये।

(२) विषाद-वायुरोग।—सदा विमर्ष या जड़भाव, हृदयमें शून्यता अनुभव या आत्महत्या 'विषाद-वायुरोग' के विशेष लक्षण हैं। सिमिसिफ्युगा ३ इसकी उत्कृष्ट औषधि है। आत्महत्याकी इच्छा बलवती रहनेसे आरम-मेट ६ देना चाहिये। प्लाटिना ६, अनसेटिला ६ या एम्बास-ग्रेशाम ३ समय-समयपर आवश्यक हो सकते हैं।

ऐसी व्यवस्था करना चाहिये, जिससे वायुग्रस्ता नारीका मन थोड़ा भी उत्तेजित न हो। दूध प्रभृति लघु अथच पुष्टिकर पथ्यका प्रयोजन है, कोई-कोई पीले मेंढकका शोरबा उपकारी बताते हैं।

श्वेतपद (Phlegmasia alba dolens)।—किसी-कि
स्त्रीका पैर प्रसवके बाद फूलना और सफेद हो जाता
पेड़ू से पैरतक दर्द, ज्वर, रक्त निकलना (Lochia) औ
स्तनदुग्धका ह्रास इस कष्टकर पीड़ाके उपसर्ग हैं। पलसेटि
६ और हैमामेलिस ३ X इसकी उत्कृष्ट औषधि है; एपि
६ और रासटक्स ६ समय-समयपर आवश्यक होते हैं।
नर्म रूईसे पैर बांधना और पुष्टिकर लघु खाद्य देना
चाहिये।

वस्तिकोटरकी कौपिक झिल्लीका प्रदाह (Pelvic celluli-
tis)।—अस्त्रप्रयोग या आघातादि कारणसे यह प्रदाह
उत्पन्न होता है। पेड़ूमें वेदना, ज्वर और जननेन्द्रियका
फूल उठना इस रोगके प्रधान लक्षण हैं। एपिस ६ और
रसटक्स ६ इस रोगकी औषधि है। प्रबल ज्वर रहनेसे वेरा-
ट्राम विरिड १X देना चाहिये।

वस्तिकोटरमें पीवपूर्ण फोड़ा (Pelvic abscess)।—
यदि 'वस्तिकोटरकी कौपिक झिल्लीका प्रदाह' ऊपर लिखी
औषधिके प्रयोगसे न मिटे और क्रमशः फोड़ेके रूपमें परिणत
हो यानी पीव निकलनेका उपक्रम हो, तो पकानेके लिये
हिपर सलफर ३x देना चाहिये और पीव निकलनेसे सिलि-
१६ की व्यवस्था होना चाहिये।

पेट फूल [illegible]

नहीं तो यह कोई रोग नहीं। केलकेरिया ३० या सिलिका ३० प्रतिमास एक बार सेवन कर लेना चाहिये।

शिरके बालोंका झर जाना।—प्रसवके बाद दुर्ब्बलतादि कारणसे कितनी ही स्त्रियोंका केशपात होता है। फास्फोरिक एसिड ६, चायना ६ या आरसेनिक ६ इसकी औषधि है।

स्तनका रोग स्तनदुग्धका रोग।	}	'प्रसवान्तमें' स्तनकी पीड़ा' देखना चाहिये।

प्रसवान्तमें स्तनकी पीड़ा।

स्तनके सम्बन्धमें माताको इन कई बातोंका ख्याल ध्यान रखना आवश्यक है :—

१। तीन-चार मासका गर्भ होनेपर स्तन बढ़ने लगता है; उसी समयसे स्तनकी घुटनीका ख्याल रखना चाहिये। आजकलकी सभ्यताके अनुसार ऐसी कसी हुई कुरती पहनना न चाहिये जिससे स्तनकी घुटनियोंके बढ़नेमें किसी तरहकी रुकावट हो।

२। पहले ही कहा जा चुका है, कि प्रसवके आठ दस घण्टे बाद ही शिशुको स्तनपान कराना चाहिये, इससे नवजात शिशुको सहज ही पायखाना हो जाता है और माताको ज्वरादि आ नहीं सकता।

३। प्रति बार स्तन्यदानसे पहले थोड़ासा दूध निकाल

फेंकना इसके बाद स्तनकी भुटनी शिशुके मुंहमें देना चाहिये।

४। माताके आहारके दोषसे स्तनका दूध खराब हो सकता है। ऐसा दूध पी शिशुके पेटमें दर्द, अजीर्णता प्रभृति रोग हो सकते हैं। इसलिये माताको खूब सावधानीसे खाना-पीना चाहिये।

५। स्तनकी भुटनीमें जखम हो जाने या माताके पेटमें कोई बीमारी या ज्वर आदि होनेपर शिशुको दूध पिलाना न चाहिये।

६। कठिन शारीरिक परिश्रमके बाद या क्रोधादि मानसिक उत्तेजनाके समय या ठीक स्वामी-सहवासके बाद स्तनका दूध विकृत हो जाता है; ऐसी अवस्थाका दूध पिलानेसे शिशु उसी समय बीमार हो सकता है; यहांतक, कि उसकी मृत्यु भी हो सकती है।

दुग्धज्वर (milk fever)।—प्रसवके कुछ बाद दुग्ध-सञ्चारके कारण किसी-किसी माताके स्तनमें कांटा छेदने-जैसी वेदना होती है और एक या दो दिन दोनो स्तन कठोर हो जाते और सामान्य ज्वर आ जाता है। इसीको 'दुग्धज्वर' कहते हैं। इसमें किसी औषधिकी आवश्यकता नहीं होती। सिर्फ जबतक ज्वर न उतरे, तबतक शिशुको दूध पिलाया न जाये और स्तनको शीत न लगे।

किन्तु दुग्धज्वरके कठिन होने या बीस घण्टेसे अधिक

स्तनमें व्यथा (Painful nipples) ।—शिशुके हर बार स्तनपानसे यदि माताको कष्ट हो, तो फेलाण्ड्रियम ३x सेवन करना चाहिये। भुटनियोंके छोरसे माताके कन्धेतक शूल-वेदना होनेपर क्रोटन टिग्लियम ३।

दूध पिलानेके बाद ही सुस्ती।—शिशुको स्तनपान करानेके बाद माताके सुस्त हो जानेपर चायना ६।

स्तनमें दूध अधिक होना।—स्तनमें एकाएक दूध बढ़नेसे उसे घटानेके लिये पलसेटिला ३ देना चाहिये। मसूरकी दाल पीस स्तनपर चढ़ानेसे भी दूध खूब सूख जाता है।

स्तनमें दूध न होना या कम होना।—प्रसवके बाद बीस घण्टेमें स्तनमें दूध न होनेसे एग्नास-केटास ३x देना चाहिये। एकाएक दूध घट जानेपर बिल्कुल बन्द होनेपर एसफिटिडा ३ देना उचित है। कलमी साग खाने और अरण्डके पत्ते जलमें पका उस जलसे स्तन धोनेसे दूध बढ़ता है।

मानसिक उत्तेजनाकी वजह कभी-कभी दूध सूख जाता है। क्रोधकी वजह एकाएक दूध सूख जानेसे कैमोमिला ६, भयप्रयुक्त होनेसे एकोनाइट ३, ईर्षाकी वजह होनेसे हायोसायेमस ३ और शोककी वजह होनेसे इग्नेशिया ६ देना चाहिये

दूध जमनेसे स्तनका सख्त होना। कभी कभी दूध जमनेसे स्तन कठिन हो जाता और उसमें यन्त्रणा होती है। कैमो-मिला ६ इसकी उत्कृष्ट औषध है। 'स्तनप्रदाह' देखना चाहिये।

१५। बालरोग।

शिशुपालन।—शिशुकी नाड़ी काटने और स्नान करानेके कुछ देर बाद शिशुको कुछ गर्म दूध, जो समपरिमाण जलके साथ जरा-जरा गर्म किया गया हो पिलाना चाहिये। इसके बाद शिशुके मल-मूत्र त्याग कर लेने और माताके कुछ स्वस्थ हो जानेपर शिशुको स्तनपान कराना चाहिये। 'नाड़ी काटना' और प्रसवान्तकी स्तनपीड़ाकी बातोंको एक नजर देख लेना चाहिये। भूमिष्ठ होनेके बादसे इक्कीस दिनतक शिशु कभी चित सुलाया न जाये। डाक्टर फिशरका कहना है, कि उत्पन्न होनेके बाद शिशुको पहले दो तीन सप्ताह अधिकांश समय बायें करवटकी अपेक्षा दाहने करवट सुलाना चाहिये। ऐसा न होनेसे धनुष्टङ्कारादि रोग हो सकते हैं।

शिशुकी देह बढ़नेके लिये शिशुको नींदकी आवश्यकता होती है, इसीलिये जन्मके बाद कुछ दिनोंतक शिशु सोता है। इस अवस्थामें शिशु जब सोये, तब उसके पैरोंको वस्त्रसे ढँक देना चाहिये। खालिस सरसोंका तेल मल शिशुको धूपमें सुला रखना अच्छा है। फिर भी : न या तेज धूपसे बच्चेका शरीर बचाना चाहिये। पहले कुछ गर्म जलमें। इसके बाद शिशुके सबल हो जानेपर उसको ठण्डे जलमें नहलानेका अभ्यास करना चाहिये। ऐसा होनेसे सर्दी-खाँसीकी उतनी आशङ्का नहीं रहती। हमारे यहाँका दस्तूर है, कि स्नानके समय पहले सिरपर कुछ जल दे पीछे शरीर भिंगाया जाता है।

यह दस्तूर बहुत ही अच्छा है। डाक्टर फिशरने इसका अनुमोदन किया है।

जबतक शिशु दूध पिये, तबतक माताको रात जागना, समय बिताकर नहाना-खाना, ज्यादा खट्टा-मीठा खाना, अधिक क्रोध, शोक प्रभृति करना न चाहिये; क्योंकि ऐसा होनेसे शिशुको तरह-तरहके रोग होते हैं। शिशुको रोग होनेसे माताको खूब सावधान रहना चाहिये; नहीं तो शिशुका रोग बढ़ जा सकता है।

माताको कोई बीमारी होनेसे उनके स्तनमें यथेष्ट दूध न रहनेपर घरमें जिसके दूध होता हो, उसका दूध शिशुको पिलाना चाहिये। इसके अभावसे गदहे या गायका दूध पिलाना चाहिये। गायका दूध खूब गाढ़ा होनेपर उसके साथ समान भाग जल और दूध-शर्करा (sugar of milk) मिला गर्मकर शिशुको पिलाना चाहिये। ज्यादा दूध पिलाना या अधिक रात्रिको पिलाना या सोतेमें या सोतेसे उठाकर दूध पिलाना अहितकर है। और जबतक शिशुको भूख न लगे; तबतक कुछ भी देना न चाहिये। साधारणतः शिशुका पेट नर्म देख उसकी भूखका हाल समझना चाहिये। एक वर्षतक शिशुको दूध पिलाया जा सकता है।

शिशु अक्सर आठ दस मासमें हाथ-पैरसे और एक वर्षकी उम्रमें पैरोंसे चलने लगता है। किन्तु वह यदि पन्द्रह मासकी उम्रमें भी चल न सके तो उसे उपयुक्त आहार और

जिससे यह फूँक उसकी छातीसे बाहर निकल जाये। मिनटमें १४।१५ बार इसतरह वायु प्रवेश कराने निकालनेसे १० मिनटके अन्दर शिशुकी निश्वास-प्रश्वास क्रि आरम्भ हो सकती है। यदि दस मिनटमें कोई उपकार हो, तो शिशुके मुख या छातीपर एकबार गर्म जल; इसके बाद ठण्डे जलके छींटे बारंबार देना चाहिये। साथ-साथ सूखे हाथसे शिशुके हाथ-पैर और पीठको मलना चाहिये। शिशुके मुखपर हवा लगनेमें किसी तरहकी रुकावट न हो।

शिशुकी नाभिका रोग।—नाड़ी काटनेके बाद पांच दिनमें नाभि सूख जुदा हो जाती है। यदि नाभि न सूखे और उससे रस या पीब निकले या जख्म हो जाये, तो नाभिको गर्म जलसे धो कैलेण्डुला ० दस बिन्दु एक छटांक सरसोंके तेलमें मिला उसकी पट्टी नाभिपर बांधना और सिलिका ६ सेवन कराना चाहिये। पीबसे दुर्गन्ध आनेपर सिलिकाके बदले आरसेनिक ६ देना चाहिये। यदि प्रदाह हो यानी नाभिदेश लाल हो, फूल उठे और व्यथायुक्त हो, तो बेलेडोना ६ या आरसेनिक ६ देना चाहिये।

नाड़ी अच्छी तरह न बांधने या बन्धन टूट जानेसे यदि रक्तस्राव हो, तो हैमामेलिस ० कपड़ेपर टपका उससे रक्त निकलनेके स्थानको सामान्य रूपसे दबा रखनेपर रक्तस्राव बन्द हो सकता है। बारंबार रक्तस्राव होनेपर बेलेडोना ६ या आरसेनिक ६ सेवन कराना चाहिये।

सवारीमें चलते समय वमन।—गाड़ी, पाल्की, रेल, जहाज आदिमें सवार होनेपर किसी-किसीको कटकर वमन होने लगता है। ककिउलस इसकी उत्कृष्ट औषधि है।

डङ्क मारना।—बरें, हड्डा, बिच्छू प्रभृतिके डङ्क मारनेसे दंशस्थानसे पहले छुरी द्वारा कुरेद डङ्क बाहर निकालना इसके बाद स्पिरिट कैम्फर या सरसोंका तेल या महीका तेल या तम्बाकू वा प्याज काट लगा देना चाहिये। ज्यादा फूलनेपर एपिस ६ सेवन कराना चाहिये। कनखजूरेके काटनेसे गूलरके पत्ते [illegible] चूना लगा देना चाहिये। मकड़ीके पेशाब कर देनेसे घी और नमक मिला लगानेसे उपकार हो सकता है। चूहेके काटनेमें लेडाम ६ उपकारी होता है। कुत्ते, स्यार प्रभृतिके काटनेसे लोहेकी कोई चीज गर्म कर क्षतस्थानको जला देना और एमोनियम ३ सेवन कराना चाहिये। एक सप्ताहतक दिनमें तीन बार थोड़ा-थोड़ा कारबुड खिलाना चाहिये। बिच्छूके डङ्क मारनेसे सूरन या घरौंके हल्का [illegible] लगानेसे उपकार होता है।

[illegible] जलमें डूबने, गलेमें फांसी लगाने, [illegible] शरीरमें घुसने और [illegible] होनेसे [illegible] एक [illegible] है

[illegible]

हेमानेलिस।—रक्त बहानेवाले नसोंपर इसकी प्रधान क्रिया होती है। शरीरके किसी नसके (Passive) रक्तस्राव हेमानेलिस प्रयोगका प्रधान लक्षण है। रक्तस्रावी धर्म; आभ्यन्तरिक यन्त्र; जैसे.—फेफड़ा, परिपाक यन्त्र, मूत्रयन्त्र, मूत्रस्थली, जरायु, मलद्वार प्रभृतिसे गैरिक रक्तस्राव; जीवनेन्द्रियके नसोंका फूलना; जरायुसे प्रचुरपरिमित काला रक्तस्राव। यह औषधि भीतर और बाहर प्रयुक्त होती है।

विषन गुण।

(Antidotes)

लिखा हाइड्रेटिस और लिमिलिफिडगा और कोई औषधि अतिरिक्त मात्रामें सेवन करनेसे अनिष्टकी आशङ्का हो, तो २।३ बिन्दु स्पिरिट केम्फर सेवन कराना चाहिये

कुछ कठिन शब्दोंके अर्थ

आहेर — [illegible]

[illegible]

तन्तुजायु।

(टिसू रेमिडीज या बाय-केमिक औषधावली।)

बाय केमिक मतके उद्भावक डाक्टर सुसलरका कहना है, कि रक्तका शुक्लांश या अण्डलाल (Albumen) मेद, शर्करा, जल, अम्ल, क्षारादि पदार्थ (Inorganic Salts) जीव-तन्तु और रक्तके प्रधान उपादान हैं। कैलकेरिया फ्लोरिका, कैलकेरिया फास्फोरिका, कैलकेरिया सलफ्युरिका, फेरम फास्फोरिकम, केली मिउरियाटिकम, केली फास्फोरिकम, केली सलफ्युरिकम, मैग्नेशिया फास्फोरिका, नेट्राम मिउरियेटिकम, नेट्राम फास्फोरिकम, नेट्राम सलफ्युरिकम, सिलिका ; इन्हीं बारहो धातु द्वारा जीव-देहके समस्त तन्तु (Tissue) और अणुकोष (Cells) गठित हैं। उनका कहना है, कि शरीरके इन्हीं सब धातुमें किसी धातुका अभाव होनेपर तन्तु बिगड़ता और रोग उत्पन्न होता है फिर ; इन्हीं सब तन्तुसाद्य (Tissue R[illegible]) द्वारा यह अभाव पूरण करनेसे रोग आराम होता है [illegible] अनुसार हम व्यवहार विचार करनेका प्र[illegible] नहीं [illegible] फिर भी, होमियोपैथिक मतमें प्राय [illegible] इन [illegible] (Pr[illegible]) और इस [illegible] इनका बारबार मुख्य उत्पन्न होनेके कारण इनके प्रधान

गन्ध ; अधिक परिमाणसे मोठी चीज खानेसे बच्चोंका लैकटिक् एसिड बढ़ जानेसे रोग; मेद या रसास्रावी ग्रंथियोंका फूलना; प्रमेह रोग; छातीकी ज्वाला; मुखसे जल आना; पाकाशयमें अम्ल; अम्लजनित अजीर्णता; पीबकी उत्पत्ति; मृगीरोग; विसर्परोग; टीका देनेके कुफल; सिर जकड़ जाना; सिर घूमना; साँससे अम्ल गन्ध; आँखका प्रदाह; एक कानका गर्म और लाल हो जाना और उसमें खुजली होना; नाकमें खुजली; नाकसे सदा दुर्गन्ध आना; मुख लाल होकर फूल आना, खट्टा स्वाद; जिह्वाके मूलपर पीले दाग; पाकाशयमें घाव; पाकाशयमें वायु जमा होना; क्रिमिकी वजह पेटमें दर्द या अस्तदृष्टि; कोष्ठकाठिन्य; मलत्यागके समय काँखना; मलका रङ्ग सफेद या हरा; बहुमूत्र रोग; अम्लरोगकी वजह मूत्रधारण करनेमें असमर्थता, स्नेतप्रदर; सूखी खाँसी; हृत्पिण्डका कम्पन, दुर्बलताकी वजह पदस्खलन; घुटने, जाँघ आदि सन्धिस्थानमें वेदना; खुजलीकी वजह अनिद्रा; एकक्रिया—मधुर वर्णजैसा स्रावका वर्ण; शिशुका शरीर शीर्ण होना।

वज्रपातके समय, पर्वोदार या मोठी चीज खानेसे रोगकी वृद्धि।

१। नैट्राम-सलफिउरिकाम १२x विचूर्ण, ३०—२०० ।—जिसके रोगी और जिसके शरीरमें जल अधिक है, उसके लिये यह महौषधि है। विषमज्वर; पित्तयुक्त

निद्रा; दमेसे रातको निद्रा भङ्ग होना; फोड़ा; दाद (२००)।[०]

वर्षाकी वायु, पार्द्र भूमि या जलके समीप वास, जलज उद्भिद आदि खाने या बायें करवट सोनेसे रोगकी वृद्धि। सूखी गर्म्म जगहमें रहनेसे रोगकी कमी।

१०। फेरम फस्फरिकम १२—२००।—आँख, कान, दाँत, पाकाशय, आदि किसी भी स्थानके प्रदाहकी पहली अवस्थामें। वायुनालीभुजप्रदाह (ब्राङ्काइटिस); फेफड़ेका प्रदाह (निउमोनिया); फेफड़ेके वेष्टनका प्रदाह (प्लुरेसि); प्रदाहिक ज्वरसमूह; शिरःपीड़ा; शिरोघूर्णन; वात; कटिवात; विसर्परोग, गलेका घाव; खांसी; सर्दी; मार्गिक घोषा प्रभृति रोगको पहली अवस्थामें। उज्ज्वल लोहित शोणितस्राव। धर्म्म, आमाशय, नाकसे रक्त निकलना; स्फोटक, पूतव्रण, शरीरके स्थान स्थानमें सूजन और प्रसन; मूत्रधारणमें असमर्थता, शिर पाकाकी वजह माथा टपकना; शीत लगनेसे वेदनायुक्त उदरामय, अजीर्णता, कै।

फेराम फस १२ का जलपट्टी या मरहम धर्म्मरोगका बाहरी प्रयोग है। हिलने या उत्तापसे उल्लिखित रोगोंकी वृद्धि और शान्तमें ठण्डा प्रलेपर फेराम फस फलप्रद है।

* [illegible] दादकी [illegible]

प्रभृति जिन सब पदार्थसे तरल पीब निकलता है; झटपुट शिशुके माथेका पसीना; पेट बड़ा, किन्तु हाथ-पैर छोटे; कब्ज; मलके कुछ अंशका निकलकर फिर घुस जाना; शरीरकी जीवनी शक्ति और उत्तापका अभाव; सहज ही सर्दी लगना; पुरानी शिरःपीड़ा; पैर या बगलमें अस्वास्थ्यकर दुर्गन्धमय पसीना; अस्थिक्षत, घुटनेकी पीड़ा प्रभृति अस्थि-व्याधि; शिरःघर्म (विशेषतः माथे और गर्दनमें); पुराना हलका ज्वर; यक्ष्मा रोग; पुराना वात या सन्धिवात; मानसिक शक्तिकी अपेक्षा शारीरिक शक्तिकी अधिकताकी वजह शीघ्र क्लान्त हो जाना; स्वयशक्तिका प्राबल्य; अन्य-मनस्क रहना; बातोंके बदले चुप रहनेकी इच्छा; भीतर खूब शोथ, मांस या गर्भ स्रावसे अरुचि; बाल गिरना; पैरका पसीना बन्द * होनेसे आंखमें फूली; पक्षाघात; संन्यास रोग। बधिरता; नाकका किनारा लाल या क्षतयुक्त होना; नाककी अस्थिमें फोड़ा या जख्म और उससे पीब निकलना; जिह्वा या होंठमें जख्म, श्वेत प्रदर; स्नायुशूल; नाककी श्लैष्मिक झिल्लीकी स्थूलताकी वजह नाक भर जाना; सङ्गतराशों या चक्की पीसनेवालोंका दमा, पथरी रोग, आंखसे पीब आना;

---

* पसीना दूर करनेके लिये बहुतेरे लोग फूट पावडर (Foot Powder) व्यवहार किया करते हैं। इससे पसीना शीघ्र ही बन्द जाता है सही; किन्तु ऊपर लिखी कठिन पीड़ाओंकी सूचना होती है। सिलिका प्रयोग करनेसे पसीना और ऊपर लिखी पीड़ाओंसे मुक्ति होती है

घुटनेमें शोथ ; मृगीरोग (अमावस्या और पूर्णिमाको वृद्धि); दद्रुवत् चर्म ; दुर्गन्धयुक्त उदरामय ; भगन्दर, मूत्राम्ल या युरिक एसिड ; पुराना प्रमेह रोग, स्तन या स्तनकी घुटनियोंमें अबुंद ; पुराना मूत्रनालीप्रदाह ; अंडकोषकी पीठका फोड़ा ; हृत्पिण्डका प्रबल कम्पन, पुराना रोग, स्नायुकी उत्तेजनाकी वजहसे अनिद्रा। 'साइलीसिया' देखना चाहिये।

रात्रिको, पूर्णिमा-अमावस्याको और ठण्डी हवामें रोगकी वृद्धि। कपड़ेमें या गर्म ओढ़नेमें, सिरमें गर्म कपड़ा लपेटने या बहुत गर्म जलमें स्नान करनेसे रोग कम होता।

आयना, डालकेमारा, गुयाइयाक, हिपर-सल्फ, साईलिस, फास्फरिक एसिड, पलसेटिला, मार्श, सलफर, आरनिका, बैलेडोना, कैमोमिला, कैलकेरिया, लाइकोपडियम।

पारेके सेवनसे हड्डीके अन्दर वेदना होने या अस्थिचत प्रभृति लक्षणोंमें—अराम, फास्फरिक एसिड, एमाफि. कैलकेरिया, डालकेमारा, साईलिस, नाइट्रिक एसिड, मिजिरा, सलफर।

शरीरको ग्रन्थि या छातीके विकारमें—अराम कारबोवेज, डालकामेरा, म्याकाइटिस, नाइट्रिक एसिड, मिजिरा।

पारेके सेवनके क्षतमें—अराम, बेलेडोना, कारबोवेज, म्याकाइटिस, हिपर सलफर, साईलिस, नाइट्रिक एसिड, मामा, मिजिरा, सलफर, थुजा।

पारेके सेवनके गोयादि लक्षणोंमें—आयना, डालकामरा, बेनिजोराम, सलफर। इन सब औषधियोंको १—२० मात्रामें व्यवहार करना चाहिये।

२। कुइनाइन।

पारेके तरह कुइनाइनके भी अपव्यवहारका विष आसानीसे शरीरसे नहीं निकलता।

तब पहिले इपिकाक ; बादको आरसेनिक, कारबोवेज, लाकेसिस, पलसेटिला, आरनिका, सिना, वेराट्राम और अन्तमें केलकेरिया, मारक्युरियस, वेलेडोना, सलफर देना चाहिये।

इन सब औषधियोंको ६—३० शक्तिमें देना उचित है।

३। सङ्खिया-विष (*Arsenic*)

सङ्खिया-विषसे विषाक्त होनेपर पहले Stomach pump द्वारा या रेंडीके तेल आदि वमनकारक औषधि द्वारा पाकाशय शून्य करना चाहिये। इसके बाद अण्डेकी सफेदी या ब्राण्डी या और कोई उत्तेजक पदार्थ सेवन कराना चाहिये। भयानक लक्षण दिखाई देनेपर इपिकाक ३, बादको चायना १x या नक्सवमिका १x देना चाहिये।

आरसेनिक औषधिके अपव्यवहारमें इपिकाक ३, चायना ३, नक्सवमिका १x —३, वेराट्राम ६।

४। अफीम, ओपियम या लडेनम।

अधिक मात्रामें अफीम सेवन कर लेनेपर ष्टमक पम्प या वमनकारक औषधि दे पेट साफ करना चाहिये। इसके बाद [illegible] देना चाहिये [illegible] इसमें [illegible] [illegible] देना चाहिये। [illegible] देना [illegible]

नित्य अफीम पीनेवाले अफीम छोड़नेपर यदि शारीरिक ग्लानिसे कष्ट उठायें, तो उन्हें एवेना ϕ पाँच बिन्दु, दिनमें तीन बार देना चाहिये। यदि इससे उपकार न हो, तो केमोमिला ६, कफिया ६—३० या कैनाबिस इण्डिका १२—३० देना चाहिये।

५। शराब (एलकोहल)।

नित्य मद्यपायीके मद्यत्यागके बाद मद्यपानकी आकांक्षा बलवती होनेपर उसे दबानेके लिये चायना ϕ या एवेना ϕ या क्वाकास्यास ϕ दिनमें तीन बार प्रति मात्रामें पाँच बिन्दु या स्याह कहवा देना चाहिये। इसके बाद नक्सवमिका १x—३, सलफर ३। किशमिश, मुनक्का, नारङ्गी आदि खानेसे उपकार होता है।

६। मधु।

मधु या शहदके अपव्यवहारमें स्पिरिट कैम्फर या कपूर सूंघना बादको खूब गर्म चाय या स्याह कहवा पीना चाहिये।

७। तम्बाकू। (*Tobacco.*)

ज्यादा तम्बाकू व्यवहार करनेसे आँत, स्नायु पाकाशय,

न होनेके लक्षणमें वायना ३। अधिक चाय पीनेसे पेट फूलने और स्नायविक दुर्व्वलतामें युजा ६। अधिक चाय पीनेसे हर तरहके रोग मिटानेके लिये युजा ३०—२०० सप्ताहमें सिर्फ एकबार। सेलिना ६, कफिया ६, लाकेसिस ६, वेरा-ट्राम ६ समय-समयपर आवश्यक होते हैं।

१०। बरफ प्रभृति।

इसके अपव्यवहारसे परिपाक-यन्त्रमें व्याघात उपस्थित होता है। पेट फूल आता और वमन होता है। बरफ या बरफके जलके रोगमें कारबोवेज ६। आइसक्रीमकी अवस्थामें आर्स ६।

और कई औषधियोंके अपव्यवहारमें ;—

क। ब्रोमाइड आफ पोटासके अपव्यवहारमें—इेशन ०

ख। केम्फरके अपव्यवहारमें—कैन्थ ६, कफिया ३, ओपियम ३।

ग। क्लोरालके अपव्यवहारमें—केमाविस ०।

घ। क्लोरेट आफ पोटासके अपव्यवहारमें—हाइ-ड्रास्टिस ०।

ङ। कार्डलिवर आयलके अपव्यवहारमें—हिपर ६।

च। अफीम-चटनीके अपव्यवहारमें—नक्सवमिका १x-३।

छ। डिजिटेलिसके अपव्यवहारमें—नाइट्रिक एसिड ६।

प। उद्भिद् औषधि मात्रके अपव्यवहारमें केम्फर φ, नक्स-वमिका १x—३।

फ। वेराट्रामके अपव्यवहारमें—केम्फर φ, कफिया ३।

ब। चैतन्य नाशक (anæsthetic) धूम निश्वासके साथ देहमें जानेपर—एसेटिक एसिड ३, हिपर ६, फस ३, एमिल नाइ φ सूंघना चाहिये।

भ। गैस, लकड़ीका कोयला आदिके धुएं के कुफलमें एमन कार्ब ३, आरनिका ३x, वोविष्टा ३।

म। मादक (Narcotic) औषधि-सेवनसे वेदना-रहित हो सोनेपर—एसेटिक एसिड ३, एपोमर्फिया ३, केनाविस इण्डिका φ, केमोमिला ३।

बेरी-बेरी।

सिंहल देशकी भाषामें 'बेरी बेरी' शब्दका अर्थ 'अत्यन्त दुर्ब्बलता' है। यह एक तरहका वायु-प्रदाह है। इस रोगकी पहली अवस्थामें पैरमें तनाव होता और गुल्फ फूल उठता है। इसके बाद दोनो पैर फूलते हैं और उनमें ज्वाला होती है। यहांतक, कि बहुतेरे लोगोंके समस्त अङ्ग-प्रत्यङ्ग फूल उठते हैं और पक्षाघातकी तरह सारा शरीर निकम्मा हो जाता है। चमड़ा सूख जाता; कब्ज या उदरामय होता; पेशाब लाल हो जाता और अन्तमें हृत्पिण्ड आक्रान्त होता है। उस समय सांस लेनेमें कष्ट होता और छाती धड़कती है। इस रोगसे सिरमें कोई खराबी नहीं होती। पेशाब-पसीना बन्द, रक्तहीनता, तनाव और सर्व्वाङ्गका फूल आना भयङ्कर लक्षण है। फिर, बहुत पसीना, पेशाब, तरल मल, सूजनका निम्नाङ्गको अतिक्रम न करना और मूत्रयन्त्र, फेफड़े और हृत्पिण्डका आक्रान्त न होना शुभ लक्षण है। किसी-किसीका कहना है कि छंटा हुआ साफ चावल, कनका आटा, मिल-वट सरसोंके तेल आदिके व्यवहारसे यह रोग पैदा होता है। कुछ बड़े डाक्टरोंके मतसे एक

तरहका जीवाणु ही यह रोग उत्पन्न करता है। मुख्य कारण चाहे जो हो; गत सन् १८०८।१० ई० में बङ्गदेशमें जब इस रोगका बड़ा जोर हुआ, तब जलमें भीगना और सीत लगना ही इस रोगका उत्तेजक कारण सिद्ध हुआ। इसीलिये वर्षाके अन्तमें इस रोगका प्रकोप अधिक हुआ था।

चिकित्सा।—अवशता, वेदना, शोथ, रक्तहीनता प्रभृति लक्षणोंमें आर्स ३, ६। (दो दिन आरसेनिक सेवनसे उपकार न होनेपर रसटक्स ३x—२००); पक्षाघात; शरीरका शीर्ण होना, अङ्ग प्रत्यङ्गका वातसे वजह कठोर हो जाना आदि लक्षणोंमें फम् ३x—३०। पक्षाघात निम्नाङ्गमें होनेपर जेलस् ३ देना विधेय है। ब्रायोनिया ३, सिपिया ६, सेयाइरस सेटाइना ३, सिकेली ६, एपिस ३; (हृत्पिण्डकी अवसन्नता दुर्बलतामें) क्राटेगस मूल अरिष्ट या कैक्टस ०, त्रिनसेङ्ग ३x। लेटुास सालफ, प्राम्बास, फासफरस, लाइकोपोडियम प्रभृति भी समय-समयपर आवश्यक हो सकते हैं। यह औषधियाँ ३—३० शक्तिमें फलदायक हैं।

सायकी चिकित्सा—रोगीको गर्म और हवादार कोठरीमें रखना चाहिये। हरिद्वार आदि पहाड़ी और ऊँचे स्थानमें रोगीको ले जाना अच्छा है। पसीना निकलनेके लिये रोगीको समय समयपर गर्म जलमें नहलाना चाहिये। गर्म वस्त्र द्वारा रोगीको देह सदा ढँक रखना चाहिये। साबू,

रासायनिक पदार्थ विद्यमान रहता है। इससे मनुष्यको देहको पुष्टि साधित होती है। इसलिये इस आवरणको कभी फेंकना न चाहिये। इसका अर्थ यह है, कि कनीदार चावल और मोटा आटा हमारे लिये हितकर है।